साहित्य अमृत

मासिक

चैत्र-वैशाख, संवत्-२०८० ❖ अप्रैल २०२३

वर्ष-२८ ❖ अंक-९ ❖ पृष्ठ ८४ | यू.जी.सी.-केयर लिस्ट में उल्लिखित | ISSN 2455-1171

संस्थापक संपादक

पं. विद्यानिवास मिश्र

निवर्तमान संपादक

डॉ. लक्ष्मीमल्ल सिंघवी

श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी

संस्थापक संपादक (प्रबंध)

श्री श्यामसुंदर

प्रबंध संपादक

पीयूष कुमार

संपादक

लक्ष्मी शंकर वाजपेयी

संयुक्त संपादक

डॉ. हेमंत कुकरेती

उप संपादक

उर्वशी अग्रवाल 'उर्वी'

कार्यालय

४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-०२

फोन : ०११-२३२८९७७७

०८४४८६१२२६९

इ-मेल : sahityaamrit@gmail.com

शुल्क

एक अंक—₹ ३०

वार्षिक (व्यक्तियों के लिए)—₹ ३००

वार्षिक (संस्थाओं/पुस्तकालयों के लिए)—₹ ४००

विदेश में

एक अंक—चार यू.एस. डॉलर (US$4)

वार्षिक—पैंतालीस यू.एस. डॉलर (US$45)

साहित्य अमृत के बैंक खाते का विवरण

बैंक ऑफ इंडिया

खाता सं. : **600120110001052**

IFSC : **BKID0006001**

प्रकाशक, मुद्रक तथा स्वत्वाधिकारी पीयूष कुमार द्वारा ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२ से प्रकाशित एवं न्यू प्रिंट इंडिया प्रा.लि., ८/४-बी, साहिबाबाद इंडस्ट्रियल एरिया, साइट-IV, गाजियाबाद-२०१०१० द्वारा मुद्रित।

✍ **संपादकीय**

कविता तो कविता है… ४

✍ **प्रतिस्मृति**

वाणी की शुचिता/ *गुरुदत्त* ६

✍ **कहानी**

आनंद/ *बी.एल. गौड़* ८

लॉकडाउन जारी है/ *रश्मि कुमार* २४

कुली नं. १२२/ *उमेश प्रताप वत्स* ३२

कद/ *घनश्याम आसूदाणी* ३६

वंचित/ *नंदकिशोर कौशिक* ४२

अस्पताल/ *वंदना मुकेश* ५६

✍ **लघुकथा**

अपराध बोध/ *शैफालिका सिन्हा* १३

बैना/ *राजेश पाठक* ३४

सक्षम/ *शैफालिका सिन्हा* ६१

पहुँच से परे/ *कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'* ६७

स्वाद/ *कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'* ७३

✍ **आलेख**

खालसा पंथ के प्रवर्तक श्रीगुरु गोविंदसिंहजी महाराज/ *गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'* १२

ढोल गँवार सूद्र पसु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी/ *प्रमोद कुमार अग्रवाल* ३०

जननी, हम नहिं जिऊँ बिन राम/ *मयंक मुरारी* ४६

पाँच प्रण और नए भारत का निर्माण/ *बिपिन कुमार ठाकुर* ६२

✍ **कविता**

गजलें/ *बालस्वरूप राही* २३

गजलें/ *नरेश शांडिल्य* २९

गजलें/ *पॉपुलर मेरठी* ३१

गजल/गीत/ *सुरेश अवस्थी* ३५

दोस्त हैं, पर मित्र नहीं/ *कौशल मिश्र* ४४

रतजगा होता रहा/ *विनय मिश्र* ४५

रिश्तों की बुनियाद/ *योगेंद्र वर्मा 'व्योम'* ५५

गीली रेत सी/ *राजीव कुमार 'त्रिगर्ति'* ६५

अपने-अपने स्वार्थ लड़ रहे/ *बसंता* ७१

जिंदगी/ *रुक्मणी संगल* ७८

✍ **रिपोर्ट**

अनूठा और सार्थक रहा १२वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन/ *अमित कुमार विश्वास* १४

✍ **स्मरण**

अविस्मरणीय वैदिकजी/ *राहुल देव* ३८

✍ **राम झरोखे बैठ के**

पैदाइशी रौंदू कथा/ *गोपाल चतुर्वेदी* ४०

✍ **साहित्य का भारतीय परिपार्श्व**

कुत्ते से सावधान/ *भूपेंद्र कुमार दास* ५२

✍ **यात्रा-वृत्तांत**

मेरी बल्गारिया, ग्रीस यात्रा/ *स्नेह सुधा नवल* ५८

✍ **साहित्य का विश्व परिपार्श्व**

उड़ जाता है पक्षी/ *अली अब्दुलरेजाई* ६०

✍ **व्यंग्य**

अप्राप्त की अधीर अभिलाषा/ *अयोध्या प्रसाद* ६६

✍ **संस्मरण**

मेरे पापा मेरी यादों में/ *ऊषा निगम* ६८

✍ **लोक-साहित्य**

छत्तीसगढ़ में आदिवासी जीवन/ *मृणालिका ओझा* ७४

✍ **बाल-संसार**

आदित्य की सफलता/ *रेनू सैनी* ७२

✍ वर्ग-पहेली ७९

✍ पाठकों की प्रतिक्रियाएँ ८०

✍ साहित्यिक गतिविधियाँ ८१

साहित्य अमृत में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार एवं दृष्टिकोण संबंधित लेखक के हैं। संपादक अथवा प्रकाशक का उनसे सहमत होना आवश्यक नहीं है।

संपादकीय

कविता तो कविता है…

एक भक्ति गीत है, जिसे करोड़ों लोगों ने प्रतिदिन गाया है, करोड़ों लोग प्रतिदिन गाते हैं और करोड़ों लोग गाते रहेंगे…'ॐ जय जगदीश हरे…'। यह भक्तिगीत एक स्वाधीनता सेनानी श्रद्धाराम फिल्लौरीजी का लिखा हुआ है। भक्तिगीत के अंत में 'श्रद्धा भक्ति बढ़ाओ…' में एक संकेत मात्र है। अब यदि हिंदी कविता का इतिहास पढ़ेंगे तो उसमें श्रद्धाराम फिल्लौरी का नाम नहीं मिलेगा।

एक गीत है, जो आज भी हम सबको बलिदानियों के प्रति श्रद्धा से भर देता है, देशप्रेम में डुबो देता है। स्वाधीनता दिवस, गणतंत्र दिवस या अन्य कोई अवसर हो, यह गीत गूँजने लगता है। इस गीत की 'रॉयल्टी' से हजारों बलिदानी सैनिकों की विधवाओं को सम्मानपूर्वक जीवन जीने का अवसर मिला है। आप समझ ही गए होंगे कि हम 'ऐ मेरे वतन के लोगो, जरा आँख में भर लो पानी, जो शहीद हुए हैं उनकी, जरा याद करो कुर्बानी…' की बात कर रहे हैं। यह गीत कवि प्रदीप द्वारा रचा गया है। कविता के इतिहास में कवि प्रदीप का नाम आपको नहीं मिलेगा।

बंकिमचंद्र चटर्जी जब 'आनंदमठ' जैसा ऐतिहासिक उपन्यास लिख रहे थे तो उन्हें विषयवस्तु के अनुसार एक देशभक्ति गीत की आवश्यकता थी, तो उन्होंने 'वंदे मातरम्' जैसा अमर गीत रच डाला, जो हमारे देश का 'राष्ट्रीय गीत' है और राष्ट्रगान 'जन गण मन' के समकक्ष समादृत है; जिस गीत को गाकर युवकों ने आजादी के लिए हँसते-हँसते फाँसी के फंदे को चूम लिया।

कौन, कब एक ऐसी कविता रच देगा, जो कालजयी हो जाएगी, कोई नहीं जानता, भले ही वह तत्कालीन कविता की मुख्यधारा से जुड़ा हो या न जुड़ा हो।

एक और रोचक उदाहरण देखते हैं। उर्दू में लिखी गई हजारों गजलों के लाखों शेरों में एक मशहूर शेर है—

वो दुनिया थी जहाँ तुम बंद करते थे जुबां मेरी
ये महशर है यहाँ सुननी पड़ेगी दास्तां मेरी

इस शेर का संबंध इस्लामी माइथोलॉजी से है। दिलचस्प बात यह है कि फारसी और उर्दू में हजारों मुसलिम शायर हुए, किंतु यह शेर जवाहर लाल कौल नामक एक कश्मीरी पंडित का है। इस तरह के सैकड़ों उदाहरण मिल जाएँगे, जहाँ कविता अपना अनूठा रूप लेकर प्रकट होती है। कविता की मुख्यधारा कैसे तय होती है, कौन तय करता है, यह एक अलग विषय है। गोपालदास नीरज ने सैकड़ों उत्कृष्ट गीत लिखे, किंतु वे साहित्य की मुख्यधारा से बाहर हैं, क्योंकि उन्होंने कवि-सम्मेलनों में भागीदारी की, फिल्मों के लिए गीत लिखे। इसी तरह शैलेंद्र जैसे गीतकार भी साहित्य की मुख्यधारा से बाहर हैं, जिनकी पंक्तियाँ हजारों आंदोलनों का सहारा बनी हैं—

'हर जोर जुल्म की टक्कर पे
संघर्ष हमारा नारा है'

अब यहीं उर्दू की बात करें तो प्रख्यात कवि शहरयार ज्ञानपीठ से सम्मानित होते हैं, जबकि वे मुशायरों में जाते हैं और उन्होंने सिनेमा के लिए भी गीत लिखे। साहिर लुधियानवी, मजरूह सुल्तानपुरी से लेकर निदा फाजली तक अनेक फिल्म गीतकार उर्दू साहित्य में समादृत हैं।

किसी भी कालखंड में अनेक रचनाकार कविताएँ रचते हैं और उनमें से कुछ नाम साहित्य-जगत् में अंकित हो जाते हैं। इसका यह अर्थ नहीं कि बाकी सारे रचनाकारों की सारी रचनाएँ कमजोर थीं। वर्तमान परिदृश्य की बात करें तो कुछ रचनाकार हैं, जिनकी रचनाएँ साहित्यिक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होती रहती हैं। एक धारा लोकप्रिय कविता की है, जो कवि-सम्मेलनों से जुड़ती है। एक तीसरी धारा भी है, जिसमें रचनाकार खामोशी से कविताएँ रचते रहते हैं। ऐसे रचनाकारों में वैज्ञानिक, डॉक्टर, फिल्म अभिनेता, उद्योगपति, रंगकर्मी या अन्य व्यवसायों से जुड़े लोग हैं। प्रख्यात नृत्यांगना शोभना नारायण हिंदी, अंग्रेजी, भोजपुरी में कविताएँ करती हैं। नलिनी-कमलिनी की नलिनी भी कविताएँ लिखती हैं। सीमा सुरक्षा बल के एक वरिष्ठ अधिकारी ने अपने अनुभवों के आधार पर अत्यंत मार्मिक कविताएँ लिखीं। उनके कविता संग्रह के १५ से अधिक भाषाओं में अनुवाद हुए, जबकि न तो वे कवि सम्मेलन में जाते थे, न ही छपने के प्रति बहुत उत्सुक रहे। कविताएँ बिलकुल अलग रंग की थीं, मानवीय सरोकारों से जुड़ी थीं तो कविताओं ने अपना जादू दिखाया। तीसरी धारा के कवियों की परंपरा भी पुरानी है।

कम लोग जानते होंगे कि जयप्रकाश नारायण ने जेल के दौरान कविताएँ लिखीं। ए.पी.जे. अब्दुल कलाम ने तमिल में कविताएँ लिखीं। फिल्म संगीतकार नौशाद बहुत अच्छे शायर थे। अकसर किसी रचनाकार की एक विधा में प्रतिष्ठा के कारण उसका अन्य विधाओं में रचनाकर्म छुप जाता है। फणीश्वर नाथ रेणु ने कविताएँ लिखीं किंतु कम लोग इस बात से परिचित हैं। अकसर यह भी देखा जाता है कि ऐसे रचनाकारों के मन में अपनी कविताओं को लेकर एक संकोच का भाव होता है। कुछ ही रचनाकार कविता-संग्रह प्रकाशित करने का साहस जुटा पाते हैं। वे प्राय: भूमिका में 'मैं कवि नहीं हूँ' जैसी उद्घोषणा भी कर देते हैं। हालाँकि कुछ रचनाकारों की कविताएँ कविता के सभी मानदंडों पर खरी उतरती हैं और प्राय: उन तथाकथित मंचीय कवियों से कई गुना बेहतर होती हैं, जो कविता के नाम पर बिना संकोच सस्ती तुकबंदियाँ सुनाते हैं।

तीसरी धारा के कवियों की बात करते हुए एक प्रसंग याद आता है। एक व्यक्ति घनघोर निराशा में डूबकर आत्महत्या करने के इरादे से रेल की पटरी पर जाकर लेट गया। तभी उसे पास ही में कहीं बज रहे रेडियो से गाना सुनाई दिया—

गाड़ी का नाम
ना कर बदनाम
पटरी रखके सर को··
हिम्मत ना हार
कर इंतजार,
आ लौट जाएँ घर को··
ये रात जा रही है
वो सुबह आ रही है··

गाना सुनकर वह व्यक्ति उठा और कुछ पलों में गाड़ी गुजरकर चली गई। यह फिल्म गीतकार आनंद बक्शी का गीत था, जिसने एक जीवन बचा लिया था। बाद में उस व्यक्ति ने आनंद बक्शी को पत्र लिखकर आभार व्यक्त किया। किसी की प्राणरक्षा से अधिक महत्त्वपूर्ण क्या हो सकता है; भले ही फिल्मी गीत हो, लेकिन कविता ने अपना असर दिखा दिया था। यहाँ एक और बात रेखांकित करना भी प्रासंगिक होगा कि कोरोना महामारी के आने से पहले कविता प्रेमी गिने-चुने नामों से परिचित थे। पत्रिकाओं की अपनी सीमाएँ हैं, कवि-सम्मेलनों में भी कुछ ही कवि पहुँच पाते हैं, टी.वी. चैनलों पर साहित्यिक कार्यक्रम होते नहीं हैं। जब से ऑनलाइन कार्यक्रमों का सिलसिला शुरू हुआ, कविता की दुनिया में क्रांति हो गई। लॉकडाउन में लोगों के पास सुनने का समय भी था, इसलिए अनेक युवा रचनाकारों की प्रतिभा से वरिष्ठ रचनाकार भी परिचित हुए। सैकड़ों समर्थ कवियों की रचनाएँ सबके सामने आईं। सबसे सुखद पहलू रहा कवयित्रियों की सघन भागीदारी था। जहाँ कवि-सम्मेलनों में सिर्फ एक-दो कवयित्रियों को बुला लिया जाता था, वहीं ऑनलाइन कार्यक्रमों में उनकी संख्या कवियों से बड़ी दिखने लगी। कुछ पटल तो सिर्फ महिला रचनाकारों को ही समर्पित हो गए। फिर एक सुखद पहलू और भी जुड़ा; और वह था प्रवासी रचनाकारों की भागीदारी। ऑनलाइन कार्यक्रम नहीं होते तो अमरीका, ऑस्ट्रेलिया, जर्मनी आदि कई दर्जन देशों में हिंदी कविता रच रहे कवियों, कवयित्रियों की रचनाओं से लाखों भारतीय अपरिचित रह जाते। साथ ही प्रवासी रचनाओं को भारत के अनेक रचनाकारों को सुनने का अवसर मिला।

अब सबसे बड़ा सवाल यही है कि जो अच्छी और सच्ची कविता है, वह लोगों तक कैसे पहुँचे। जो तीसरी धारा के कवि हैं, यानी जिनकी पहचान तथा प्रतिष्ठा अन्य क्षेत्र में है, वे कविता लेखन में भी अधिक गंभीरता से सक्रिय हों, साथ ही अच्छी कविता के प्रचार-प्रसार में भागीदारी बनें। जो रचनाकार संकोचवश अपनी कविता को अपनी डायरी तक ही सीमित रखे हैं, वे अपनी कविताओं को समाज के सम्मुख लाएँ। वर्तमान समय में जिस प्रकार, संवेदनहीनता, क्रूरता, अमानवीयता बढ़ रही है, कविता की आवश्यकता एवं प्रासंगिकता अधिक बढ़ गई है। हिंदी कविता का एक समृद्ध संसार हिंदी को भी सुदृढ़ करेगा और बेहतर समाज भी बनाएगा।

एक छोटी सी पहल

भारत जैसे विशाल देश में कोई भी सरकार 'सब कुछ' नहीं कर सकती। सरकार योजनाएँ बना सकती है, आर्थिक सहयोग दे सकती है, किंतु इतनी विविधता भरे देश में, छोटे-से-छोटे दूरस्थ गाँव तक सुविधाएँ पहुँचाना कठिन हो जाता है। लोकतंत्र में तो जन-भागीदारी सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण हो जाती है। यदि हर नागरिक देश के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझे और कुछ पहल करे तो देश का कायाकल्प हो सकता है। कुछ जागरूक नागरिकों ने यह सफलतापूर्वक कर भी दिखाया है। हम कुछ उदाहरण देखते हैं—

सूरत (गुजरात) के एक सामान्य नागरिक स्वयं अभाव झेलकर बड़े होते हैं, इसलिए वे स्वयं की पूँजी से गरीब विद्यार्थियों के लिए हॉस्टल बनाते हैं। एक गाँव से शुरू हुआ यह सिलसिला आगे बढ़ता जाता है और समाज भी उनके संकल्प में भागीदार बन जाता है और सात वर्षों में एक सौ नौ हॉस्टल तैयार हो जाते हैं। हनुमानगढ़ (राजस्थान) का एक गाँव नशे का गढ़ कहलाता था। उस गाँव में एक बॉलीबाल कोच एक संकल्प लेकर आते हैं और युवाओं को खेलों से जोड़ते हैं। धीरे-धीरे सब कुछ बदलने लगता है। घर-घर में एक खिलाड़ी हो जाता है। ये खिलाड़ी प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर पदक लाकर गाँव को गौरवशाली गाँव बना देते हैं।

असम में ब्रह्मपुत्र नदी के छोटे से द्वीप माजुली को हरा-भरा बनाने के लिए जादव पेयांग पूरा जीवन खपा देते हैं और तेरह सौ उनसठ एकड़ जमीन को पेड़ों से आच्छादित कर देते हैं। उनकी कहानी अमरीका में पढ़ाई जाती है। टिहरी गढ़वाल के गाँव में अधिकांश परिवार पलायन कर जाते हैं। बचे हुए परिवारों में से दस परिवार एक संकल्प के साथ सामूहिक खेती करते हैं। सुखद परिणाम निकलते हैं। फिर उनकी सफलता से प्रेरित होकर पैंतालीस परिवार गाँव वापस लौट आते हैं। उजड़ा गाँव फिर से बस जाता है। चेंगलपट्टू (तमिलनाडु) की नन्ही सी बच्ची प्रसिद्धि को पेड़ लगाने की लगन लग जाती है। अपने विद्यालय से शुरू करके आसपास के आठ-दस विद्यालयों में वह हजारों पेड़ लगाने की पहल करती है और मात्र सात वर्ष की आयु में सम्मानित की जाती है। भुवनेश्वर में एक चित्रकार अस्पताल के बाहर एक गरीब महिला को रोते-बिलखते देखते हैं और उनके जीवन की दिशा बदल जाती है। वे निजी पूँजी से कैंसर मरीजों के लिए फंड स्थापित करते हैं। समाज के लोग भी साथ आ जाते हैं और अब आठ जिलों में ऐसे फंड, जिसे उन्होंने 'गुल्लक' नाम दिया है, स्थापित हो गए हैं।

ऐसे सैकड़ों उदाहरण आए दिन अखबारों में पढ़ने को मिलते हैं। ये वे लोग हैं, जिन्होंने स्वप्रेरणा से अपनी घर-गृहस्थी में जीवन खपा देने की बजाय, मानवीयता का परिचय देते हुए दूसरों की मदद के लिए पहल की और सैकड़ों-हजारों इनसानों का जीवन बदल दिया। सोचिए कि जो साधन-संपन्न हैं, धनी हैं, समर्थ हैं, वे भी इसी मानवीय संवेदना से समाजहित के कार्य में जुट जाएँ तो कितना परिवर्तन संभव है।

(लक्ष्मी शंकर वाजपेयी)

प्रतिस्मृति

वाणी की शुचिता

● गुरुदत्त

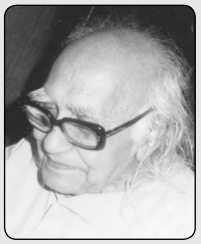

८ दिसंबर, १८९४ को लाहौर (अब पाकिस्तान) में जनमे गुरुदत्त हिंदी साहित्य के देदीप्यमान नक्षत्र रहे। इन्हें क्रांतिकारियों का गुरु कहा जाता था। जब ये नेशनल कॉलेज, लाहौर में हेडमास्टर थे, तो सरदार भगत सिंह, सुखदेव व राजगुरु इनके सबसे प्रिय शिष्य थे, जो बाद में आजादी की जंग में फाँसी का फंदा चूमकर अमर हो गए। उन्होंने दो सौ से अधिक उपन्यास लिखकर अपार ख्याति अर्जित की। संयुक्त राष्ट्र महासंघ के साहित्यिक संगठन 'यूनेस्को' द्वारा सन् १९७३ में जारी एक सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार गुरुदत्त १९६०-१९७० के दशकों में हिंदी साहित्य में सर्वाधिक पढ़े जानेवाले लेखक रहे। 'स्वाधीनता के पथ पर', 'स्वराज्य दान', 'दासता के नए रूप' (राजनीतिक उपन्यास), 'कुमारसंभव', 'अग्नि-परीक्षा', 'परित्राणाय साधूनाम्' (पौराणिक उपन्यास), 'पुष्यमित्र', 'विक्रमादित्य', 'पत्रलता', 'गंगा की धारा' (ऐतिहासिक उपन्यास) के साथ-साथ 'देश की हत्या' उनका सर्वाधिक चर्चित उपन्यास हैं। स्मृतिशेष : ८ अप्रैल, १९८९।

सरदार सोहन सिंह जपुजी साहब का पाठ कर रहा था—

असंख कूड़यार कूड़े फिराह।
असंख मलेच्छ मल भख खाह॥
असंख निंदक सिर करे भार।
नानक नीच कहे विचार॥
वारिया न जावे इक बार।
जो तुध भावे साईं भली कार।
तू सदा सलामत निरंकार॥

इस समय साथ के कमरे से जोर-जोर से रेडियो बजने का शब्द आने लगा। सोहन सिंह का ध्यान भंग हुआ। उसके मुख में था 'जो तुध भावे साईं भली कार' और उसके कानों में गूँजने लगा—

अकाशी घुम्मण तारे।
ते बाबे दी नूं घुंड बिच अखियाँ मारे।
ओ घुंड बिच अखियाँ मारे ते घुंड बिच अखियाँ मारे॥

बहुत से लोग मिलकर गा रहे थे। कदाचित् भंगड़ा नाच किया जा रहा था। सोहन सिंह ने मन कड़ाकर एक बार पुन: पाठ में ध्यान लगाने का यत्न किया और उसने पढ़ा—

असंख नां असंख था।
अंगम अंगम असंख लोई॥

परंतु रेडियो कूक रहा था—

हथ बिच कंगन छनके
ते बाबे दी नूं दियाँ उँगला करन इशारे॥
ओ उँगला करन इशारे ओ उँगला करन इशारे॥
ते घुंड बिच अखियाँ मारे॥

सोहन सिंह ने पाठ छोड़ दिया और उठकर कमरे से निकल आया। सोहन सिंह का लड़का विचित्र सिंह कोठी के बरामदे में सो रहा था। आठ बज रहे थे। सूर्य सिर पर आ गया था। रेडियो की कूक उसकी नींद खराब कर रही थी। उसने करवट ली और तकिए को सिर के नीचे से निकाल कानों पर रख रेडियो के शोर को नींद खराब करने से रोकना चाहा, परंतु रेडियो पूरे जोर से बज रहा था।

आखिर विचित्र सिंह से नहीं रहा गया। उसने लेटे-लेटे ही आवाज दे दी, "ओ, बदमाश दे बच्चे! बंद कर!"

रेडियो बजा रहा था विचित्र सिंह का लड़का सुरजीत। वह छह वर्ष की आयु का बालक था। लड़के ने पिता की डाँट नहीं सुनी। वह गाना सुनने में लीन था। लड़के के पास खड़ी उसकी बहिन मोहिनी सुर-ताल-लय के साथ नाच रही थी।

सुरजीत का बाबा सोहन सिंह अपने लड़के की परेशानी पर मुसकरा रहा था। धूप विचित्र सिंह के मुख पर पड़ रही थी, परंतु वह अभी और सोने की इच्छा कर रहा था।

इस समय विचित्र सिंह की पत्नी हाथ में एक प्याला चाय लिये हुए वहाँ आ पहुँची। यह उसके पति की बेड टी थी। विचित्र ने मुख मोड़कर अपनी पत्नी से कह दिया, "ओ सूर दे पुत्तर नू कौ, बंद कर दे।"

सोहन सिंह की हँसी निकल गई। हँसते हुए उसने अपनी पतोहू से कहा, "यह तो अभी नहीं पिएगा। मुझको दे दो। जरा भीतर जाकर सुनो तो, सूअर का बच्चा क्या सुन रहा है।"

सोहनी ने प्याला सोहन सिंह के हाथ पकड़ा दिया और गाने की तरफ ध्यान कर सुनने लगी।

रेडियो गा रहा था—

बाबे दी नूं घुंड बिच अँखियाँ मारे।

सोहनी के मुख पर लज्जा की लाली दौड़ गई। वह आँखें नीचे किए रसोईघर से चाय का एक और प्याला लेने चली गई।

: २ :

"बेटा सुरजीत," सोहन सिंह ने दोपहर के भोजन के समय अपने पोते से पूछ लिया, "रेडियो क्या गा रहा था?"

रविवार का दिन था। विचित्र सिंह दफ्तर नहीं गया था। सोहन सिंह तो रिटायर्ड सैनिक था। वह घर ही रहता था। भोजन की मेज पर पिता, पुत्र, पौत्र और बच्चों की माँ बैठे थे। बाबा के प्रश्न का उतर पोती मोहिनी ने दे दिया। वह चार वर्ष की बालिका अभी तोतली भाषा में ही बात करती थी। उसने प्रसन्न

वदन बाबा को बताया, "घुंद वित अखाँ मारे।"

सब हँसने लगे। सोहनी की आँखें अपनी प्लेट की ओर झुकी ही रह गईं और उसके गाल आँखों तक लाल हो रहे थे।

"अखाँ किस तराँ मारदे ने?" विचित्र ने बच्ची से लाड़ के साथ पूछ लिया।

"ऐस तराँ।" मोहिनी ने तोतली भाषा में कहते हुए एक आँख मींचकर दिखा दिया।

सोहन सिंह ने एक दीर्घ निश्श्वास छोड़ा और कह दिया, "जमाना बहुत तेजी से बदल रहा है, विचित्र।"

"हाँ, भापा, अब स्पूतनिक चाँद और मंगल तक जाने लगे हैं।"

"और यह हमारी बच्ची तो इस छोटी सी उम्र में ही शनि तक पहुँच गई।"

विचित्र इस व्यंग्य को समझ नहीं सका और हँसने लगा। हँसकर कहने लगा, "भापा, बहुत प्यारी लगती है।"

"विचित्र! तुम अपनी माँ को इससे भी प्यारे लगते थे, परंतु अब वह बेचारी स्वर्ग में बैठी तुमको आठ बजे तक बिस्तर में करवटें लेते देख रोती होगी।"

"क्यों?"

"विचार करती होगी कि वह गुलाब के फूल सा सुकुमार विचित्र, जिसको वह चूमती-चूमती थकती नहीं थी, अब उसको कभी याद भी नहीं करता।"

"भापा, वह जानती है कि मैं उसको रोज याद करता हूँ।"

"अच्छा, भला, कैसे याद करते हो?"

"सोहनी जैसी सुंदर पत्नी ले देने के लिए। जब-जब मैं उसकी ओर देखता हूँ, मेरा हृदय माँ के प्रति कृतज्ञता से भर जाता है।"

"इससे वह प्रसन्न नहीं हो सकती। मैं समझता हूँ कि वह रोती होगी यह देख-देखकर कि विचित्र, जो पैदा होने पर तो मानव था, भगवान् का रूप था, अब संसार रूपी कीचड़ में लोट-पोट होनेवाला सूअर ही निकला है।"

"भापा, मैं सूअर नहीं हूँ।" विचित्र ने तमककर कहा।

"बेटा, मेरी तो आँखें दुर्बल पड़ गई हैं। मुझको तो मनुष्य और सूअर में अंतर दिखाई पड़ता नहीं। इस पर भी कोई कह रहा था कि विचित्र सूअर की भाँति फूँ-फूँ करता हुआ सोहनी के पलंग के चारों ओर चक्कर काटा करता है और सुबह आठ बजे तक नींद में खरमस्त पड़ा रहता है।"

"भगवान् भला करे सरकार का। दफ्तरों में बाबुओं की संख्या बहुत अधिक हो गई है। दफ्तरों में चपरासी दस बजे पहुँचते हैं और बाबू ग्यारह बजे। विचित्र जैसे सूअरों को भी वहाँ कुरसी मिलती है और वह फूँ-फूँ करता हुआ अफसरों के गुणगान करता है।"

"भापा, यह तो मेरा बहुत अपमान किया जा रहा है?"

"तो उससे पूछो, जिसने कहा। मैं तो सुननेवाला हूँ।"

: ३ :

"समझे हैं, भापाजी क्या कह रहे थे?" सोहनी ने एकांत में अपने पति से पूछ ही लिया।

"क्या करूँ, हैं पिताजी। कोई और होता तो लात मारकर घर से निकाल देता।"

"क्यों?"

"मुझको सूअर जो कहा है।"

"जी नहीं, उन्होंने नहीं कहा। उन्होंने तो किसी को कहते सुना है।"

"कौन बदमाश का बच्चा कहता है यह?"

सोहनी ने पति के मुख पर हाथ रखते हुए उसको चुप कराते हुए कहा, "आप बात-बात पर गाली देते हैं। यही तो भापाजी कह रहे थे। देखो जी, आज सुबह आप सुरजीत को गाली दे रहे थे, 'सूअर का बच्चा।' बच्चा वह आपका है। आपने अपने को स्वयं ही सूअर कहा था।"

"ओह, तो यह बात है।"

"और अब आप, आपको सूअर कहनेवाले की अर्थात् अपने आपको बदमाश का बच्चा कहने लगे। मतलब यह है कि भापाजी को बदमाश कह रहे हैं।"

"पर मैंने सुरजीत को सूअर का बच्चा कहा था क्या?"

"हाँ, नींद में, मगर अब अपने को बदमाश का बच्चा तो जागते हुए ही कह रहे हैं। नींद में तो अंतरात्मा बोलती है, तो इसका अभिप्राय यह हुआ कि आपकी अंतरात्मा आपको सूअर कहती है।"

"तो तुम भी मुझको गाली देने लगी हो?"

"जी नहीं, मैं तो आपकी अंतरात्मा की बात कह रही हूँ।"

: ४ :

विचित्र सिंह घबराया हुआ पिताजी के कमरे में जा उनके चरण पकड़ बैठा। सोहन सिंह ने पूछा, "क्या है? विचित्र, क्या हो गया है?"

"भापा, सोहनी ने मुझको समझा दिया है कि मैं ही वह गधे का बच्चा हूँ, जो अपने पुत्र को सूअर का बच्चा कह रहा था?"

सोहन सिंह हँस पड़ा और बोला, "तुमने अब ठीक बात कही है। तुम्हारे गधे बाप ने तुमको कुछ भी अक्ल की बात नहीं सिखाई। तुमको सोहनी से यह भी पूछना चाहिए था कि सुरजीत रेडियो में क्या सुन रहा था?"

"क्या सुन रहा था, भापा?"

"रेडियो गा रहा था, 'बाबे दी नूं घुंड बिच अखियाँ मारे।' सोहनी को पूछना, कितना मजा आया था उसको सुनकर।"

"भापा, यह रेडियोवालों का दोष नहीं। यह तो लोकगीत है।"

"खाक है। कोई बदमाश, गँवार, अनपढ़ कहीं अपने विकृत मन की व्याख्या गाता होगा और रेडियोवालों ने उसको संतवाणी समझ कूकना आरंभ कर दिया।"

"देखो विचित्र, सुबह उठ सुखमनी का पाठ किया करो, जपुजी का जाप करो। तब तुम्हारी समझ में आएगा, यह लोकगीत नहीं, बदमाशों का गीत है। अधिकांश लोग ऐसा नहीं गाते।"

"पर भापा, इन रेडियोवालों को कौन समझाएगा?"

"समझाने की जरूरत नहीं। तुमको अपनी बुद्धि ठीक करने की जरूरत है। बुद्धि ठीक होगी, तो न तो रेडियो बजेगा, न ही गधे का बच्चा अपने पुत्र को सूअर का बच्चा कहेगा।" साअ

आनंद

● बी.एल. गौड़

आज लगभग ६० बरस बीत गए उससे बिछुड़े हुए। वह मेरा सहायक कम दोस्त अधिक था। मध्य प्रदेश के ऐसे घने जंगल, जहाँ दिन में भी अँधेरा छा जाता था। गरमियों में तो हालत खराब हो जाती। बचाव के लिए हम लोग सिर पर सोला हेट, सफेद पूरी बाजू की कमीज और खाकी पेंट के साथ टखने तक के जूते पहनते थे, क्योंकि जंगल के मालिक साँप, बिच्छू, चीता, भालू आदि न जाने कौन कहाँ किसी पेड़ की आड़ में खड़ा मिल जाए। इस वेषभूषा के साथ हम, मतलब मैं और मेरा दोस्त सत्यपाल आनंद सुबह सात बजते-बजते सर्वे की साइट पर पहुँच जाते थे। यह भारतीय रेल का सौ किलोमीटर लंबा एक अति महत्त्वपूर्ण प्रोजेक्ट था, जिसे समय-सीमा में पूरा करना था।

मई, जून और जुलाई तीन महीने के लिए ऊपर से आदेश था कि फील्ड में काम करने वाला स्टाफ सुबह ७ बजे से ११ बजे तक और दोपहर ३ बजे से ६ बजे तक ही साइट पर काम करेगा और दोपहर में चार घंटे का ब्रेक रहेगा। क्योंकि सनबर्न और सनस्ट्रोक का खतरा बराबर बना रहता था।

जीवन के किस पड़ाव पर आपको कौन मिलेगा—इसे आप संयोग कह सकते हैं, पर मैं इसे पूर्व नियोजित मानता हूँ। सतपाल आनंद और उसकी पत्नी दर्शना दोनों ही १९६६ में मुझे इसी प्रोजेक्ट पर मिले। मध्य प्रदेश के उस १०० कि.मी. लंबे प्रोजेक्ट पर ७ साल के दौरान यों तो अनेक साथी-सहयोगी मिले, लेकिन जो जीवन का हिस्सा बने, वे गिने-चुने ही थे। आनंद के साथ दोस्ती एक रिश्ते में बदल गई, दो भाइयों की तरह। बाद में मैंने उसकी 'सर' कहने की आदत को छुड़ा दिया और वह मुझे 'भाई साहब' कहकर बुलाने लगा।

आनंद पंजाबी और मैं ब्रजवासी, पर दोस्ती ऐसी कि सारे कैंप में चर्चा का विषय बनी हुई थी। आनंद हर परिभाषा पर खरा उतरने वाला इनसान था। कुछ समानताएँ ही हमें बाँधे हुए थीं। लोग ताज्जुब करते थे कि ये दोनों अकड़ू एक-दूसरे के इतने अच्छे दोस्त क्योंकर हैं।

रेलवे के इस महती प्रोजेक्ट पर हमें साथ-साथ काम करते हुए लगभग १८ माह बीत गए थे।

उसे कहीं भीतर यह विश्वास था कि यदि उसके साथ कभी कुछ गड़बड़ हुई तो मैं तो हूँ।

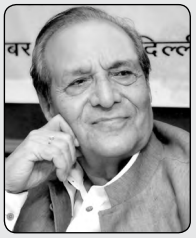

भारतीय रेल में इंजीनियरिंग विभाग से स्वैच्छिक सेवा-निवृत्ति के बाद अपनी कंपनी गौड़संस इंडिया लिमिटेड खड़ी की। संपादक, पाक्षिक समाचार-पत्र 'गौड़संस टाइम्स'। आजीवन सदस्य, अंतरराष्ट्रीय सहयोग परिषद्; प्रेस क्लब ऑफ इंडिया, ऑथर्स गिल्ड ऑफ इंडिया, इंडियन सोसाइटी ऑफ ऑथर्स। मानद सदस्य हिंदी सलाहकार समिति, संस्कृति मंत्रालय, भारत सरकार, हिंदी अकादमी दिल्ली कार्यकारिणी सदस्य रहे। तीन लाइफ टाइम एचीवमेंट के साथ अनेक सम्मानों से सम्मानित।

एक तरह से वह मुझे अपना छाता समझता था। दोस्ती यहाँ तक बढ़ गई थी कि हम एक-दूसरे के लिए अपने अफसरों से भी झूठ बोल देते थे। लेकिन सदैव तो एक से दिन रहते नहीं और 'समय' को भी अच्छा नहीं लगता कि कोई व्यक्ति सदा सुख-चैन से रहे। फिर दुर्दिनों के दु:ख कौन भोगेगा।

आखिर एक दिन ऐसा आ ही गया। उस दिन हम अलग-अलग साइट पर थे। सर्वे का वह काम हमें केवल ७ दिन में निपटाना था। के. कुटुंबा राव एक बहुत ही खतरनाक किस्म के अफसर थे। वे जब कभी हमसे कोई सवाल पूछते तो सही होते हुए भी हम लोग गड़बड़ा जाते। आनंद की कमियों को भी झूठ-सच बोलकर मुझे ही सँभालना पड़ता। लेकिन हमारी इस दोस्ती की चुगली किसी ने राव साहब से कर दी।

शाम को जब मैं और आनंद अपने कैंप पर लौटे तो आनंद बहुत उदास था। चाय पीते हुए मैंने पूछा, क्या बात है? तो बड़ी मायूसी से उसने बताया कि आज मेरा तबादला राव साहब ने मोरवा (इसी प्रोजेक्ट पर बननेवाला एक स्टेशन) कर दिया है और कहा है कि तुम्हारे ट्रांसफर ऑर्डर कल तक आ जाएँगे, दो दिन में तुम अपनी फैमिली लेकर मोरवा पहुँचोगे। मोरवा हमारे कैंप से करीब ४० कि.मी. दूर था। उसने पिछले सप्ताह ही मुझे बताया था कि उसकी पत्नी दर्शना गर्भवती है। ४० कि.मी. कच्ची ऊबड़-खाबड़ सड़क कभी पहाड़ की चोटी पर तो कभी ४०

फुट गहरे बरसाती नाले के तल पर। उसे केवल दो ही बातों की चिंता थी—पहली मुझसे बिछुड़ने की और दूसरी दर्शना के ४ माह के गर्भ को बचाने की।

दूसरे दिन मैंने सतपाल से कैंप पर रहकर ही साइट पर जाने को कहा और मैं कुटुंबा राव साहब से मिलने जीप लेकर २० कि.मी. दूर हैडक्वार्टर के लिए निकल पड़ा।

हैडक्वार्टर भी टेंटों और टीन शेडों में ही था। ठीक दस बजे राव साहब ऑफिस आए, काम कर रहे मजदूरों ने खड़े होकर आदाब बजाया, दफ्तर के बाबू, ड्राफ्टस मैन, वास्तुविद् आदि सबके सब राव साहब को सलाम मारने के लिए बारी-बारी आते दिखे।

मैं तिवारीजी (बड़े बाबू) के कमरे में बैठा रहा। जब सब औपचारिकताएँ पूरी हो गईं तो मैंने तिवारीजी से कहा कि वे मेरी मुलाकात राव साहब से करवा दें। तिवारीजी की वहाँ चलती थी। तिवारीजी राव साहब के कमरे के अंदर गए और वापिस आते ही मुझे राव साहब के पास जाने को कहा।

मैं राव साहब के स्विस कॉटेज (एक बहुत बड़ा गोल तंबू, जो अंदर से राजमहल सा लगता था) में उनके सामने हाजिर हुआ। मेरी नमस्ते का जबाव भी उन्होंने गरदन झुकाए ही दिया, वे एक फाइल को उलट-पलट रहे थे। लगभग एक मिनट तक अपने सामने खड़ा रखने के बाद उन्होंने अपनी गरदन उठाई और मेरे आने का कारण अपनी रोबदार आवाज में पूछा।

'सर, मैं एक रिक्वेस्ट करने आया हूँ।'

'हाँ-हाँ, जल्दी कहो, मुझे साइट पर जाना है।'

मैंने लगभग पाँच मिनट तक उन्हें सतपाल और दर्शना की बात समझाने की कोशिश की, लेकिन उनका बड़ा रूखा सा जबाव था, 'अरे कुछ नहीं होता, तुम जीप के पिछले हिस्से में रजाई-गद्दे डलवाकर मैनेज कर सकते हो और मोरवा तो और भी अच्छा है, वहाँ डिस्पेंसरी है, उसकी पत्नी को हर समय मेडिकल हैल्प मिल सकती है।' इतना कहकर राव साहब जल्दी से बाहर खड़ी अपनी जीप में जाकर बैठ गए, मेरी बात उनकी चिरौरी करती रह गई।

लौटती बार मैं रास्ते भर समस्या का हल ढूँढ़ने में लगा रहा। जब मैं अपने कैंप पर पहुँचा तो दर्शना और सतपाल दोनों मेरे ही टेंट में इंतजार कर रहे थे। सतपाल पुराने ब्लिटस (अखबार) को उलट-पलट रहा था और दर्शना किचन में थी। मुझे उदास देखकर सतपाल समझ गया कि बात कुछ बनी नहीं। हम कुछ बात शुरू करने ही वाले थे कि दर्शना चाय लेकर आ गई।

'सर, एक बात बताएँ', आनंद मुझसे कहने लगा, 'यदि आप मेरी जगह होते तो क्या करते?' मैंने उसे लगभग डाँटने के लहजे में कहा, 'पहले तो तुम आज के बाद कभी मुझे 'सर' नहीं कहोगे। हम दोस्त हैं और आजीवन दोस्त बने रहेंगे। सीनियर होने का मतलब यह नहीं कि मैं तुम्हारा 'सर' हो गया।'

मैंने उसके सवाल का जवाब देते हुए कहा, 'मैं वही करता, जो अब तुम्हें करना है। कल सुबह तुम दोनों को राबर्टस गंज रेलवे स्टेशन के लिए निकलना है। वहाँ से ११ बजे की ट्रेन से सीधे दिल्ली। दस दिन की छुट्टी लिखकर मुझे दे जाना।'

हम दोनों की प्लानिंग के अनुसार आनंद १० दिन की छुट्टी की अर्जी देकर दिल्ली निकल गया। बाद में जब आनंद की छुट्टी की अर्जी राव साहब की मेज पर पहुँची तो वे आग बबूला हो गए, साथ ही समझ भी गए कि यह सब किया-धरा मेरा ही है।

अब अपने किए-धरे का भुगतान तो करना ही पड़ता है। राव साहब ने एक दिन साइट पर मुझसे कहा, ''मिस्टर रमन! तुम कभी तरक्की नहीं कर पाओगे। तुम क्या समझते हो कि हम तुम्हारी इन छोटी हरकतों को समझ नहीं पाते। तुमने सतपाल को यह रास्ता बताया और वह बेवकूफ तुम्हारी बातों में आकर दस दिन के लिए चला गया। तुम्हें भी अच्छी तरह मालूम है कि दस दिन बाद ही हमारे जोन के चीफ का इंस्पेक्शन है।' मैं चुपचाप सुनता रहा और एक शब्द भी अपने बचाव में नहीं कहा।

उसके बाद एक दूसरी जगह ट्रांसफर, ताड़ना, प्रताड़ना चलती रही और बंदा उसे झेलता रहा। आनंद जैसे दोस्त के लिए यह सब न के बराबर था।

पाँच दिन बाद आनंद का टेलीग्राम आया, 'मुझे आगे क्या करना है?' मैंने उत्तर में उसे अपने एक डॉक्टर मित्र का पता भेज दिया और टेलीग्राम द्वारा बता दिया—लगातार सिक लीव पर रहो और स्वयं को स्पौंडलाइटिस सरवाइकल से ग्रस्त बताकर छुट्टी बढ़ाते रहो। इसी बीच कोशिश करो कि तुम्हें दिल्ली में ही पोस्टिंग मिल जाए।

यह बात १९६४ की है। १९६७ में तो मैं भी उस प्रोजेक्ट से दिल्ली आ गया था। आनंद ने दिल्ली में अपना पता मॉडल टाउन का दिया था। लगभग एक साल के बाद ही उससे संपर्क टूट गया था। मेरे मन में भी एक क्रोध मिश्रित अजीब सा भाव था—आनंद और दर्शना के लिए। ऐसा कैसे हो सकता है कि इतना प्रगाढ़ संबंध इस तरह टूट जाए। यह सब सोचकर मैंने अपने एक सहायक को एक चिट्ठी देकर मॉडल टाउन के पते पर आनंद के पास भेजा। उसने लौटकर जो हालात बताए, उन्हें जानकर मुझे अपनी सोच पर बहुत अफसोस हुआ। मन ग्लानि से भर गया। मैंने ऐसा क्यों सोचा आनंद और दर्शना के लिए।

हुआ यों था, लगभग एक साल तो आनंद ने अपने बड़े भाई संतोष आनंद के साथ किसी तरह गुजारा, लेकिन बड़े भाई और उसकी पत्नी ने छोटे भाई का जीना मुहाल कर दिया। उसे एक दिन दूसरी जगह किराए के मकान में जाना पड़ा। बड़े भाई ने वे सभी कागजात सतपाल को दिखा दिए, जो उसने पिताजी के मरने से पहले अपने नाम करवा लिये थे।

दर्शना और सतपाल ने कुछ भी न कहकर अपना पुश्तैनी मकान छोड़कर बाहर का रुख किया। सतपाल के भाई ने मेरे भेजे हुए आदमी

को भी फटकारते हुए यह कहकर भगा दिया, 'हमें नहीं पता वह कहाँ रहता है, एक साल से हमारा उससे कोई रिश्ता नहीं है।'

मैंने रेलवे हैडक्वार्टर, बड़ौदा हाउस जाकर पता किया तो पता चला कि लगभग तीन साल से सतपाल आनंद कंस्ट्रशन डिवीजन में जम्मू-ऊधमपुर रेल लिंक में पोस्टिड है।

लगभग एक माह तो यों ही सोचने में निकल गया कि कब जम्मू जाऊँ? फिर एक दिन जम्मू मेल पकड़ी और मैं जम्मू पहुँच गया। जम्मू हैडक्वार्टर में थोड़ा सा ही स्टाफ था, सबको एक-दूसरे का पता था। सुबह के आठ बजने को थे, मैं आनंद का पता पूछकर उसके घर पहुँच गया। दरवाजा दर्शना ने ही खोला। अचानक बाहर मुझे देखकर वह हतप्रभ रह गई और मेरा हाथ पकड़कर खींचते हुए भीतर ले गई। बगल वाले कमरे से आनंद बाहर आया और मेरे से लिपट गया। आनंद और दर्शना दोनों के ही आँसू थमने का नाम नहीं ले रहे थे। चार-पाँच मिनट बाद स्थिति कुछ काबू में आई।

धीरे-धीरे बातों का अंत हुआ तो दर्शना ने कहा, भाई साहब! आप कीर्ति को समझाओ कि वह शादी कर ले, लड़का भी इसी के कॉलेज में एसोसिएट प्रोफेसर है। बहुत अच्छा लड़का है, आनंद भी उसे बहुत चाहते थे। लेकिन कीर्ति कहती है कि वह मुझे अकेला नहीं छोड़ सकती। मैंने कीर्ति से कहा, 'बेटा! तुम अपनी माँ को उसके भाई के सहारे तो छोड़ सकती हो।' दर्शना और कीर्ति दोनों ही मुझसे लिपट गईं और जार-जार रोने लगीं।

चाय पीते-पीते आनंद और दर्शना ने जो बड़े भाई और भाभी की करतूतों के बारे में बताया, वह बहुत ही दुखदायी था। पिताजी से मरते समय मकान और दुकान को अपने नाम पावर अटॉरनी करना और आए दिन दर्शना पर जुल्म ढाना आदि। सब सुनकर मैंने कहा, तुम कोर्ट केस कर सकते थे। 'भाई साहब! आप तो समझते हैं कि कोर्ट-कचहरी, पुलिस यह सब वही कर सकता है, जिसके पास पैसा हो। यहाँ तो आठ साल की नौकरी के बाद मेरे और दर्शना के पास कुल मिलाकर पंद्रह हजार रुपए थे और फिर ऐसे आदमी से क्या लड़ना, जो भाई तो दूर, आदमी ही न रहा हो।'

आनंद ने उस दिन छुट्टी ले ली थी। हम लोग जम्मू बाजार गए और पास में ही 'बागे-बाहू' (एक टूरिस्ट) स्पॉट पर भी गए। वापसी पर मेरी गाड़ी रात दस बजे थी। वे दोनों और साथ में तीन साल का बेटा प्लेटफार्म पर मुझे विदा करने के लिए खड़े रहे। थोड़ी देर में सिग्नल हरा हो गया और गाड़ी सरकने लगी। दर्शना बार-बार अपनी चुन्नी से जबरन बहते आँसुओं को रोक रही थी। धीरे-धीरे सभी चेहरे धुँधले होकर विलीन हो गए।

लगभग पाँच साल तक तो हम एक-दूसरे के संपर्क में रहे, उसके बाद पता ही नहीं चला कि हम दो दोस्तों का साथ कब कैसे छूट गया और हम दुनिया की भीड़ में खो गए। भीड़ का यह समंदर कितना भयंकर है कि इसमें बिछुड़े हुए शायद ही कभी मिल पाते हों। अब रेलवे छोड़े हुए भी मुझे बीस साल से अधिक हो गए थे। मैं भी व्यापार में ऐसा फँसा कि आनंद और दर्शना को लगभग भूल ही गया।

उस दिन रविवार था। सुबह की चाय के बाद आराम से अखबार के पन्ने पलट रहा था तो अचानक एक चित्र देखकर मैं चौंक पड़ा। आनंद का चित्र था, नीचे लिखा था कि बहुत दुःख के साथ सूचित कर रही हूँ कि मेरे पति सतपाल आनंद अब इस दुनिया में नहीं रहे। तीन दिन बाद उनका चौथा उठाला गीता भवन महरौली में किया जाएगा। नीचे केवल दो नाम थे—दर्शना आनंद और कीर्ति आनंद।

चौथेवाले दिन मैं समय से दस मिनट पहले ही गीता भवन पहुँच गया। लोगों का ताँता लगा हुआ था। हॉल के बीच में एक रस्सी बँधी हुई थी, जिसमें एक तरफ महिलाएँ और दूसरी तरफ पुरुष आ-आकर बैठ रहे थे। मैं चुपचाप सबसे पीछे जाकर बैठ गया। दर्शना कई महिलाओं से घिरी थी। रो-रोकर उसका बुरा हाल था। मैं चुपचाप आनंद के चित्र पर पुष्पांजलि देकर पीछे जाकर बैठ गया।

लगभग एक घंटा पंडितजी जीवन की क्षण-भंगुरता के विषय में बताते रहे और संतप्त परिवार को भी कुछ बातें बताते रहे। शांति पाठ के बाद लोग धीरे-धीरे बाहर निकल रहे थे। मैं जान-बूझकर सबसे अंत में निकला। मुझे दर्शना और उसकी बेटी से मिलकर ही जाना था।

जैसे ही मैं बाहर निकला तो दर्शना ने एकदम पहचान लिया और मुझ से लिपटकर बहुत बुरी तरह रोने लगी। वह बहुत देर में जाकर शांत हुई तो बताया कि कैसे आनंद का हार्ट फेल हुआ और आनन-फानन में बिना किसी से कुछ भी कहे वे चुपचाप चले गए।

मैं सोचने लगा कि लोग कमीने तो होते हैं, लेकिन इतने भी नहीं कि सगा छोटा भाई इस दुनिया से चला जाए और भाई पूछने तक न आए। बाद में किसी ने बताया कि संतोष आता भी तो कैसे, वह तो महीनों से बिस्तर में है और कैंसर से जूझ रहा है। सुनते ही यह बात मन में प्रश्न चिह्न बनकर उभरी कि क्या आदमी इसी जन्म में करनी का फल भोगकर जाता है?

धीरे-धीरे सांत्वना देने आए लोग एक-एक कर चले गए। अब हॉल के बाहर मैं, दर्शना और बेटी कीर्ति, तीनों बैठे बातें कर रहे थे। दर्शना ने बताया, बेटा अमेरिका में ही सदैव के लिए बस गया है। उसने वहीं शादी की और अब एक बेटे का बाप बन गया है। मुझे और कीर्ति को बुलाया था, जब बहू की डिलीवरी हुई थी। कुछ दिन बाद कीर्ति ने जिद पकड़ ली थी यहाँ लौटने की।

हर रोज कहती—माँ, तुम क्या केवल सेवा करने के लिए ही बनी हो। आज दर्शना के काबिल बेटे के पास बहाना है 'कोरोना' का। कितना बढ़िया बहाना है कि वहाँ की सरकार ही अपने नागरिकों को भारत आने से रोक रही है। कीर्ति कहने लगी, माँ! भय्या के लिए आप, मैं या जानेवाले पापा कोई मायने नहीं रखते। सभी लोग हमसे पूछ रहे थे उसके

न आने के बारे में और हम लोग बार-बार एक ही झूठ को दोहरा रहे थे, 'कोरोना' में वहाँ की सरकार ने इजाजत नहीं दी। लोग क्या इतने बेवकूफ हैं, जो सच्चाई नहीं समझते। सच कहते हैं कि समुद्र में खोया हुआ आदमी कभी वापस नहीं लौटता।

धीरे-धीरे बातों का अंत हुआ तो दर्शना ने कहा, भाई साहब! आप कीर्ति को समझाओ कि वह शादी कर ले, लड़का भी इसी के कॉलेज में एसोसिएट प्रोफेसर है। बहुत अच्छा लड़का है, आनंद भी उसे बहुत चाहते थे। लेकिन कीर्ति कहती है कि वह मुझे अकेला नहीं छोड़ सकती। मैंने कीर्ति से कहा, 'बेटा! तुम अपनी माँ को उसके भाई के सहारे तो छोड़ सकती हो।' दर्शना और कीर्ति दोनों ही मुझसे लिपट गईं और जार-जार रोने लगीं।

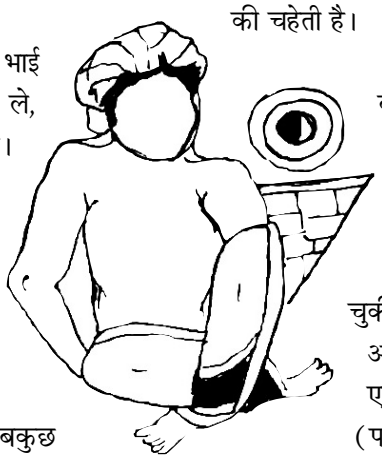

आनंद को गए आज तीन साल हो गए हैं, अब सबकुछ शांत है। आनंद का जाना बिल्कुल ऐसा ही रहा, जैसे तालाब में किसी ने एक कंकड़ फेंका, लहरें उठीं और फिर धीरे से पानी में ही समा गईं। कीर्ति की शादी हो चुकी है और दर्शना ने वृंदावन की एक विधवा को बुलाकर अपनी जीवन-संगिनी बना लिया है।

हर रक्षाबंधन और भाईदूज के दिन दर्शना और कीर्ति दोनों आते हैं और हम दोनों (मैं और पत्नी) भी बेसब्री से उन दोनों का इंतजार करते हैं। दर्शना आती है अपने भाई से प्यार पाने और देने के लिए, और कीर्ति आती है अपने मामा-मामी से मिलने। वह मुझसे अधिक अपनी मामी की चहेती है।

पत्नी त्योहार से लगभग एक सप्ताह पहले मेरे साथ बाजार जाती हैं और बड़े चाव से अपनी ननद और भानजी के लिए शॉपिंग करती हैं। दोनों बहुएँ मन-ही-मन कुढ़ती तो बहुत हैं इस रिश्ते से, पर कह कुछ नहीं पातीं।

मेरी और पत्नी की यह धारणा बहुत पक्की हो चुकी है कि किसी से कोई रिश्ता रहे, न रहे, लेकिन दर्शना और कीर्ति का यह स्नेह-बंधन कभी ढीला नहीं पड़ेगा। एक बड़ा संतोष और आनंदमय विश्वास हम दोनों (पति-पत्नी) के मन में घर कर चुका है। सोचता हूँ, रिश्ते खून के ही नहीं होते, उनसे परे भी संसार भरा पड़ा है—अगर भाग्य में बदे हों तो मिल ही जाते हैं। बस हमें थोड़ा सा प्रयास करने की जरूरत है।

१, बाराखंभा रोड
नई दिल्ली-११०००१
दूरभाष : ९८१०१७३६१०

पाठकों से निवेदन

- जिन पाठकों की वार्षिक सदस्यता समाप्त हो रही है, कृपया वे सदस्यता का नवीनीकरण समय से करवा लें। साथ ही अपने मित्रों, संबंधियों को भी सदस्यता ग्रहण करने के लिए प्रेरित करने की कृपा करें।
- सदस्यता के नवीनीकरण अथवा पत्राचार के समय कृपया अपने सदस्यता क्रमांक का उल्लेख अवश्य करें।
- सदस्यता शुल्क यदि मनीऑर्डर द्वारा भेजें तो कृपया इसकी सूचना अलग से पत्र द्वारा अपनी सदस्यता संख्या का उल्लेख करते हुए दें।
- चैक साहित्य अमृत के नाम से भेजे जा सकते हैं।
- ऑन लाइन बैंकिंग के माध्यम से बैंक ऑफ इंडिया के एकाउंट नं. 600120110001052 IFSC-BKID 0006001 में साहित्य अमृत के नाम से शुल्क जमा कर फोन अथवा पत्र द्वारा सूचित अवश्य करें।
- आपको अगर साहित्य अमृत का अंक प्राप्त न हो रहा हो तो कृपया अपने पोस्ट ऑफिस में पोस्टमैन या पोस्टमास्टर से लिखित निवेदन करें। ऐसा करने पर कई पाठकों को पत्रिका समय पर प्राप्त होने लगी है।
- सदस्यता संबंधी किसी भी शिकायत के लिए कृपया फोन नं. 011-23257555, 8448612269 अथवा sahityaamritindia@gmail.com पर इ-मेल करें।

खालसा पंथ के प्रवर्तक श्रीगुरु गोविंदसिंहजी महाराज

● गौरीशंकर वैश्य 'विनम्र'

वैशाखी का सुहावना मास और १३ अप्रैल, १६९९ का वह ऐतिहासिक दिन है, जब सिख धर्म के दशमेश गुरु गोविंदसिंहजी ने अन्याय और अत्याचार के विरुद्ध शोषितों को एकजुट कर साथ खड़ा होने का पाठ पढ़ाया। वैशाखी पर्व सिख समाज को गुरु गोविंदसिंह के इन्हीं संदेशों को जीवन में उतारने और उनके बताए रास्ते पर आगे बढ़ने की याद दिलाता है।

गुरु गोविंदसिंह का जन्म पाटलिपुत्र (पटना) में २२ दिसंबर, १६६६ को पिता गुरु तेगबहादुर और माता गूजरी के पुत्र के रूप में हुआ। गुरु तेगबहादुरजी पुत्र जन्म से पूर्व ही ढाका (पूर्वी बंगाल), असम आदि की यात्रा के लिए प्रस्थान कर चुके थे। उधर से ही उनका परिवार से संपर्क-संचार बना रहा। पिता ने ही डेढ़ वर्ष गोविंद राय (गुरु गोविंदसिंह का पूर्व नाम) को गुरमुख अक्षर बोध कराने के लिए भाई चौपत राय को और मुंशी हरजश राय को नियुक्त किया। लगभग एक वर्ष बाद संस्कृत शिक्षण के लिए कश्मीर के विद्वान् ब्राह्मण कृपाराम दत्त को सौंप दिया। पंडित शिवदत्त, माता गूजरी और फतेहचंद की रानी के सान्निध्य में बालक गोविंद राय ने तीर-तलवार तथा गुलेल से लक्ष्य-संधान करना सीख लिया।

नौवें गुरु तेगबहादुरजी को विभिन्न तीर्थयात्रियों से, उत्तर भारत में औरंगजेब द्वारा किए जा रहे नृशंस अत्याचारों के समाचार मिले। वे अपनी यात्रा स्थगित कर पाँच वर्ष के अंतराल के बाद पटना आ गए।

सन् १६७५ के आरंभ में उन्होंने पंडित कृपाराम दत्त तथा कुछ प्रतिनिधियों के साथ दिल्ली आकर औरंगजेब के अमानुषिक अत्याचारों से मुक्ति दिलाने के लिए प्रार्थना की। किंतु दिल्ली के चाँदनी चौक में भाई मतीदास, भाई सतीदास और भाई दयालदास नामक सेवकों के साथ बलिदान हो गए।

११ नवंबर, १६७५ को किशोर गोविंद राय के कंधे पर सिख पंथ के दशम गुरु के पद का दायित्व सौंप दिया गया। धर्म और समाज की रक्षा हेतु ही उन्होंने श्रीआनंदपुर साहिब और तत्कालीन पंजाब की वीरभूमि को राष्ट्रीय सांस्कृतिक एकात्मकता सूत्र में बाँधने का प्रयास किया। उन्होंने अपने समय के घोर आततायी मुगल शासन की अनीतियों का विरोध किया और भारतीय मानस में अपनी ओजस्वी वाणी से अद्‌भुत उत्साह और उत्सर्ग की भावना का संचार किया।

१३ अप्रैल, १६९९ को वैशाखी के दिन श्रीआनंदपुर साहिब के 'केसगढ़' दुर्ग में एक विशाल समारोह आयोजित कर दशमेश गुरु ने 'खालसा' पंथ की स्थापना की। खालसा का अर्थ है खालिस (शुद्ध)। इसमें सभी जातियों के लोगों को एक पात्र से अमृत (खंडे बाटे का शर्बत) बाँटकर पंज प्यारे सजाए। इसमें भारत के पाँच अलग-अलग क्षेत्रों और समुदायों से 'पाँच प्यारे' चुने गए थे। इन 'पाँच प्यारों' को अमृत छकाकर 'सिंह' रूप में सजाने के तुरंत पश्चात् दशमेश गुरु सिंहासन से उतरे और 'पाँच प्यारो' के सम्मुख नतमस्तक हो, हाथ जोड़कर बोले, 'आज से मैं 'खालसा' सेवक हुआ। सिंह साहबान मुझे भी अमृत छकाकर दीक्षित करें।' इसी वैशाखी के दिन उनका नाम गोविंद राय से गुरु गोविंदसिंहजी हो गया। उन्होंने 'पाँच प्यारों' (सज्जन) पुरुषों को संगठित कर समाज की रक्षा का दायित्व सौंपा। उन्हें 'सिंह' नाम दिया गया तथा उन्हें बताया कि उनमें इतनी शक्ति है कि एक-एक सिंह सवा लाख शत्रुओं से लड़ने के लिए सक्षम है। उनकी ललकार थी, 'सवा लाख से एक लड़ाऊँ, तब गोविंदसिंह नाम कहाऊँ'।

उन्होंने सिखों को सभी की रक्षा के लिए पाँच ककारों (केश, कड़ा, कच्छा, कृपाण और कंघा) की मर्यादाओं से सुसज्जित किया, जिससे वे दुर्बलों की रक्षा कर सकें, अत्याचार के विरुद्ध लड़ सकें। दशम गुरु ने ही सिख पंथ में बहुत समय से चल रही मसंद प्रथा को समाप्त किया, क्योंकि इसमें आचार संहिता के अनुसार कार्य करने में विकार आने से असुविधाएँ बढ़ने लगी थीं। उनका भीमकाय 'रणजीत' नगाड़ा दूर-दूर तक उनकी धर्मसत्ता का तीव्र घोष करता हुआ चलता था।

श्रीगुरु गोविंदसिंह ने नाहन-सिरमौर के राजा मेदिनी प्रकाश के माध्यम से विभिन्न पहाड़ी राजाओं की एक परामर्श-परिषद् का आयोजन किया। हिंदू-शक्ति को संगठित करने का यह अपने प्रकार का अनूठा प्रयास था। फलत: राजा मेदिनी प्रकाश और श्रीनगर-गढ़वाल के राजा फतहशाह की पुरानी शत्रुता मित्रता में बदल गई। कहलूर के राजा भीमचंद ने भी पहले गुरु गोविंदसिंह की सेवा का वचन दिया, किंतु वह गद्दार निकला। उसने अपने कुछ पहाड़ी राजाओं को विधर्मी मुगल शासकों से मिलवा दिया। दशम गुरु को इसकी भनक लग गई तो उनके द्वारा प्रतिरोध किया जाना स्वाभाविक था।

उत्तर भारत में जनजागरण के बाद श्रीगुरु गोविंदसिंह दक्षिण में नांदेड़ (महाराष्ट्र) पहुँचे। वहीं ७ अक्तूबर, १७०८ को एक हत्यारे ने धोखे से उन्हें चाकू मार दिया। केवल पौने बयालीस वर्ष की अल्पायु में

ही दशम गुरु की जीवनलीला समाप्त हो गई। उनके चारों पुत्र धर्म एवं संस्कृति की रक्षा-हेतु बलिदान हो गए।

महाप्रस्थान से पूर्व उन्होंने संगतों को बुलाकर सिख-पंथ की समग्र एकता के प्रतीक 'आदिग्रंथ' को गुरु रूप में प्रतिष्ठित करके 'श्रीगुरुग्रंथसाहिब' का नाम दिया। वे सिखों के दसवें और अंतिम गुरु के रूप में प्रतिष्ठित हुए।

वे जहाँ विश्व की कालजयी बलिदानी परंपरा में अद्वितीय थे, वहीं स्वयं एक महान् लेखक, मौलिक चिंतक, कवि, भक्त, आध्यात्मिक नेता तथा संस्कृत, ब्रजभाषा, फारसी आदि कई भाषाओं के ज्ञाता थे। वे विद्वानों के संरक्षक थे। उनके दरबार में ५२ कवियों और लेखकों की उपस्थिति रहती थी, इसलिए उन्हें 'संत सिपाही' कहा जाता था। गुरुजी की मान्यता थी कि मनुष्य को किसी को डराना नहीं चाहिए और न किसी से डरना चाहिए।

गुरु गोविंदसिंहजी ने अपने जीवनकाल में अनेक रचनाएँ कीं, जिनकी छोटी-छोटी पोथियाँ बना दीं। उनके प्रयाण के बाद उनकी धर्मपत्नी माता सुंदरी की आज्ञा से भाई मणिसिंह खालसा आदि ने उनकी सारी रचनाओं को एक जिल्द में चढ़ा दिया। गुरुजी की रचनाओं में जपा साहिब, अकाल स्तुति, बचित्तर नाटक, चंडी चरित्र, ज्ञान परबोध, चंडी दी बार, शस्त्रमाला, ब्रह्म अवतार, चौबीस अवतार, जफरनामा, खालसा महिमा आदि प्रमुख हैं।

वैशाखी के पावन पर्व पर हम लोग शहीदों की याद करके उनका गुणगान करें तथा उनके गुणों को आचरण में लाएँ। अतीत के बलिदानों से प्रेरणा लेकर हम सभी अपने कर्तव्यों का पालन करें तथा एक-एक व्यक्ति को जाग्रत् कर समाज और देश का उत्थान करें।

सा अ

११७ आदिलनगर, विकासनगर

लखनऊ-२२६०२२

दूरभाष : ९९५६०८७५८५

सुपरिचित लेखक। 'दानवीर भामाशाह', 'राजा टोडरमल', 'नर नारायण नरोत्तम' (खंडकाव्य), बाल विज्ञान कविताएँ, पर्यावरणीय बाल कविताएँ, बाल रश्मि, अवधी बाल कविताएँ, विनम्र बाल पहेलियाँ सहित बाल साहित्य की दस पुस्तकें। सोहनलाल द्विवेदी बाल कविता सम्मान, साहित्य गौरव सम्मान सहित अनेक सम्मान।

अपराध-बोध

लघुकथा

• शैफालिका सिन्हा

'मम्मी बोर तो नहीं हो रही, हम लोग तो सुबह ही निकल जा रहे हैं, क्या करती हो दिनभर इस खाली घर में?'

यह सही है कि पिछले रविवार को शालिनीजी अपने बेटे अनुज के पास आई हैं और सोमवार से ही अनुज और उसकी पत्नी मनीषा ऑफिस जा रहे हैं। सॉफ्टवेयर कंपनी से भरे इस शहर में तो भीड़ के कारण उन्हें निकलना भी जल्दी होता है और लौटना भी देर से।

शालिनीजी ने कहा, 'पापा के जाने के बाद से तो अकेले रहने की आदत पड़ गई है, पर वहाँ मेरे पड़ोसी हैं, काम करनेवाली है, माली है, धोबी है, उनसे ही दो चार बातें हो जाती हैं तो मन लग ही जाता है।'

'इसीलिए तो मैं पूछ रहा हूँ कि आपको मन लग रहा है या नहीं?'

बेटे के इस सवाल पर शालिनीजी ने मुसकराकर कहा, 'मैंने यहाँ मन बहलाने के लिए संगी-साथी खोज ही लिया है।'

'क्या, यहाँ कौन फुर्सत में मिल गया, जो आपकी हिंदी समझे और आपसे बातें करे?'

शालिनीजी के चेहरे पर चमक आ गई, कहने लगीं, 'हाँ, मेरे संगी-साथी हैं, जो मुझे समय का आभास भी कराते हैं और मुझे खुशी भी देते हैं। अब देखो सुबह-सुबह सात बजते ही मंदिर की घंटी बजती है और ऊर्जा आ जाती है। नौ बजते ही सब्जीवाला अपना ठेला लेकर आ जाता है। बालकनी से उसे निहारने में भी अच्छा लगता है। फिर पीछे लंबे-लंबे गुलमोहर के पेड़ हैं, जिन पर हर समय गिलहरियाँ फुदकती रहती हैं, सच कहूँ तो इतनी उम्र हो गई, लेकिन गिलहरी की इतनी अच्छी तेज आवाज मैंने आज तक नहीं सुनी थी। कभी-कभी तो ये गिलहरियाँ इतनी तेज बोलती हैं, लगता है जैसे बातें कर रही हैं। अब छत पर कपड़े डालने जाती हूँ तो कौवा तार पर बैठकर काँव-काँव करता रहता है। इसके अलावा सामने का पार्क भी तो तुम्हारी बालकनी से नजर आता है। वहाँ भी सफेद, पीले और लाल रंग के फूलों से भरे पेड़-पौधे और तरह-तरह के पक्षी नजर आते हैं। बालकनी में बैठ जाती हूँ, आँखों को सुकून मिल जाता है। आधा दिन तो मेरा ऐसे ही बीत जाता है। फिर टी.वी. देखने, अखबार पढ़ने और आराम करने में समय कैसे बीत जाता है, पता ही नहीं चलता।'

'वाह, मम्मी तुसी ग्रेट हो। लोग तुम्हारी तरह रहने लगें तो उनको अकेलापन लगे ही नहीं।'

'सच मम्मीजी, आपकी बातों से तो हमें भी एनर्जी मिल गई।' मनीषा ने खुश होकर कहा।

अनुज मम्मी को समय न दे पाने के अपराध-बोध से भी मुक्त हो गया।

सा अ

फ्लैट नं ५ सी, फेज ३

शुभाश्री अपार्टमेंट

बरियातु, राँची -८३४००९ (झारखंड)

दूरभाष : ९९५५३४६५६६

अनूठा और सार्थक रहा १२वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन

● अमित कुमार विश्वास

युवा लेखक-पत्रकार। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में शताधिक लेख, साक्षात्कार, कहानी, रिपोर्ताज आदि प्रकाशित। आकाशवाणी से तीन दर्जन से अधिक कार्यक्रमों का प्रसारण। छह पुस्तकों का लेखन एवं संपादन। संप्रति सहायक संपादक, महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र)।

फिजी देश और भारतीयों का संबंध काफी पुराना है। १८७९ से १९१६ के मध्य फिजी में भारतीय मजदूरों को अंग्रेजों द्वारा गन्ने के खेतों में काम करने के लिए ले जाया गया था। तब से फिजी में हिंदी भाषा का चलन है। फिजी में राष्ट्रीय स्तर पर हिंदी भाषा का विकास है। यहाँ के प्राथमिक और माध्यमिक विद्यालयों में हिंदी पढ़ाई जाती है। गिरमिटिया के रूप में गए भारतीयों की भले ही चौथी या पाँचवीं पीढ़ी हो, पर वे आजा-आजी के देश हिंदुस्तान और यहाँ की हिंदी से प्यार करते हैं। यही कारण है कि फिजी ने १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन की मेजबानी के लिए आमंत्रण दिया।

दक्षिण प्रशांत महासागर के मध्य स्थित फिजी में १५-१७ फरवरी, २०२३ को १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन का भव्य आयोजन संपन्न हुआ। इसमें ३० देशों से हिंदी भाषा के विद्वान और हिंदीसेवी जुटे थे। भारत सरकार ने भी ३०० से ज्यादा साहित्यकारों, पत्रकारों व हिंदी-सेवियों को इस सम्मेलन में भेजा था। नादी एयरपोर्ट से आयोजन स्थल तक बड़े-बड़े होर्डिंग लगाए गए थे, जिनमें फिजी भाषा में बुला और हिंदी में लिखा नमस्ते आगंतुकों को आमंत्रित कर रहे थे। नादी हवाई अड्डे से स्वागत का जो सिलसिला शुरू हुआ, वह आयोजन स्थल होटल शेरेटन तक जारी रहा। स्थानीय लोगों का समूह गिटार की धुन पर स्वागत कर रहा था तो पारंपरिक वेशभूषा में फिजी के लोग हिंदी बोलकर अपनत्व जता रहे थे। भारतीय प्रतिनिधि मंडल में आए लगभग तीन सौ लोगों को दिनाराऊ द्वीप के विभिन्न होटलों में ठहराया गया था। फिजी के उच्चायुक्त कमलेश शशि प्रकाश की अगुवाई में आयोजन के तीनों दिन बड़ी संख्या में भारतीय और फिजी मूल के स्वयंसेवक आवभगत में लगे रहे। महिलाओं की संख्या पुरुषों से अधिक थी। महिलाओं और पुरुषों ने अपने एक कान में फूल सजा रखे थे, जो रूप की शोभा बढ़ाने के साथ संकेतक का भी काम कर रहे थे। उत्सुकता जाहिर करने पर एक स्थानीय महिला स्वयंसेवक ने बताया कि यदि किसी ने बाएँ कान पर फूल सजा रखे हैं तो इसका मतलब वह अविवाहित है और यदि दाएँ कान पर फूल सजे हैं तो समझिए कि यह विवाहित है।

'हिंदी-पारंपरिक ज्ञान से कृत्रिम मेधा तक' विषय पर आधारित १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन का विधिवत् शुभारंभ १५ फरवरी को पूर्वाह्न ०९:३० बजे फिजी गणराज्य के मुख्य नगर नादी के देनाराउ आइलैंड कन्वेंशन सेंटर, शेरेटन होटल में हुआ। मंच पर मुख्य अतिथि फिजी गणराज्य के राष्ट्रपति श्री रातू विल्यम कटोनिवेरे और भारत के विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर उपस्थित थे। सभागृह विश्वभर के हिंदी-प्रेमियों से खचाखच भरा था। पीछे बड़ी संख्या में लोग खड़े भी दिखाई दिए। स्थानीय फीजियन कर्मकांडों के साथ उद्घाटन समारोह को देखना एक अलग अनुभव था और मन को रोमांचित करने वाला भी। समारोह का उद्घाटन दोनों देशों के राष्ट्रगान और दीप प्रज्वलित करके किया।

प्रो. परमानंद भारद्वाज और ब्रह्मदत्त शास्त्री ने वैदिक मंगलाचरण प्रस्तुत किया। प्रो. विजेंद्रपल्ली ने लौकिक मंगलाचरण किया। फिजी के राष्ट्रपति ने अपने खास मेहमान भारत के विदेश मंत्री को राष्ट्रीय पेय कावा (याकोना) पिलाकर स्वागत किया। उसके उपरांत फिजी के कलाकारों ने नैसर्गिक शक्तियों का पारंपरिक आह्वान कार्यक्रम प्रस्तुत किया। उस आह्वान में विश्व को सुख-शांति देने की प्रार्थना की गई।

उद्घाटन समारोह में राष्ट्रपति श्री रातू विल्यम कटोनिवेरे ने अपने उद्बोधन में कहा है कि आधुनिक फिजी के निर्माण में भारतवंशियों का बहुत योगदान है। १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन का आयोजन कर फिजी सरकार प्रसन्नता का अनुभव कर रही है। इस आयोजन ने भारत के साथ फिजी के ऐतिहासिक संबंधों की याद ताजा कर दी है, जिसकी शुरुआत ब्रिटिश औपनिवेशिक काल में हुई थी। जो भारतवंशी यहाँ गन्ने की खेती के लिए लाए गए, उन्होंने इस देश के निर्माण में अपना श्रम नियोजित किया। उनकी भाषा हिंदी थी। उसे ही आज हम 'फिजी हिंदी' कहते हैं। फिजी में बॉलीवुड की फिल्मों ने भी हिंदी को लोकप्रिय बनाया है। हिंदी भाषा की सांस्कृतिक जड़ें फिजी में जिंदा हैं। कृत्रिम मेधा से भारतीय भाषाओं के संरक्षण, संवर्धन एवं विकास को गति मिलेगी। यूनेस्को की रिपोर्ट में विश्व की कई भाषाओं के लुप्त होने पर चिंता जताई गई है। इसलिए भाषाओं को बचाना बहुत जरूरी है। उन्होंने उम्मीद जताई कि यह तीन दिवसीय सम्मेलन उस दिशा में फलदायी होगा। उद्घाटन भाषण देते हुए भारत के विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर ने कहा कि विश्व हिंदी सम्मेलन जैसे आयोजनों में हमारा ध्यान हिंदी भाषा के विविध पहलुओं, उसके वैश्विक प्रयोग और उसके प्रचार-प्रसार पर है। यह सम्मेलन विश्व में हिंदी को सम्मान दिलाने का उपक्रम है। यह हर्ष की बात है कि हम १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन का उद्घाटन नादी में कर रहे हैं। इसके लिए मैं फिजी सरकार का धन्यवाद करता हूँ, यह हमारे दीर्घकालिक संबंधों को आगे बढ़ाने का भी अवसर है। हम फिजी, प्रशांत क्षेत्र तथा गिरमिटिया देशों में हिंदी की स्थिति, सूचना प्रौद्योगिकी, सिनेमा और साहित्य के हिंदी पर प्रभाव जैसे मुद्दों पर चर्चा करेंगे। वह युग पीछे छूट गया है, जब प्रगति को पश्चिमीकरण के समान माना जाता था। ऐसी कई भाषाएँ, परंपराएँ, जो औपनिवेशिक युग के दौरान दबा दी गई थीं, फिर से वैश्विक मंच पर आवाज उठा रही हैं। ऐसे में आवश्यक है कि विश्व को सभी संस्कृतियों और समाजों के बारे में जानकारी हो। सांस्कृतिक पुनर्संतुलन आवश्यक है। एक नए भारत का निर्माण हो रहा है, जो बड़े-से-बड़े कार्य को पूर्ण करने में सक्षम है, इसके लिए हिंदी एक सशक्त भाषा है।

भारत के गृह राज्यमंत्री अजय कुमार मिश्र ने कहा कि भारत सरकार भारतीय संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए सतत तत्पर है। प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नेतृत्व में हिंदी भाषा के माध्यम से भारत की संस्कृति पूरे विश्व में लगातार फल-फूल रही है। उन्होंने भारत की विश्व बंधुत्व की भावना को विशेष रूप से रेखांकित किया तथा फिजी के इतिहास एवं उसकी परंपरा के मूल्यवान तत्त्वों पर प्रकाश डालते हुए एक-दूसरे की साझी विरासत की भी चर्चा और प्रवासी भारतीय दिवस की चर्चा करते हुए हिंदी के वैश्विक फलक को चिह्नित किया। उन्होंने उम्मीद जताई कि जल्द ही संयुक्त राष्ट्र संघ की आधिकारिक भाषा के रूप में हिंदी को पूर्ण स्वीकृति मिल जाएगी।

प्रास्ताविकी वक्तव्य में विदेश राज्यमंत्री वी. मुरलीधरन ने कहा कि फिजी हिंदी के लिए उर्वर भूमि है, यह देखकर मन बड़ा प्रफुल्लित है। भारत सरकार फिजी में भाषा प्रयोगशाला की स्थापना करेगी, जो यहाँ के हिंदी प्रेमियों के लिए उपहार होगा। यहाँ १९७९ ई. से हिंदी आधिकारिक भाषा है। यह सम्मेलन हिंदी को भावनात्मक धरातल से उठाकर पर विज्ञान तक पहुँचाने का उपक्रम है। हिंदी को वैश्विक भाषा बनाने की दिशा में सतत प्रयास किए जाएँगे।

हिंदी विद्वानों/संस्थाओं को किया गया सम्मानित

परंपरा के अनुरूप सम्मेलन के समापन समारोह के दौरान देश-विदेश में हिंदी के प्रचार, प्रसार व विकास के लिए काम कर रहे ३५ विद्वानों व संस्थाओं को विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर ने 'विश्व हिंदी सम्मान' से सम्मानित किया। भारतीय विद्वानों में सर्वश्री सूर्य प्रसाद दीक्षित (समालोचक, लेखक, हिंदीसेवी, उ.प्र.), संतोष तनेजा (प्रशासनिक सेवाओं में हिंदी, दिल्ली), मनोहर भंडारी (चिकित्सा एवं पर्यावरण में हिंदी, म.प्र.), नारायण कुमार (हिंदी सेवी, उ.प्र.), जवाहर कर्नावट (संचार माध्यमों में हिंदी, म.प्र.), त्रिभुवन नाथ शुक्ल (लेखक, व्याखाता, म.प्र.), नंदकिशोर पांडेय (हिंदी सेवी, राजस्थान), कुलदीप चंद अग्निहोत्री (प्रसिद्ध लेखक, साहित्यकार, हिंदी सेवी, पंजाब), ए. भवानी (हिंदी लेखक, शोधकर्ता, हिंदी सेवी, तमिलनाडु), सी. कामलौवा (लेखक, हिंदी सेवी, मिजोरम), जुम्सी सिराम (उपन्यासकर, लेखक, हिंदी सेवी, अरुणाचल प्रदेश), पोलिशेट्टि ओबय्या (लेखक, हिंदी सेवी, आंध्र प्रदेश), केरल हिंदी प्रचार सभा, असम राष्ट्रभाषा प्रचार समिति (पूर्वोत्तर)। विदेशों में हिंदी सेवा करने वाले हिंदी मनीषियों को भी सम्मानित किया गया, जिसमें सर्वश्री ओवाल यूसुफ अलीयु (नाइजीरिया), उषा प्रियंवदा (अमेरिका), मोहन राणा (यू.के.), मृदुल कीर्ति (ऑस्ट्रेलिया), मिकी यूइचिरो (जापान), शैलजा सक्सेना (कनाडा), पट्टामा सवांगश्री (थाईलैंड), जैरोस्लाव स्ट्रनाड (चेक गणराज्य), मोनिका ब्रोवार्क्जिक (पोलैंड), संध्या सिंह (सिंगापुर), देव शरमन (सूरीनाम), उषा ठाकुर (नेपाल), जरीना रहमतुलोएवा (ताजिकिस्तान), रवींद्र महाराज (त्रिनिदाद), इंदु चंद्रा (फिजी), भुवन दत्त (फिजी), ऑलिवर हेलविंग (जर्मनी), मक्सिम देम्चेंको (रूस), नीलूफर खोजाएवा (उज्बेकिस्तान), थाई भारत सांस्कृतिक लॉज (थाईलैंड), हिंदी शिक्षा संघ (द. अफ्रीका)।

फिजी गणराज्य के शिक्षामंत्री असेरी रेड्रोड्रो ने स्वागत वक्तव्य में कहा कि उनकी सरकार ने हिंदी भाषा को बहुत महत्त्व दिया है। उद्घाटन समारोह में विशेष डाक टिकट जारी किया गया। इस अवसर पर सम्मेलन स्मारिका, गगनांचल, विश्व भारतीय साहित्य, राजभाषा भारती व आरंभिका के विशेषांकों और 'फिजी का हिंदी साहित्य' शीर्षक पुस्तक का लोकार्पण फिजी के राष्ट्रपति श्री रातू विल्यम कटोनिवेरे और भारत के विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर ने किया। संचालन अनुराधा पांडेय और अलका सिन्हा ने किया। फिजी गणराज्य के कार्यकारी स्थायी सचिव, शिक्षा मंत्रालय तिमोकी बुरे ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

'पारंपरिक ज्ञान से कृत्रिम मेधा तक' विषय पर आयोजित संयुक्त सत्र के सह-अध्यक्ष विदेश राज्य मंत्री वी. मुरलीधरन ने कहा है कि विश्व हिंदी सम्मेलनों की परंपरा में यह पहली बार है कि पारंपरिक ज्ञान और टेक्नोलॉजी कदम-से-कदम मिलाकर चल रही है। सबको साथ लेकर चलना भारतीय संस्कृति की विशेषता है। यह विषय हमारी समृद्ध विरासत को प्रकट करता है। साथ ही संकेत देता है कि हमारी सभी भाषाएँ तकनीक के साथ जुड़ रही हैं।

हिंदी कृत्रिम मेधा के साथ काम करने में सक्षम है क्योंकि कंप्यूटर हिंदी भाषा को पहचानता है। इसका उदाहरण एलेक्सा, रोबोट है। यह ज्ञान-विज्ञान के सभी माध्यमों में कार्य करने का सशक्त माध्यम है। भारत विश्व स्तर पर मजबूत हो रहा है। जब कोई देश मजबूत होता है तो उसकी भाषाएँ भी सशक्त होती हैं। आज पूरी दुनिया एक परिवर्तन से गुजर रही है, जिसमें डिजिटल क्रांति की अहम भूमिका है। नई शिक्षा नीति में मातृभाषा में शिक्षा की बात कही गई है। कौशल विकास की पढ़ाई हिंदी में कराई जा रही है। प्रधानमंत्री मोदीजी आर्टिफिशियल इंटैलिजेंस के क्षेत्र में ग्लोबल हब बनाने की बात कर चुके हैं। पारंपरिक ज्ञान, समर्थ भाषा और समर्थ तकनीक सब तक पहुँचे, यही इस सम्मेलन का उद्देश्य है।

सत्र के सह-अध्यक्ष गृहराज्य मंत्री अजय कुमार मिश्र ने कहा कि भारत संभावनाओं का देश है। उन्होंने जेनेवा में हुए सम्मेलन का जिक्र करते हुए हिंदी की विभिन्न शोध परियोजनाओं के बारे में बताया तथा हिंदी की वैश्विक प्रगति के प्रति विश्वास व्यक्त किया। इस असवर पर शिक्षाविद्, शिक्षा-संस्कृति उत्थान न्यास के सचिव श्री अतुल कोठारी ने कहा कि भारतीय ज्ञानपरंपरा सिर्फ भारत के लिए नहीं अपितु पूरे विश्वे की आवश्यकता है। इसने दुनिया को गिनना सिखाया है। आत्मनिर्भरता के स्तर पर भारत को आगे बढ़ाना है तो पारंपरिक ज्ञान बहुत आवश्यक है। भारतीय ज्ञान-परंपरा को आज के संदर्भ में ढालने की जरूरत है और इन सबको हिंदी में पढ़ाने की जरूरत है। केवल कंप्यूटर और कृत्रिम मेधा ही सबकुछ नहीं है, इसके साथ विवेक का प्रयोग भी करना होगा एवं भारतीय परंपरा के ज्ञान को समन्वित करना होगा। इसका माध्यम हिंदी, संस्कृत और भारतीय भाषाओं को बनाना चाहिए, तभी हम दुनिया को नया कुछ दे पाएँगे।

जनजातीय विश्वविद्यालय, आंध्र प्रदेश के कुलपति प्रो. टी. कट्टिमनी ने कहा कि हमें यह निस्संकोच स्वीकार करना चाहिए कि भारतीय भाषाओं की स्थिति अच्छी नहीं है। भारतीय भाषाओं के साथ हमारी संवेदनाएँ जुड़ी हुई हैं। हर सरकार की कुछ प्राथमिकता होती है। वर्तमान सरकार की प्राथमिकता कौशल प्राप्त करना है। एन.ई.पी. का यही कहना है कि भारतीय शिक्षा को तकनीक में लाना है। आज सब बदल गया है लेकिन हिंदी का सिलेबस अब तक नहीं बदला है। हिंदी के पाठ्यक्रम में कौशल, एंड्रायड, तकनीक नहीं है। एन.ई.पी. मल्टीडिसिप्लनरी एजुकेशन की बात करती है। पहले प्राध्यापकों को कंप्यूटर की शिक्षा लेनी पड़ेगी। हमको अपडेट होने की जरूरत है। लोकल सक्सेस स्टोरी को किताबों में लाए जाने की जरूरत है। डिमांड एंड सप्लाई को देखना होगा। हर बच्चे को एम.ए. के बाद चार-पाँच स्किल्स आने चाहिए। गांधीजी ने कहा था कि दिमाग और हाथ साथ चलने चाहिए। मोदीजी कह रहे हैं कि आज दिमाग, हाथ और हृदय, तीनों साथ चलने चाहिए। हमें सीमाओं में नहीं रहना चाहिए, अपने विषय की सीमाओं से बाहर आना चाहिए। उन्होंने शिक्षकों और लेखकों से आह्वान किया कि वे स्वयं को तकनीक से जोड़े, क्योंकि जिस भाषा में अन्न कमाने की शक्ति है, उसे सरकार को प्रमोट करने की आवश्यकता नहीं है।

सम्मेलन समिति के सदस्य व जे.एन.यू. के भारतीय भाषा केंद्र के अध्यक्ष प्रो. सुधीर प्रताप सिंह ने कहा, हिंदी ने कृत्रिम मेधा का प्रयोग करते हुए पारंपरिक ज्ञान को जनसामान्य तक पहुँचाया। भारतीय ज्ञानपरंपरा अपने धार्मिक एवं सांस्कृतिक वैशिष्ट्य के कारण से अलग है। भारतीय परंपरा संवादमूलक रही है। भारतीय ज्ञान-परंपरा ने वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना का प्रसार किया है, जबकि पाश्चात्य संस्कृति में ज्ञानशक्ति का प्रतीक है। कृत्रिम मेधा मानव बुद्धि की प्रतिकृति है। हिंदी विश्व की तीसरी सबसे बड़ी भाषा है। तकनीक ने इसे विश्व के कोने-कोने तक पहुँचाया है।

सम्मेलन समिति सदस्य व माइक्रोसॉफ्ट में भारतीय भाषाओं के

प्रभारी श्री बालेंदु शर्मा दाधीच ने आर्थर सी क्लार्क को उद्धृत करते हुए कहा कि कोई भी पर्याप्त रूप से विकसित पद्धति किसी जादू से कम नहीं होती है। कई तकनीकों ने हमारी दुनिया बदल दी है—१. प्रिंटिंग प्रेस, २. भाप इंजन, ३. बिजली, ४. पी.सी. और ५. इंटरनेट/वेब; तकनीक हमारे जिंदगी का अहम हिस्सा है। कृत्रिम मेधा को स्पष्ट करते हुए उन्होंने भाषा के क्षेत्र में उसके प्रयोग पर प्रकाश डालते हुए कहा कि तकनीक के क्षेत्र में पैदा होनेवाली प्रश्नों का जवाब नयी तकनीक ही दे रही है। आज प्रौद्योगिकी हमारी मदद के नए तरीके खोज रही है। भविष्य में चैटजीपीटी साहित्य का अनुवाद करने में सक्षम होगी। कृत्रिम मेधा के जरिए अनुवाद संभव है। कृत्रिम मेधा भविष्यवाणी कर सकती है। आर्टिफिशियल इंटैलिजेंस के बहुत लाभ हैं—समय की बचत, हिंदी डिक्टेशन, अनुवाद, स्वत: डिजाइन, व्यक्तिगत सहायक और दिव्यांग जन जो हिल-डुल भी नहीं सकते हैं, वे भी कृत्रिम मेधा की मदद से केवल देखकर टाइप कर सकते हैं। हिंदी में तकनीक की संभावनाएँ असीम हैं, जिसमें कृत्रिम मेधा का बहुत महत्त्व है। अरुणाचल प्रदेश के डॉ. तुमबोम रीबा ने पूर्वोत्तर भारत के अनूठे राज्य अरुणाचल प्रदेश के भाषायी वैविध्य की विशिष्टता को उजागर करते हुए कहा कि पारंपरिक ज्ञान आधुनिक तकनीक से संपन्न विश्व के लिए अमूल्य वरदान है। शासकीय महाविद्यालय, दोईमुख, ईटानगर के सहायक प्राध्यापक डॉ. तादाम रुति ने बताया कि आधुनिक तकनीक में कृत्रिम मेधा का बहुत महत्त्व है, इस क्षेत्र में बहुत से शोध कार्य हो रहे हैं। इस अवसर पर 'कंठस्थ २.०' मोबाइल एप और 'केंद्रीय हिंदी संस्थान की पत्रिका के फिजी विशेषांक का लोकार्पण किया गया। साँची विश्वविद्यालय के डॉ. देवेंद्र सिंह ने संचालन किया।

'गिरमिटिया देशों में हिंदी' विषय पर आयोजित समानांतर सत्र की अध्यक्षता करते हुए डॉ. सुरेश ऋतुपर्ण ने कहा, एक ही जहाज में चढ़ने वाले सभी लोग जहाजी भाई थे, जो धर्म, जाति, संप्रदाय की संकीर्णताओं से परे थे। यहाँ पर जो भी लोग आए, वे अपने साथ रामचरितमानस लेकर आए। राम का १४ वर्ष का वनवास समाप्त हो गया था, पर इन लोगों का वनवास कभी समाप्त नहीं हुआ। पग-पग पर रामायण ही उनके काम आई। इन्होंने जीवन के अर्थ रामायण के सहारे संपूर्ण किए। गिरमिटिया देशों की अलग-अलग हिंदी है। खानपान और संस्कृति के कई विविध रूप इन देशों की भाषाओं में मिलते हैं। फिजी वह देश है, जहाँ १९१६ ई. में गिरमिट प्रथा की समाप्ति का बिगुल फूँका गया था। डॉ. एस. प्रीति (तमिलनाडु) ने गिरमिटिया देशों में प्रवासी साहित्य और समाज के दृष्टिकोण को प्रतिपादित करते हुए साहित्य में समाज की उपस्थिति, उनके दु:ख-दर्द, उनकी पीड़ा और संवेदनाओं के संदर्भ में विस्तार से चर्चा की। डॉ. डी.एन. राव (तमिलनाडु) ने कहा कि रामचरितमानस का गिरमिटिया लोगों के जीवन पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। भाषा ही माध्यम है, जो व्यक्ति को समाज से जोड़ती है। प्रो. वंदना झा ने गिरमिटिया देशों में कविता के माध्यम से हिंदी की संभावनाओं पर प्रकाश डालते हुए कविताओं में उभरी संवेदनाओं और अनुभव की गूढ़ता को रेखांकित किया। प्रो. योगेंद्र प्रताप सिंह ने गिरमिटिया देशों में हिंदी की स्थिति और दशा-दिशा पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हिंदी ही वह माध्यम है, जो हमें एकसूत्र में पिरोकर रखती है। श्री राकेश पांडे ने संचालन किया।

'फिजी और प्रशांत क्षेत्र में हिंदी' विषय पर आयोजित समानांतर सत्र की अध्यक्षता करते हुए फिजी गणराज्य के पूर्व प्रधानमंत्री और भारतवंशी श्री महेंद्र चौधरी ने कहा कि फिजी में हिंदी के स्थायित्व के लिए यहाँ के स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई अनिवार्य करने की जरूरत है। खासकर प्राइमरी स्कूल में अनिवार्यत: हिंदी पढ़ाई जानी चाहिए। इसके लिए भारत सरकार को भी राजनयिक स्तर पर पहल करने की जरूरत है। पहले फिजी में चार अखबार निकलते थे, अब एक भी नहीं है। मानक हिंदी की स्थिति को भी हमें गंभीरता से लेना होगा। बोलचाल की हिंदी भी चले और मानक हिंदी भी। इससे हिंदी की समृद्धि व ताकत और बढ़ेगी। चुनाव, उत्सव-त्योहार, विवाह और पूजा के साथ-साथ हिंदी रोजगार की भाषा भी बनानी होगी, वरना अंग्रेजी के वर्चस्व को कम करना संभव नहीं हो पाएगा। डॉ. इंदु चंद्रा (फिजी) ने प्रशांत क्षेत्र में हिंदी के विविध परिदृश्यों पर विचार रखते हुए वहाँ की समकालीन रचनाशीलता पर प्रकाश डाला। डॉ. सुभाषिनी लता (फिजी) ने कहा कि हमारे पूर्वजों ने अपनी मेहनत और बलिदान से अपनी-अपनी गिरमिट जमीन को समृद्ध किया, इस पर हम सबको गर्व है। उन्होंने तोताराम सनाढ्य के योगदान को रेखांकित करते हुए उनके लेखन को प्रवासी हिंदी साहित्य का आरंभिक बिंदु माना। उन्होंने फिजी के महत्त्वपूर्ण हिंदी साहित्यकारों और उनकी कृतियों पर भी चर्चा की। लेखक पंडित भुवन दत्त ने फिजी में हिंदी की चुनौतियों पर बात करते हुए कहा कि नई पीढ़ी के बच्चों और उनके अभिभावकों में हिंदी के प्रति अरुचि और उदासीनता चिंताजनक है। सरकार की तरफ से भी हिंदी को कोई प्रोत्साहन नहीं मिल पाता। शिक्षार्थियों को ध्यान में रखते हुए हिंदी पाठ्यपुस्तकों एवं

आकर्षण का केंद्र रहा अखबार का प्रकाशन

विदेश मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन के लिए महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के कुलपति प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल को सम्मेलन का समाचार बुलेटिन 'हिंदी विश्व' के प्रधान संपादक के रूप में संयोजकत्व की महती जिम्मेदारी मिली थी। कार्यकारी संपादक के रूप में प्रो. विनोद कुमार मिश्र, समन्वयक संपादक के रूप में प्रो. कृपाशंकर चौबे और संपादन सहयोगी के रूप में सर्वश्री चंद्रकांत एस. रागीट, अनिल कुमार राय, प्रीति सागर, अवधेश कुमार, अखिलेश कुमार दुबे, शिरीष पाल सिंह, प्रियंका मिश्र, सुनील कुमार, योगेंद्र बाबू, राजेश कुमार यादव, अमित कुमार विश्वास, पवन कुमार, अंजलि हजगैबी बिहारी, उर्वशी गहलौत, राजेश कुमार 'माँझी' ने अपने दायित्वों का निर्वहन किया। सम्मेलन के दौरान अखबार 'हिंदी विश्व' का खासा आकर्षण रहा।

पाठ्यक्रमों की समीक्षा होती रहनी चाहिए। वरिष्ठ साहित्यकार श्री मनहर नारसी (फिजी) ने हिंदी को सरल, सहज और व्यावहारिक बनाने पर जोर देते हुए कहा कि भारत सरकार पूरे विश्व में हिंदी के पठन-पाठन को सुगम और उपयोगी बनाने के लिए पहल करे। आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस कभी भी इनसानी दिमाग की जगह नहीं ले सकता है।

प्रो. एस.वी.एस.एस. नारायन राजू ने दक्षिण भारत क्षेत्र की हिंदी के परिदृश्य पर बातें कीं। सत्र के सह-अध्यक्ष केंद्रीय हिंदी संस्थान, आगरा के उपाध्यक्ष अनिल जोशी ने कहा कि गिरमिटिया देशों में केवल फिजी ही ऐसा देश है, जहाँ की हिंदी सबसे जीवंत है। आज यहाँ विश्व हिंदी सम्मलेन हो रहा है, इसमें फिजी के हिंदी भाषियों का बड़ा योगदान है। फिजी हिंदी और फिजीवाद फिजी की ताकत है, लेकिन मानक हिंदी को बढ़ावा देना भी जरूरी है। संचालन प्रो. विनोद कुमार मिश्र और धन्यवाद ज्ञापन डॉ. विवेकानंद उपाध्याय ने किया। सत्र के अंत में 'प्रवासी भारत' पत्रिका के नए अंक का लोकार्पण भी किया गया।

'सूचना प्रौद्योगिकी और २१वीं सदी की हिंदी' विषयक समानांतर सत्र की अध्यक्षता करते हुए त्रिपुरा केंद्रीय विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. गंगा प्रसाद परसाईं ने कहा कि हिंदी भाषा व साहित्य को डिजिटल प्लेटफॉर्म पर बढ़ावा देना चाहिए। आज सारा ज्ञान-विज्ञान डिजिटल हो रहा है। ऐसे में हिंदी के विकास के लिए सूचना तकनीक का उपयोग करना है। पूर्वोत्तर भारत की कई भाषाएँ रोमन लिपि में लिखी जाती हैं। इन भाषाओं को देवनागरी लिपि में लिखने का प्रावधान होना चाहिए। राष्ट्रीय शिक्षा नीति-२०२० में भारतीय भाषाओं के माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था की गई है, इसके उत्साहजनक परिणाम आएँगे। प्रो. नरेंद्र मिश्र ने कहा कि आज का युग सूचना प्रौद्योगिकी का युग है। आज जिसकी तकनीक पर पकड़ अच्छी है, वह लाभ की स्थिति में है। सूचना तकनीक ने हिंदी के विस्तार को व्यापक फलक प्रदान किया है। सूचना प्रौद्योगिकी के कारण ट्विटर, फेसबुक आदि की भाषा के रूप में हिंदी की पहुँच बढ़ रही है। डिजिटल मीडिया में भारतीय भाषाओं की पहुँच बढ़ी है। हिंदी वेब पोर्टल, वेब दुनिया की शुरुआत ने इस दिशा में पहला कदम बढ़ाया था। आज हिंदी के अनेक सर्च इंजन उपलब्ध हैं। सूचना प्रौद्योगिकी के कारण ही हिंदी विश्व भाषा बन पाई है। केरल की डॉ. पी. प्रिया ने कहा कि दु:ख की बात है कि १९७५ से आज तक हिंदी विश्व भाषा का दर्जा नहीं ले पाई है। भारत विश्वगुरु का स्थान ले पाएगा, ऐसा विश्वास है। इसके लिए हिंदी की बड़ी भूमिका होगी और इसके लिए यह संकल्प लिया जाना चाहिए कि संपूर्ण विश्व में हिंदी भाषा का प्रचार-प्रसार हो।

डॉ. शंभू प्रभुदेसाई ने कहा कि सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग जीवन के विविध क्षेत्रों में हो रहा है। वाणिज्य, मनोरंजन, खेल आदि सभी क्षेत्रों में हिंदी का चलन बढ़ा है। भारत सरकार हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए सूचना प्रौद्योगिकी का सक्रिय उपयोग कर रही है। संचार क्रांति ने दुनिया को मुट्ठी में कर लिया है। पुस्तकालय, शिक्षा, विज्ञान आदि क्षेत्रों में तकनीकी का प्रयोग बढ़ा है, हिंदी विश्व भाषा बनने की ओर अग्रसर है। डॉ. अनुराग शर्मा ने सूचना प्रौद्योगिकी और सोशल मीडिया पर अपनी बात रखते हुए कहा कि भविष्य की हिंदी अधिक गतिशील और भविष्योन्मुखी हो, इसके लिए सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग अत्यंत आवश्यक है। सुखद बात है कि संचार माध्यमों में हिंदी का प्रचार तेजी से बढ़ रहा है। हिंदी समन्वय समिति, अमरीका के डॉ. राकेश कुमार ने कहा कि हम लोग सूचना प्रौद्योगिकी के माध्यम से हिंदी भाषा के शिक्षण-प्रशिक्षण की दिशा में बहुत सार्थक तरीके से आगे बढ़ रहे हैं। हमारी संस्था सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग से हिंदी भाषा के प्रचार-प्रसार में बहुत सक्रिय भूमिका निभा रही है। सत्र के सह-अध्यक्ष डॉ. उदय प्रताप सिंह ने कहा कि अब यह बात पुरानी हो गई है कि हिंदी में विज्ञान और तकनीकी शिक्षा के लिए शब्द नहीं हैं। आज यह बात सूचना प्रौद्योगिकी के कारण आसानी से संभव हो गई। सूचना प्रौद्योगिकी ने हिंदी का विकास संभव बनाया है। संचालन और आभार ज्ञापन डॉ. पद्मप्रिय श्रियमकवाचम ने किया।

'मीडिया और हिंदी का विश्वबोध' विषयक सत्र की अध्यक्षता करते हुए प्रो. राममोहन पाठक ने कहा कि 'सत्य हरिश्चंद्र' नाटक को आठ बार देखने का अनुभव गांधीजी को सत्य एवं अहिंसा की प्रेरणा दे गया, जिसे गांधीजी ने पूरे विश्व में फैलाया। आज के संचार माध्यमों ने हिंदी के विश्वबोध को बढ़ाया है। पांचजन्य के संपादक हितेश शंकर ने कहा कि जब कीमत चुकाई जाती है, तब मूल्य पैदा होता है। जो हिंदी का स्वभाव है, वही विश्व का भाव है। विनोबा भावे के माध्यम से प्रकृति, विकृति एवं संस्कृति की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि हम संस्कृति को स्वीकार करते हैं, जो त्याग और समर्पण की परिचायक है तथा विश्वबंधुत्व का पाठ पढ़ाती है। आज जो मन का औदार्य है, वही हिंदी का भाव है। डॉ. नीरजा माधव ने कहा कि भारत में जो तकनीक और मीडिया है, वह बहुत पुराना है। भागवतपुराण और दुर्गासप्तशती से संदर्भों का उल्लेख करते हुए कहा कि हिंदी सर्वदा से विश्वबोध देती रही है। हमारी संस्कृति एवं विशेष

रूप से हमारी संगीत परंपरा को जानने के लिए विदेशों से ही लगातार लोग आते रहे हैं। हिंदी में संबंधों की दुनिया के शब्द चाची, काकी, मौसी, बुआ, पड़ोसी आदि अनेक शब्दों के लिए अंग्रेजी में एक शब्द व्यवहार में लाया जा रहा है, वह शब्द है—आंटी। आंटी शब्द ने कई संबंधों को सीमित किया है। यह एक तरह से शब्दों के साथ हिंसा हो रही है।

प्रो. मिथिलेश मिश्र ने कहा कि हिंदी को लेकर हीनभावना से न तो ग्रसित हों, न कुंठित हों, पर अंग्रेजी को लेकर दुराव का भाव नहीं होना चाहिए। हिंदी के स्वाभिमान को वैश्विक स्तर पर फैलाना है। आज मीडिया को मूल्यपरक होना चाहिए। डॉ. पी. राजरतनम ने कहा कि आज दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के माध्यम से दक्षिण में लोग हिंदी सीख रहे हैं और विकास भी कर रहे हैं। मीडिया के प्रसार तंत्र ने हिंदी को पूरे विश्व में फैलाया है। आज उसकी माँग निरंतर बढ़ती जा रही है। डॉ. रेनू सिंह ने 'मीडिया और हिंदी के विश्वबोध' विषय पर अपने विचार रखे कि आज मीडिया ने हिंदी को विश्व स्तर पर फैलाया है। सत्र के सह-अध्यक्ष श्रीधर पराडकर ने कहा कि अपने मूल्यों को संरक्षित रखते हुए हमें हिंदी के विश्वबोध को विस्तार देना है। दिल्ली विश्वविद्यालय की प्रो. कुमुद शर्मा ने विषय प्रवर्तन करते हुए कहा कि पहले हम हिंदी प्रेम से सीखते थे। आज बाजार के माध्यम से हिंदी सीख रहे हैं। मीडिया ने हिंदी को वैश्विक स्तर पर पहचान दी है। वक्ता प्रो. कामेश्वर सिंह ने भी मीडिया के स्वरूप पर विस्तार से चर्चा की और हिंदी के विश्वबोध से परिचित कराया।

फिजी के प्रधानमंत्री की भारत के विदेश मंत्री के साथ बैठक

फिजी के प्रधानमंत्री श्री सितिवेनी एल. रमबुका और श्रीमती रमबुका ने भारत के विदेश मंत्री डॉ. एस. जयशंकर के साथ बैठक कर १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन के संदर्भ में जानकारी प्राप्त की। बैठक के दौरान विदेश राज्यमंत्री श्री वी. मुरलीधरन, भारत के गृहराज्य मंत्री श्री अजय कुमार मिश्र व भारतीय सांसद सर्वश्री जनार्दन सिंह सीग्रीवाल, श्याम सिंह यादव, रामचंद्र जांगड़ा, महुआ मांझी, अशोक कुमार आदि उपस्थित रहे।

विश्व हिंदी सम्मेलन के दूसरे दिन 'भारतीय ज्ञान परंपरा का वैश्विक संदर्भ और हिंदी' विषय पर आयोजित सत्र की अध्यक्षता करते हुए महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा के कुलपति प्रो. रजनीश कुमार शुक्ल ने कहा कि हिंदी लोक अनुभव को शास्त्र अनुभव में अतिक्रांत करने की भाषा है। ज्ञान की कोई सीमा नहीं है। सकल ज्ञानराशि ही वेद है। भारतीय ज्ञान-परंपरा के विविध वितान हैं। समस्त भारतीय भाषाओं में सन्निहित ज्ञानराशि का उपयोग सभ्यतागत संकटों से मुक्ति के लिए किया जाना चाहिए। गीता में कहा गया है कि ज्ञान से अधिक पवित्र कारक कोई नहीं है। उन्होंने आनंदकुमार स्वामी के लेख का संदर्भ देते हुए कहा कि यह विचार किया जाना चाहिए कि भारतीय ज्ञान-परंपरा ने विश्व सभ्यता को क्या दिया? उन्होंने भारतीय ज्ञान परंपरा में निहित लोकज्ञान और अनुभव अर्जित ज्ञान को शास्त्रीय बनाए जाने की बात कही। यह लोक के सैद्धांतीकरण की प्रक्रिया है। भारतीय ज्ञान परंपरा सत्य और नैतिकता के साथ जुड़ी हुई है। भारत की सभी भाषाओं में अकूत ज्ञानराशि सन्निहित है। इस समय दुनिया की सभ्यता दृष्टि व्याघातों से घिरी है। इसलिए विश्व सभ्यता को वैकल्पिक सभ्यता दृष्टि देने के लिए हिंदी को साधुमत और लोकमत को ध्यान में रखना होगा।

सत्र के सह-अध्यक्ष प्रो. योगेंद्र मिश्र (काशी) ने विषय प्रवर्तन करते हुए कहा कि तुलसी भारतीय ज्ञान-परंपरा के आधार स्तंभ हैं और रामचरितमानस विश्व परिवार की आचार संहिता है। वक्ता डॉ. इंदुशेखर तत्पुरुष ने भारतीय ज्ञान-परंपरा के दो रूपों की चर्चा की—ज्ञान-परंपरा और कला-परंपरा। उन्होंने योग और आयुर्वेद को भारतीय ज्ञान-परंपरा का अनुप्रयोगात्मक पक्ष बताया और कहा कि लोक प्रेरक के साथ लोकसेवकों को अपनी भूमिका निर्वहन के लिए आगे आना चाहिए। केरल की डॉ. के. श्रीलता ने दंडी को उद्धृत करते हुए कहा कि भारतीय ज्ञान-परंपरा निरंतर प्रवहमान है और हिंदी ने भारतीय ज्ञान-परंपरा को अकूत शक्ति दी है। हिंदी वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना को साकार कर रही है। हिंदी भाव-सागर की भाषा है, को उल्लेखित करते हुए डॉ. सुरेंद्र बिहारी गोस्वामी बोले, हिंदी ने भारतीय ज्ञान-परंपरा को निरंतर समृद्ध किया है। चेन्नई के श्री श्रीकांत कन्नन ने कहा कि हिंदी की वास्तविक स्थिति के बारे में सोचना चाहिए और आने वाली पीढ़ी को सरल हिंदी के माध्यम से भारतीय ज्ञान-परंपरा से परिचित कराना चाहिए। डॉ. पद्मावती ने कहा कि बाजार ही समाज को संचालित करता रहा है। हिंदी को विश्व बाजार से जोड़ने की जरूरत है। संचालन प्रो. परमानंद भारद्वाज ने किया।

'भाषाई समन्वय और हिंदी अनुवाद' विषय पर आयोजित समानांतर सत्र की अध्यक्षता करते हुए सागर केंद्रीय विश्वविद्यालय के कुलाधिपति प्रो. बलवंत शांतिलाल जानी ने कहा कि आज ऐसी राष्ट्रीय योजनाएँ बनी हैं कि हम अपनी भाषा के साथ-साथ दुनिया की अन्य भाषाओं को भी सीख-समझ सकते हैं। यहाँ तक कि अनुवाद के कारण रूसी एवं विश्व की अन्य भाषाओं में भी संवाद संभव हो पाया है। हमारी प्राचीन सभ्यता में तो सभी भाषाएँ एक साथ थीं ही, फिर आज सभी भाषाओं को समन्वित करने का प्रश्न आया, यह विचारणीय है। देश के लिए भाषा का कोई एक स्वरूप निश्चित करने की जब बात आई, तो हिंदी और हिंदुस्तानी में बहस हुई। हिंदुस्तानी भाषा की जड़ें अरबी-फारसी में थीं और हिंदी की संस्कृत, मागधी, प्राकृत में। अंतत: हिंदी भाषा का चुनाव हुआ, जिसकी जड़ें भारतीय थीं। इसलिए भाषा का प्रवाह बढ़ा है, हमें अपनी भाषा की जड़ें जानना आवश्यक है। शिक्षाविद् प्रो. ए.डी.एन. वाजपेयी ने कहा कि अनुवाद के बारे में दो तरह की धारणाएँ हैं—पहला, अनुवाद होना ही नहीं चाहिए और दूसरा, सब चीजों का अनुवाद होना चाहिए, यानी एक पूर्णरूपेण नकार और दूसरा पूर्णरूपेण सकार। हमारे बीज मंत्र ॐ का अनुवाद नहीं हो सकता है, उसके तो उच्चारण मात्र से ही कल्याण हो जाता है। धर्म शब्द का अनुवाद हो ही नहीं सकता। जैसे दर्शन का अर्थ देखना है, किंतु केवल देख लेने मात्र से दर्शन नहीं होता।

जब अदृश्य का दर्शन होता है तो दर्शन कहलाता है। जहाँ मनोविज्ञान थमता है, वहाँ दर्शन दिखता है।

शिक्षा विभाग के हिंदी भाषा विकास परिषद् के निदेशक व दिल्ली विश्वविद्यालय के सिंधी भाषा विभाग के प्रो. रवि प्रकाश टेकचंदानी ने कहा कि भाषाई समन्वय और हिंदी के अनुवाद को मैं सॉफ्ट पॉवर के रूप में देखता हूँ। हमारी प्राचीन परंपरा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' वाली है। इस शब्द में ही समन्वय है। हमें यह समझने की आवश्यकता है कि भाषा के साथ उसके अंतर्मन का भी समन्वय हो। सिंध की सिंधी और भारत की सिंधी अलग क्यों है, उसका भी समन्वय होना चाहिए। लगभग सभी भारतीय भाषाओं के शब्द भंडार एक जैसे हैं। ऐसे में भाषा, साहित्य, भूगोल एवं अन्य विषयों के मध्य समन्वय करना भी आवश्यक है। विश्व हिंदी सम्मेलन के इस मंच से मैं यह आग्रह करता हूँ कि भविष्य में जितनी भी पुस्तकें प्रकाशित हों, वे द्विभाषी हों, जिसमें एक भाषा हिंदी ही हो, अध्यापन भी द्विभाषी हो। आई.आई.टी., बॉम्बे के सेंटर फॉर डिजिटल हेल्थ के अध्यक्ष प्रो. गणेश रामाकृष्णन ने कहा कि शिक्षा में भाषा की बाधा को तोड़ना हमारा लक्ष्य है। न्यूनतम समय में अनुवाद और सामग्री निर्माण कैसे हो, इसके लिए समावेशी प्रक्रिया जरूरी है। शब्दकोश के अनुरूप अनुवाद हो, जिससे अनुवाद की गुणवत्ता सुसंगत हो। अनुवाद करते समय हमें अपने भारतीय ग्रंथों में पाए जानेवाले शब्दकोश को प्राथमिकता देना आवश्यक है, जिससे हमारी प्राचीन ज्ञान-परंपरा का पुनरुत्थान हो। पारंपरिक ज्ञान एवं कृत्रिम मेधा के संगम के लिए हमने संशोधन किए और टूल्स उपलब्ध करवाए हैं। लेखक एवं अनुवादक प्राचार्य भूषण भावे ने कहा कि पारंपरिक ज्ञान से कृत्रिम मेधा तक हमें दो स्तरों पर कार्य करना है—पहला, दुनिया की समस्याओं को हमें पारंपरिक ज्ञान से ही सुलझाना है और दूसरा, इसका डिकोडिंग कर कृत्रिम मेधा का उपयोग कर पुरखों की ज्ञान या परंपरा, जिसे हम भूल गए थे, उसे वापस जिंदा करना है। भाषाई समन्वय हमें पश्चिम से सीखने की आवश्यकता नहीं है। भाषा के नाम पर विवाद हमारी संस्कृति नहीं है। इस सत्र का संचालन प्रो. किरण हजारिका ने किया।

'हिंदी सिनेमा के विविध रूप : वैश्विक परिदृश्य' विषयक सत्र की अध्यक्षता करते हुए जापान के ओसाका विश्वविद्यालय में हिंदी विषय के प्राध्यापक प्रो. तोमियो मिजोकामी ने 'बोस : द फॉरगॉटन हीरो' फिल्म के दृश्यों और संवादों के माध्यम से संवाद-लेखन और शब्द-चयन की महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा कि हिंदी सिनेमा इसलिए दुनियाभर में प्रसिद्ध हुए, क्योंकि उनमें बोलचाल के शब्दों का उपयोग किया गया है। वरिष्ठ पत्रकार और हिंदी सिनेमा के विशेषज्ञ श्री अनंत विजय ने कहा कि जब भारत हिंदी सिनेमा के प्रारंभिक दौर में था। तब सन् १९३३ में यहाँ बनी फिल्म 'कर्मा' ने वैश्विक मंच पर अपने अभिनय, तकनीक, सिनेमेटोग्राफी, संगीत और दृश्यों की विशिष्टता के कारण खूब प्रशंसा प्राप्त की थी। उन्होंने कहा कि हिमांशु राय और देविका रानी के इस सिनेमा का लंदन में प्रीमियर हुआ था और उसके हर पक्ष पर विचार किया गया था। अभिनेता राज कपूर की फिल्मों के गानों का अनुवाद इजरायल तक में हुआ था। उन्होंने उल्लेखित किया कि भारतीय फिल्मों में निहित नैतिकता के तत्त्व उन्हें पूरी दुनिया में विशिष्ट बनाते हैं। उन्होंने भारतीय निर्देशकों दादा साहब फाल्के, ऋषिकेश मुकर्जी, विमल राय, सत्यजीत रे, व्ही. शांताराम आदि के योगदान का उल्लेख किया। वर्तमान दौर में निर्देशकों की भूमिका सीमित हो गई है और नायकों का बोलबाला हो गया है। इसलिए एक बार पुन: भारतीय सिनेमा में निर्देशकों की भूमिका को पुनर्स्थापित करने की आवश्यकता है।

सांस्कृतिक कार्यक्रम की झलक

उत्तर प्रदेश के पूर्व शिक्षा मंत्री डॉ. रवींद्र शुक्ल ने कहा कि विश्व में हिंदी का परचम लहराने में हिंदी सिनेमा ने अपना पूरा योगदान दिया है। आज दक्षिण भारतीय भाषाओं की फिल्मों की हिंदी में डबिंग इसके प्रमाण हैं कि सभी को हिंदी के दर्शक चाहिए। हिंदी आज बाजार की भाषा है। उन्होंने चिंता व्यक्त की कि हिंदी फिल्मों के अंदर आने वाली विकृतियों ने हमें दुष्प्रभावित किया है। इस पर फिल्म जगत् और समाज के हितैषियों को विचार करने की आवश्यकता है। जलगाँव (महाराष्ट्र) के डॉ. सुनील कुलकर्णी ने बताया कि, हिंदी गीतों ने समाज पर अपना काफी असर छोड़ा है। किसी भी फिल्म में वर्तमान समाज का चित्रण होता है, जिससे एक विमर्श का भी अवसर निर्मित होता है। हिंदी फिल्मों ने हिंदी को बाजार की भाषा बनने में अपना उल्लेखनीय योगदान दिया है। उन्होंने चिंता व्यक्त की कि हिंदी फिल्मों में लिव-इन रिलेशनशिप जैसे विषयों के चित्रण से हमारी परिवार-व्यवस्था को समाप्त करने का षड्यंत्र हो रहा है, इसे रोकने की आवश्यकता है।

ऑस्ट्रेलिया से पधारीं डॉ. रेखा राजवंशी ने 'भारतीय हिंदी सिनेमा का हिंदी शिक्षण में योगदान' विषय पर बोलते हुए कहा कि हिंदी गानों के माध्यम से विद्यार्थियों को हिंदी सिखाना शुरू करती हूँ कि 'सौ साल

पहले मुझे तुमसे प्यार था, आज भी है और कल भी रहेगा' से तीनों काल के बारे में बताती हूँ। फिल्मों के गानों को समझने के लिए विश्वभर में लोगों ने हिंदी सीखी। मौसम से जुड़े शब्दों को समझने के लिए लोग हिंदी सीखते हैं। ऑस्ट्रेलिया के लोग हिंदी फिल्मों को देखकर भारत के पर्व-त्योहारों के बारे में जानते हैं। उन्होंने एक दिलचस्प घटना की चर्चा करते हुए बताया कि एक युवती जब मेरे पास हिंदी सीखने के लिए आई तो मैंने उससे इसका कारण जानना चाहा, तब उसने कहा कि मुझे अपनी सास की बात समझनी है, इसलिए हिंदी सीखना चाहती हूँ। श्रीलंका से पधारीं सुश्री अथिला कोठालवाला ने कहा कि मुझे हिंदी सीखने में हिंदी फिल्मों और उसके गानों से बहुत मदद मिलती है। इस सत्र का संचालन मणिपुर की लेखिका डॉ. आनंदी देवी हरबान ने किया और डॉ. मलखान सिंह ने धन्यवाद ज्ञापित किया।

'विश्व बाजार और हिंदी' विषयक सत्र की अध्यतक्षता शिक्षाविद् प्रो. चमनलाल गुप्ता ने की। सत्र के आरंभ में प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली के श्री प्रभात कुमार ने कहा कि आज देश की १४० करोड़ में से ९० करोड़ जनसंख्या किसी-न-किसी रूप में हिंदी का उपयोग करती है और आज बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ हिंदी की इसी महत्ता को देखते हुए विज्ञापन में हिंदी का उपयोग करने लगी हैं।

भारतीय विदेश सेवा के अधिकारी डॉ. अंजू रंजन ने हिंदी को तकनीक से जोड़ने की बात करते हुए कहा कि आज हिंदी में सॉफ्टवेयर बनाने की जरूरत है। कहीं-न-कहीं बाजार में हम एक उपभोक्ता बनकर रह गए हैं। अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय, भोपाल के कुलपति प्रो. खेमसिंह डेहरिया आज विश्व बाजार को हिंदी की आवश्यकता है, को उल्लेखित करते हुए कहा कि मध्य प्रदेश पहला राज्य है, जहाँ हिंदी में इंजीनियरिंग एवं चिकित्सा पाठ्यक्रमों की शुरुआत की गई है। शिक्षाविद् प्रो. ललित बिहारी गोस्वामी बोले, विश्व बाजार कोई नई संकल्पना नहीं है। बाजार एवं व्यापार के लिए हिम्मत और साख की जरूरत होती है और ये दोनों चीजें आत्मविश्वास और स्वाभिमान से आती हैं। सत्र के सह-अध्यक्ष प्रो. प्रदीप कुमार जोशी ने कहा कि आज सभी विषयों के विशेषज्ञों को हिंदी में अपने-अपने विषय को लिखने की आवश्यकता है। यदि हमें किसी भी राष्ट्र की संस्कृति को समझना है, तो सबसे पहले हमें वहाँ की भाषा को समझना पड़ेगा। प्रो. नंदकिशोर पांडे ने हिंदी में आर्थिक एवं प्रबंधन से जुड़ी पत्रिकाओं की आवश्यकता की बात कही। प्रो. अनिल राय बोले कि हिंदी बाजार की शक्तियों के साथ कदमताल कर रही है। उन्होंने सोशल मीडिया, अनुवाद एवं विज्ञापन में हिंदी की बढ़ती लोकप्रियता की भी बात कही। डॉ. विवेकानंद उपाध्याय ने कहा कि हिंदी केवल बाजार की भाषा के रूप में न जानी जाए बल्कि वह अभिव्यक्ति की अपार संभावनाओं के कारण अपनी वैश्विक स्वीकृति बनाए। डॉ. सूर्यकांत ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि आज मध्य प्रदेश में हिंदी में चिकित्सा की पुस्तकें प्रकाशित होना बहुत बड़ी सफलता है। संचालन डॉ. राजेश्वर ने और धन्यवाद ज्ञापन प्रो. नरेंद्र मिश्र ने किया।

'बदलते परिदृश्य में प्रवासी हिंदी साहित्य' विषयक सत्र की सह-अध्यक्ष प्रो. नीरजा अरुण गुप्ता ने कहा कि प्रवासी हिंदी साहित्य ने अपनी यात्राएँ अनेक पड़ावों से पार की है। गिरमिटिया देशों की हिंदी और उनकी संस्कृति की धमक साहित्य में मजबूती से उपस्थित हो रही है। उनके लेखन में रामायण, महाभारत आदि महाकाव्यों का प्रभाव भी दृष्टिगोचर होता है। फिजी, गयाना, मॉरीशस आदि देशों का साहित्य अपनी प्रगतिशीलता में मुखरित हो रहा है। प्रवासी साहित्यकारों ने हिंदी को अंतरराष्ट्रीय स्वरूप प्रदान किया है। डॉ. विकास दवे ने कहा कि हिंदी साहित्य के अवदान में प्रवासियों के सामाजिक सरोकारों की चर्चा कम होती है। ब्रह्मचर्य की उपयोगिता पर उन्होंने कहा कि महाकाव्यों के मूल मंतव्य को केंद्र में रखते हुए सांस्कृतिक मूल्यों की पड़ताल करनी चाहिए। वर्तमान परिदृश्य में प्रवासी साहित्य में स्त्री विमर्श तेजी से उभरकर आ रहा है। डॉ. वी. जगन्नाथ रेड्डी ने कहा कि प्रवासी साहित्य के संदर्भ में सामाजिक जागरूकता की महती आवश्यकता है। भारतीय प्रवासियों ने हिंदी और भारतीय संस्कृति को संरक्षित रखा है। प्रवासी साहित्यकार अपने जीवन-संघर्षों और अनुभवों की अभिव्यक्ति कर रहे हैं। उनके लेखन की रचना-भूमि अलग है।

प्रवासी साहित्य की जीवन-समृद्धि और प्रासंगिकता के संदर्भ में डॉ. मृदुल कीर्ति (ऑस्ट्रेलिया) ने कहा कि प्रवासियों की मनोदशा उनके लेखन में झलकती है। प्रांतीय भाषाओं में भी प्रवासी साहित्यकारों ने अमृत ग्रंथों पर अपनी रचना की है, जो अपने आप में विलक्षणता लिये हुए हैं। डॉ. विजयानंद ने कहा कि प्रवासियों ने हिंदी को अपनी मिट्‌टी से जोड़े रखा है। आज के युवाओं को भी अपनी मिट्‌टी से यह जुड़ाव बनाए रखना चाहिए। सत्राध्यक्ष प्रो. अरुण कुमार भगत ने कहा कि चित्त में स्थित अनुभूतियों का प्रकटीकरण ही साहित्य है। विभिन्न देशों का प्रवासी साहित्य विभिन्न कारणों से अलग-अलग है। गिरमिटिया देशों के प्रवासी साहित्य में सांस्कृतिक विरासत की झलक मिलती है। जीवन और जगत् की परिस्थितियों के कलह-कोलाहल का प्रभाव भी साहित्य पर पड़ता है और स्वदेश-परदेस का द्वंद्व मन-मस्तिष्क में उमड़ता-घुमड़ता

पुस्तकें लोकार्पित

भारत के विदेश राज्यमंत्री श्री वी. मुरलीधरन ने आचार्य रजनीश कुमार शुक्ल की पुस्तक 'भारतबोध : सनातन और सामयिक', प्रो. हरमहेंद्र सिंह 'बेदी' की पुस्तक 'मौन के व्रत', जयप्रकाश पांडेय की पुस्तक 'दूर नीड़ के पक्षी' तथा 'दरिया के दो पीट', रोहित कुमार हैप्पी की 'प्रशांत की लोककथाएँ' तथा 'न्यूजीलैंड की हिंदी यात्रा', बालेंदु शर्मा दाधीच की 'तकनीक तेरे कितने आयाम', प्रो. रविप्रकाश टेकचंदानी की 'सिंधी की लोकप्रिय कहानियाँ', राजेश कुमार माँझी की पुस्तक 'गिरमिटिया भारतवंशी' तथा 'हिंदी अनुशीलन' पत्रिका के 'दादूदयाल विशेषांक', आदि का लोकार्पण किया।

रहता है। देश, काल और परिस्थिति से उपजी अनुभूतियाँ जब अक्षरित होती हैं, तो वे साहित्य की भूमि बन जाती हैं और समय के साथ परिपक्व होती हैं। समग्रता हमें भारतीय हिंदी साहित्य में दिखाई पड़ती है, लेकिन अस्मितामूलक चेतना का परिपाक प्रवासी साहित्य में उभरकर आया है। प्रवासी साहित्य सांस्कृतिक सेतु का कार्य करता है और भारतीय संस्कृति के मूल्यों को वैश्विक फलक प्रदान करता है। सत्र का संचालन एवं धन्यवाद ज्ञापन डॉ. के.एन. अनीश ने किया।

'देश-विदेश में हिंदी शिक्षण : चुनौतियाँ और समाधान' विषयक सत्र की अध्यक्षता करते हुए अंसुली आर्या ने कहा कि आज हिंदी का प्रयोग बहुतायत से हो रहा है। जब देश के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदीजी हिंदी में बातचीत करते हैं और निर्देश देते हैं तो उनके अधिकारी और आमजन उनसे प्रेरित होकर हिंदी में ही बात और व्यवहार करते हैं। केंद्रीय हिंदी निदेशालय एवं केंद्रीय हिंदी संस्थान हिंदी के शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए कार्य कर रहा है, जिसे वर्तमान में ठीक से क्रियान्वित किया जा रहा है। आज ऑनलाइन पाठ्यक्रम समय की माँग है, जिसे क्रियान्वित करने के लिए सरकार पूर्णत: प्रयासरत है। विदेश मंत्रालय के आई.सी.सी.आर. के द्वारा सांस्कृतिक संबंधों को विकसित करने एवं हिंदी के प्रचार-प्रसार के लिए निरंतर कार्य किया जा रहा है और जो भी चुनौतियाँ आ रही हैं, उनका ठीक से निदान किया जा रहा है। चेन्नई के डॉ. आर. शेखर ने कहा कि हिंदी संपूर्ण भारत के साथ विश्व को जोड़ने वाली भाषा है। इसकी चुनौतियों को हिंदी एवं हिंदीतर राज्यों में बाँटकर देखना चाहिए। हिंदी केवल साहित्य की ही नहीं अपितु ज्ञान-विज्ञान की भी भाषा है। डॉ. विजय करण ने कहा कि हिंदी शिक्षण में पूर्णता लाने के लिए पाठ्यक्रम में व्यावहारिक सुधार की जरूरत है। हमारी मानसिक तैयारी नहीं है, उसे तेज करने की आवश्यकता है।

डॉ. तारो सिंदिक ने कहा कि हिंदीतर भाषियों की जो चुनौतियाँ हैं, वही पूरे विश्व की चुनौतियाँ हैं। कोई भी भाषा वहाँ की सांस्कृतिक उपज होती है। अनेक समस्याओं के बाद पूर्वोत्तर के लोगों ने हिंदी को गले से लगाया है। आंध्र प्रदेश के प्रो. वी.सी. दुर्गारत्न ने कहा कि हिंदी भारतमाता की बिंदी है। हिंदी हमारे देश की राजभाषा, संपर्क भाषा, राज्यभाषा एवं राष्ट्रभाषा है। हिंदी हमारे लिए सीखने की भाषा है। हिंदी के विकास के लिए अनुवाद की जरूरत है। कर्नाटक में यदि हिंदी अकादमी की स्थापना हो तो हमारी चुनौतियाँ कुछ हद तक दूर होंगी। डॉ. जोराम आनिया ताना ने प्रदेश की भाषा में लिंग भेद की समस्याओं को रेखांकित किया। न्यूजीलैंड की डॉ. सुनीता नारायण ने शिक्षण की चुनौतियों की तरफ संकेत करते हुए कहा कि चुनौतियाँ तो आती रहेंगी, सभी चुनौतियों को अवसर में बदलने की यदि ताकत है तो हिंदी के प्रति लगाव दिखेगा। सांसद श्री रामचंद्र जांगड़ा ने कहा कि मानसिक गुलामी से मुक्त हुए बिना हिंदी का विकास संभव नहीं है। मॉरीशस की डॉ. माधुरी रामधारी ने विश्व हिंदी सचिवालय के दो प्रमुख उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुए हिंदी शिक्षण योजनाओं की नई विधियों के क्रियान्वयन पर जोर दिया। सत्र का संचालन प्रो. संजय सिंह बघेल ने किया। सम्मेलन के दौरान भारतीय सांस्कृतिक संबंध परिषद्, नई दिल्ली द्वारा सांस्कृतिक संध्या कार्यक्रम का आयोजन किया गया।

समापन समारोह में देश-विदेश में हिंदी के प्रचार-प्रसार व विकास के लिए काम कर रहे ३५ विद्वानों व संस्थाओं को सम्मानित भी किया गया। विदेश राज्य मंत्री वी. मुरलीधरन ने बताया कि सम्मेलन के दौरान १० सत्रों में विभिन्न विषयों पर गंभीर चर्चा हुई और यह निष्कर्ष निकलकर आया कि हिंदी काफी सशक्त भाषा है और तकनीक के साथ सामंजस्य बैठाने में सक्षम है। सम्मेलन के अंत में जारी प्रतिवेदन में कहा गया कि १५-१७ फरवरी, २०२३ तक प्रशांत क्षेत्र के फिजी देश के नादी नगर में आयोजित हुआ १२वाँ विश्व हिंदी सम्मेलन सफल रहा। १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन में सम्मिलित भारत और फिजी सहित विश्व के अन्य देशों के सभी प्रतिनिधियों का यह समवेत मत है कि कृत्रिम मेधा (ए.आई.) जैसी अत्याधुनिक प्रौद्योगिकियों का हिंदी के माध्यम से प्रयोग करके भारतीय ज्ञान एवं पारंपरिक प्रणालियों को विश्व की बहुत बड़ी जनसंख्या तक पहुँचाया जा सकता है। साथ ही यह भी कहा गया कि प्रतिस्पर्धा एवं प्रतियोगिता पर आधारित विश्व की व्यवस्था को सहकार, समावेशन और सह-अस्तित्व पर आधारित वैकल्पिक दृष्टि प्रदान करने में हिंदी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। प्रतिवेदन के अनुसार, १२वें विश्व हिंदी सम्मेलन का स्पष्ट मत यह भी है कि 'वसुधैव कुटुम्बकम्' (पूरी पृथ्वी ही परिवार है) और 'सर्वे भवन्तु सुखिन:' (सभी प्राणी सुखी रहें) के आधार पर अंतरराष्ट्रीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वैश्विक बाजार का निर्माण किया जा सकता है। इसमें कहा गया कि इस सम्मेलन में अंतरराष्ट्रीय स्तर पर हिंदी के उपयोग को बढ़ाने तथा हिंदी शिक्षण में आधुनिक प्रणालियों एवं संसाधनों का प्रभावशाली तरीके से उपयोग किए जाने की आवश्यकता पर बल दिया गया। १७ फरवरी को समापन समारोह के उपरांत सम्मेलन में आए प्रतिभागियों को 'बिनाका' बोलकर पारंपरिक रीति-रिवाज से बिदाई दी गई।

सा अ

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय
गांधी हिल्स, वर्धा-४४१२००१ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ०९९७०२४४३५९

गजलें

● बालस्वरूप राही

: एक :

पास भाग्य के सुख की चाबी
ये बातें हैं सिर्फ किताबी

नियति बदल सकता है मानव
यदि नीयत में हो न खराबी

अब की महके हैं गुलाब यों
पत्ते तक हो गए गुलाबी

ऐसी मादक हवा चली है
मौसम भी हो गया शराबी

हम तो और जोर से बोले
जब असत्य ने गर्दन दाबी

'राही' न्यौछावर कविता पर
टस से मस होंगे न जरा भी:

: दो :

हमने गजल उगाई थी कविता के बाग में
लोगों ने उसको झोंक दिया तब तो आग में

है शायरी महदूद बस उर्दू जबान तक
ये सोच भर गई थी कई के दिमाग में

होती न कैद शयदी अपनी जबान में
जैसे कभी न रोशनी बँधती चिराग में

जिह्वा चखेगी एक ही भाषा का स्वाद क्यों
होता मजा अलग है हर इक दाल-साग में

राही जनाब आप हैं शैदाई गजल के
रहने दें उनको जो हैं कमी के सुराग में

: तीन :

चार अच्छे शेर कर देते हैं शायर को अमर
लोग क्यों बैठे हुए हैं कागजों के ढेर पर

दिल-जिगर से शायरी का वास्ता सीधा बहुत
जितने गहरे घाव होते उतना ही गहरा असर

शायरी से वाहवाही तो महज मिलती है तब
जब मिले शायर को तमगा या कि सरकारी मुहर

जिनका दावा हे बदल देंगे वो किस्मत देश की
शेर से ज्यादा तो नारों पर टिकाते हैं नजर

मीर, गालिब, जौक हों या हो निराला या कबीर
जिंदगी भर खूब तड़पे और भटके दर-बदर

व्यर्थ की तुकबंदियाँ करना महज बेकार है
राही जी, कुछ ऐसा लिखना, झूम जाए हर बशर

: चार :

दोस्त हैं, हमदर्द है, घर-बार है
क्या करें लेकिन फिजा बीमार है

क्या उड़ाएँ यार छुट्टी का मजा
जिंदगी कर्फ्यू लगा इतवार है

काश कोई छीन ले उससे कहीं
वक्त के हाथों में जो तलवार है

हो गई सारी सजावट उसके नाम
जिस तरफ भी देखिए-बाजार है

सब किताबें कैद हैं बुकशेल्फ में
हाथ में बस आजकल अखबार है:

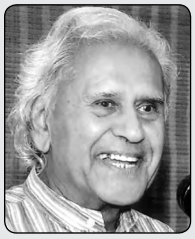

सुपरिचित बहुमुखी साहित्यकार। गीत, ग़ज़ल, मुक्त छंद लगभग सभी विधाओं में निष्णात। हिंदी के प्रथम ऑपेरा 'राग-बिराग' के रचनाकार। केंद्रीय हिंदी संस्थान के सुब्रह्मण्य भारती पुरस्कार सहित अनेक प्रतिष्ठित पुरस्कारों से सम्मानित।

: पाँच :

जब भी मंजिल का इशारा आ गया
प्यार राहों पर दुबारा आ गया

चलना-फिरना हो गया दुश्वार जब
उनकी महफिल से बुलावा आ गया

दर्द हिस्सा तो है जीवन का मगर
मेरे हिस्से थोड़ा ज्यादा आ गया

माँग बैठे प्यार की दौलत अगर
हाथ में खाली लिफाफा आ गया

नाव ने धोखा दिया मँझधार में
काम तिनके का सहारा आ गया

कर्ज गैरों का अभी उतरा न था
रिश्तेदारों का तकाजा आ गया

झूठ को जब भी चुनौती दी तो वो
ओढ़कर सच कस लबादा हा गया

ये गजल सुन के आपकी राही
जी में जीने का इरादा आ गया

डी-१३ ए/१८ द्वितीय तल,
मॉडल टाउन, दिल्ली-११०००९
दूरभाष : ०११-२७२१३७१६

लॉकडाउन जारी है

• रश्मि कुमार

गाजर का हलवा बनाकर प्रभा ने गैस बंद कर दी। आदतन स्टील का चमचमाता डिब्बा निकालकर हलवा पैक करने लगी, सहसा ठिठक गई। अब क्यों, किसके लिए पैक करे कोई खास व्यंजन। मैना सी उस लड़की की आवाज सुने जाने कितने महीने गुजर गए। अब वह नहीं आती, कभी गलती से सामने पड़ भी जाए तो नजरें चुराकर निकल जाती है। प्रभा के मन में कई बार आता है कि उसे पहले की तरह आवाज देकर बुला ले, 'क्यों री पिंकी, सुबह से दिखाई नहीं दी आज, क्या कर रही है?'

करीब दो साल पहले पिंकी का परिवार प्रभा के पड़ोस में रहने आया, शाम को डोरबेल बजी, जल्दी ही दूसरी बार बजी तो प्रभा ने दरवाजा खोल दिया, सामने करीब चौदह-पंद्रह बरस की लड़की खड़ी थी, प्रभा को देखते ही बोल उठी, 'अंटीजी, हम पिंकी, आपके बगल वाले घर में रहने आए हैं। मम्मी पूछी हैं कि यहाँ घर में काम करने वाली दाय मिलती ही क्या?'

'सोसाइटी के गेट पर नोट करवा दो, गार्ड बता देगा।' निहायत ही औपचारिकता निभाते हुए बोली प्रभा। पिंकी लेकिन उतनी ही अनौपचारिक, चट बोल उठी, 'उ गार्ड भैया, बोले तो थे उनसे, नहीं न भेजे किसी को।'

'ठीक है, मैं पूछूँगी अपनी बाई से। वैसे तुम लोग कहाँ से आई हो?'

'हम लोग, उ समस्तीपुर से न आए हैं, पापा का बदली हो गया है न यहाँ, इसलिए आना पड़ा।'

पिंकी के बात करने के लहजे से समझ गई प्रभा कि उसका परिवार उत्तर बिहार से आया है, ठेठ उत्तर बिहारी लहजा। पहले प्रभा को बिल्कुल पसंद नहीं था। बीस वर्ष हो गए उसे बिहार से आकर लखनऊ में रहते हुए, उसके स्वयं के बोलने में लखनवी अंदाज आ गया था, पर धीरे-धीरे उसे पिंकी का उत्तर बिहारी लहजा भाने लगा। खैर, किसी तरह से अपनी काम वाली बाई की मदद से पिंकी के यहाँ बाई को भेजा। किरन आकर बाई से बातचीत करके तय कर गई। किरण ने प्रभा के यहाँ आते ही बाई से पूछ-ताछ कर डाली।

सुपरिचित कथाकार। पाँच कहानी संग्रह, दो उपन्यास प्रकाशित। एक पुस्तक संपादित। भाऊराव देवरस संस्थान का 'युवा साहित्यकार सम्मान', उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान का 'सर्जना पुरस्कार' एवं 'शिंगलू पुरस्कार' प्राप्त। दूरदर्शन एवं आकाशवाणी से रचनाओं का प्रसारण।

'नाम क्या है जी तुम्हारा?'

'जी कमला।'

'कउन काम करती हो?'

'झाड़ू-पोंछा, चौका-बरतन।'

'खानो बनाती हो क्या?'

'जी बनाती हूँ न।'

'देखो, खाना तो हम अपने बनाते हैं, घर में सबको हमरे हाथ का खाना न पसंद परता है। हाँ, तैयारी तुम कर देना, जैसे आटा सानना, तरकारी काटना, दाल-चावल बीन देना।'

'उसका पैसा अलग से देना होगा।'

'हाँ-हाँ, देंगे, देंगे, पैसा केतना लोगी?'

'पाँच हजार। चार हजार झाड़ू-पोंछा-बरतन, हजार रुपया खाने की तैयारी करने का।'

'पाँच हजार, लूट है क्या?'

'यही रेट है आंटीजी।'

'ठीक है, ठीक है, आ जाना कल सुबह से। एक ठो बात अउर कहें।'

'जी कहिए।'

'ज्यादे छुट्टी मत माँगना।'

'महीने में चार छुट्टी बनता है।'

'बाप रे चार रोज, काम कैसे चलेगा?'

'मैं किसी को भेज दूँगी, उसका पईसा अलग से लगेगा।'

'ठीक्के है, आ जाना कल से।'

किरण का लहजा जाना-पहचाना लगा, बिहार के उस क्षेत्र से वह परिचित थी। वैसे भी किरण अच्छी पड़ोसी सिद्ध हुई, दो दिन बाद बड़ा सा डिब्बा लिये पिंकी हाजिर थी।

'मम्मी दही वड़ा बनाई है अंटी, आपके लिए लाए हैं।'

'डिब्बा थामते हुए अपनत्व से भर गई प्रभा, इस तरह का व्यवहार वह भूलने लगी थी। उसे याद आया, उसकी माँ अपनी पड़ोसन से बेखटके कहती थी, अभी खाना मत खाना दीदी, कढ़ी भेज रहे हैं। कभी कढ़ी, कभी साग, कभी टमाटर की चटनी, रसोई की रोजमर्रा की वस्तुएँ और व्यंजन। महिलाएँ अड़ोस-पड़ोस में भेजतीं, कभी-कभी माँग लेतीं। अहं की मान-अपमान की कोई बला नहीं। महिलाओं की अपनी एक दुनिया, कोई दीदी, कोई भाभी, कोई कनिया, कोई चाची, कोई काकी, कोई दादी। कोई अड़ोसी-पड़ोसी अगर डाँट दें तो चुपचाप सुन लेतीं, पलट के जवाब नहीं देती। घर में चर्चा भी नहीं करती, जानती थी घर में अपनी गलती बताने पर और अधिक डाँट पड़ेगी। सिर्फ व्यंजन ही नहीं, किसी के यहाँ नई बहू आती तो उसके हाथ के बने रूमाल महिलाएँ बड़ी शान से महिलाओं और अड़ोस-पड़ोस के पुरुषों में भी बाँटतीं लौंग, इलायची, सौंफ, सुपारी, छुहारा आदि बाँधकर। किसी के यहाँ बेटी विदा होती तो खुशी-खुशी महिलाएँ अपने हाथ के बने और कढ़े रूमाल, टेबुल क्लॉथ, तकिए के गिलाफ का जोड़ा आदि बेटी के सामान में सजा देतीं। महिलाओं की ये दुनिया, इसमें स्नेह था, सजावट थी, सलीका था तथा अपनत्व की सुगंध थी। कहीं कोई बनावटीपन नहीं था। बनावटीपन पिंकी और उसकी माँ किरण में भी लेशमात्र नहीं था। किसी के घर से कोई व्यंजन आता तो बरतन खाली भेजने का रिवाज नहीं था, बरतन भर के भेजा जाता।

प्रभा ऐसे ही वातावरण में पली-बढ़ी थी, पर ये व्यवहार भूलने लगी थी, पिंकी कभी भी मैना सी फुदक आती, कहती, 'थोड़ा दही माँगी है मम्मी, जोड़न नहीं न है।'

'अभी देती हू जामन, अंदर आ।'

'बहुत अच्छा महक आ रहा है अंटी, क्या बना रही हैं?'

'ब्रेड रोल, खाएगी?'

'अरे उ त हमको बहुत अच्छा लगता है।'

'अच्छा बैठ, खा।'

'बहुत अच्छा है अंटी, मम्मी को भी बहुत पसंद है।'

'उनके लिए भी लेती जा।'

पिंकी खुशी-खुशी खाकर प्लेट भरकर ब्रेड रोल लेती गई। प्रभा की बेटी भुनभुनाती, कहती—गजब की लड़की है, खाती भी है, बाँध के भी ले जाती है।'

बेटा कहता—'मम्मी को उससे बहुत लगाव हो गया है, बिहार की जो है।' सुनकर प्रभा को शिद्दत से अपने उत्तर बिहार का घर याद आता। विवाह होने के बाद जब भी जाती तो अड़ोसी-पड़ोसी निमंत्रण देकर भोजन पर बुलाते। काकी, चाची, भाभी सब उसकी पसंद का व्यंजन बना-बनाकर भेजती। लखनऊ आते समय विदा देने सब आती, आँसू पोंछते हुए गले लगातीं। छोटे-छोटे रूमाल में लौंग, इलायची, काजू-किशमिश थमा जातीं, कहती—'कुच्छों नहीं है बहिन दाय, थोड़ा कटुक मसाला है। पहुँचकर खबर कर देना। मन लगा रहेगा। जल्दी आना धिया, तुम चली जाती हो तो काकी को बहुत सून लगता है न।' छोटे-छोटे रूमाल, अधिकतर हाथ की कढ़ाई किए हुए। प्रभा महीनों सँभालकर रखती। लौंग, इलायची, काजू-किशमिश के साथ सिंदूर की डिबिया रखना नहीं भूलतीं महिलाएँ, कितनी तरह की तो चूड़ियाँ इकट्ठी हो जातीं। धीरे-धीरे प्रभा का जाना कम होने लगा। माँ नहीं रहीं, घर में महिलाओं का आना-जाना एक तरह से समाप्त हो गया। पिता भाई-भाभी के साथ पटना शिफ्ट हो गए। घर में ताला लग गया। सोचते हुए प्रभा लंबी साँस खींचकर रह जाती। अब कटुक मसाला, सिंदूर-चूड़ी के साथ-साथ प्रभा की पसंद की पोटलियाँ नहीं आतीं। मुँगौड़ी, तिलौरी, अचार, साबूदाने का पापड़। समय के बहुत पीछे छूट गया यह सब। अरसा बीच गया उत्तर बिहार में समस्तीपुर गए हुए। कभी-कभार पटना जाती भाई-भाभी, पिता सभी से अपनत्व मिलता। वे आते वक्त फल-मिठाई के टोकरे भेंट करते। लखनऊ आने पर बच्चे फल-मिठाई की तरफ देखते भी नहीं, कहते—'इस बार ठेकुआ नहीं लाई, दाल की पूड़ी भी नहीं लाई, खजूर और निमकी भी नहीं, अचार भी नहीं, तो लाई क्या?'

'इतनी फल-मिठाई तो है।'

'ये सब तो यहाँ भी मिल जाता है।'

प्रभा जानती थी, जो यहाँ नहीं मिलता वह माँ की, ताई की, चाची की रसोई में मिल जाता है। पिंकी की माँ किरण की रसोई में प्रभा के लिए मानो एक झरोखा खुल गया, पिंकी के परिवार से एक अनजाना रिश्ता जुड़ने लगा। किरण और प्रभा दोनों उस क्षेत्र से थीं, जहाँ लोग बहन को, बेटी को बड़े प्यार और मान से 'दाय' कहते हैं। दोनों के मन में एक-दूसरे के लिए यही भाव होते हुए भी एक-दूसरे को 'दाय' नहीं कह पातीं। पर बात-व्यवहार में एक-दूसरे के प्रति यही-यही भाव झलकता।

बच्चों की दादी भी कह उठती, 'बिल्कुल सही है, औरत को तो मायके का कौआ भी प्यारा होता है, पिंकी तो फिर भी जीती-जागती लड़की है।'

दिन ऐसे ही गुजर रहे थे, धीरे-धीरे कोरोना ने पाँव पसारना आरंभ कर दिया। शहर में दो-चार केस होने के बाद लोग अपने-अपने घरों में सिमटने लगे। काम वाली बाई ने आना बंद किया, स्कूल-कॉलेज बंद हो गए, ऑफिस न जाकर 'वर्क फ्रॉम होम' होने लगा। पहले रात में, फिर दिन में पूरा लॉकडाउन लग गया। पिंकी का भी आना-जाना कम हो गया, मास्क ने चेहरे की हँसी ढँक दी, एक तरह से छीन ली। टी.वी. पर खबरें सुनकर लोगों में दहशत फैलने लगी। ड्राइवर, माली, कामवाली बाई सबका आना-जाना बंद होने से गृहणियों पर काम का बोझ अत्यधिक बढ़ गया, ऊपर से जानलेवा बीमारी का डर। प्रभा कभी-कभी परेशान हो जाती, बच्चे मदद करने की कोशिश करते, पर ऑनलाइन कक्षाओं से फुरसत नहीं मिलती। पिंकी का स्कूल जाना बंद हो गया, कभी-कभार दूर

से मास्क पहनकर बात हो जाती। दोनों घरों के बीच में मेहँदी की झाड़ियाँ थीं। अपने-अपने लॉन में खड़ी होकर वे कभी-कभार बातें कर लेतीं। ऐसे में एक दिन किरण ने पूछ लिया प्रभा से, 'आपहू के यहाँ भी कौनो काम करने नहीं आता है?'

'क्या करें मजबूरी है।'

'बेवस्था कैसे करते हैं?'

'कर लेते हैं किसी तरह, सब मिल-जुलकर।'

'वही न, वही न होना चाहिए, सब मिल-जुलकर काम कर लेंगे तो किसी एक पर भार नहीं पड़ेगा।'

'सो तो है।'

'वही तो ई पिंकिया कउनो काज की नहीं है, एक्को काम नहीं होता इससे, हम कह देते हैं परभा जी, ई पिंकिया का सासुर में दू दिन निबाह नहीं होगा।'

प्रभा को सुनकर अचरज नहीं हुआ, वह स्वयं माँ-ताई से इसी तरह की बातें सुनते हुए बड़ी हुई थीं, शांत स्वर में बोली, 'धीरे-धीरे सीख जाएगी किरणजी, अभी उम्र ही क्या है उसकी।'

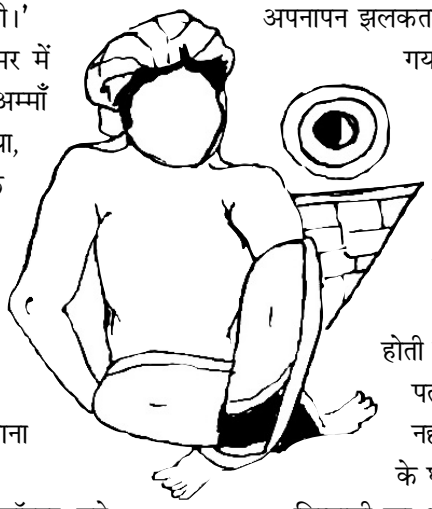

'उमर का कउन बात है परभाजी, इस उमर में हम अपना छोटा भाई-बहन को सम्हारने के साथ अम्माँ का आधा खाना भी बना देते थे। बड़ा परिवार था, सत्तरह बार तो दिन में चाय बनता था और एक ठो ई पिंकिया है, बाप ने इसका माथा खराब कर दिया है, खाली पढ़ो-पढ़ो। पढ़-लिखकर तो बी.डी.ओ. न बन जाएगी।'

प्रभा फिर हँस पड़ी।

'अच्छा है न, लड़की को अपने पैरों पर खड़ा होना चाहिए, अब कोई हमारा-आपका जमाना नहीं है, समय बदल गया है किरणजी।'

'आप ठीक कहती हैं परभाजी, लड़की डॉक्टर बने, इंजीनियर बने, कलक्टर बने, घर-गृहस्थी तो सम्हारना ही परता है।'

'वो भी कर लेगी किरणजी, आज-कल लड़कियाँ घर और ऑफिस दोनों मैनेज कर लेती हैं। बैलेंस कर लेती हैं।'

'बैलेंस करती हैं न खाक, न सिलाय-फराय, न खीर, हलुआ-पूरी बनाना। अरे ई पिंकिया को दाल-भात, चोखा तक नहीं बनाने आता है।'

'सब सीख लेगी समय आने पर, आप चिंता मत कीजिए।'

'आपहू पिंकिए का पच्छ ले रहे हैं।'

'वो है ही ऐसी, कुछ खास बनाती हूँ तो बुलाकर या भेजकर उसे खिलाने का मन करता है, पर इस लॉकडाउन से सब चौपट कर रखा है।'

'अरे, आपसे कउन लौकडौन। आपके यहाँ कोरोना थोड़े है।'

'तब तक पिंकी बाहर आ गई। बोली, 'कोरोना काहे होगा, हमारे यहाँ, अंटी के यहाँ कोरोना नहीं होगा, सब मास्क पहनते हैं, सैनेटाइजर से हाथ धोते हैं न।'

'देख रहे हैं परभाजी, कइसे टप-टप बोलती है, इसका आधा बात तो हमरे समझे में नहीं आता है।'

काश पिंकी की कही हुई बात सच हो जाती, कोरोना नहीं होता। पर ऐसा हुआ नहीं, अगली सुबह पिंकी के घर के आगे लाल रिबन बँधा देखकर प्रभा का दिल धक से रह गया। पिंकी के घर किसको हुआ है कोरोना। घर के चारों तरफ रिबन क्यों बाँध रखा है। प्रभा का सारा ध्यान पिंकी के घर पर केंद्रित हो गया। सोसाइटी के गेटकीपर से पूछ-ताछ की तो पता चला, पिंकी के पापा सिन्हाजी की कोरोना रिपोर्ट पॉजीटिव आई है। करीब चालीस-बयालीस साल के भले से व्यक्ति थे सिन्हाजी। हाय-हलो कहने की जगह हाथ जोड़कर प्रणाम करते। अपने काम-से-काम रखने वाले व्यक्ति, सोसाइटी में किसी के भी घर कोई इमरजेंसी हो तो सुनने के साथ मदद के लिए पहुँचते, किसी के भी साथ चलने को तैयार हो जाते।

किरण कहती, 'परदेस में रहने आए हैं तो सबसे मेल-जोल करना न परेगा। नखलौ में कौन है अपना, आप ही लोग न हैं।'

किरण की बातचीत की शैली जो भी हो, पर शब्द-दर-शब्द अपनापन झलकता। प्रभा के पति बोले, 'सिन्हा साहब को कोरोना हो गया है, कैसे मैनेज होगा?'

'सिविल अस्पताल वाले गेट पर दवा का पैकेट रख जाते हैं। ऑक्सीमीटर भी दे कर गए हैं। सोसाइटी ने खाने की व्यवस्था की है। गार्ड आकर फूड पैकेट्स रख जाता है। गेट से थोड़ी दूर हटकर।'

प्रभा की बेटी बोली। इंटरकॉम पर इधर-उधर बातें होती रहतीं। किस घर में कोरोना है, किस में नहीं, ये बातें पता चलती रहतीं। किरण या पिंकी से उसके बाद बात नहीं हुई। दोनों दिखाई नहीं दीं। दो दिन के बाद पिंकी के घर के आगे ऐंबुलेंस दिखाई दी, पूछने पर पता चला, सिन्हाजी का ऑक्सीजन लेवल गिरने लगा है, अस्पताल में भरती करना पड़ेगा। चारों तरफ से बंद ऐंबुलेंस सिन्हाजी को लेकर चली गई, पिंकी और उसकी माँ को अस्पताल के स्टाफ नहीं ले गए, कहा—कोरोना प्रोटोकाल में अलाउड नहीं है। सोसाइटी के कुछ और परिवारों में कोरोना ने दस्तक दे दी, पूरी सोसाइटी में मरघट सा सन्नाटा छा गया। एक-एक दिन करके पूरा सप्ताह बीत गया। सिन्हाजी की कोई खबर नहीं मिली। प्रभा के परिवार से किसी-न-किसी को पिंकी और उसकी माँ दिख जातीं, टिफिन और थर्मस लेकर आते-जाते, फिर उसके बाद दिखाई नही देतीं। सिविल अस्पताल में किसी जान-पहचान वाले डॉक्टर से पूछने पर पता चला, सिन्हाजी तो एक सप्ताह से वेंटिलेटर पर हैं, पिंकी और उसकी माँ रोज जातीं टिफिन और थर्मस लेकर, घंटों अस्पताल में बैठतीं, फिर बिना मिले, बिना देखे वापस चली आतीं। डरते-डरते प्रभा ने पिंकी को फोन मिलाया, पूछा, 'पापा कैसे हैं पिंकी बेटा।'

'कहाँ कुछ बताते हैं डॉक्टर, मिलने भी नहीं देते। हम और मम्मी रोज उनका खाना और चाय लेकर जात हैं, पर दे नहीं पाते। वार्ड में जाना

एलाउड नहीं है न।'

'बात होती है तुम्हारी पापा से।'

'बहुत कठिन है, मोबाइल उनका डिस्चार्ज हो जाता है, बात करने पर कहते हैं, तुम लोग घर चली जाओ, अस्पताल मत आया करो, बचकर रहो।'

'अरे, कितनी परेशानी है?'

'वही तो हम तीनों तो साथे में थे। पर हमको और मम्मी को कोरोना नहीं हुआ, उन्हीं को कैसे हो गया, पता नहीं।' तब-तक किरण पिंकी के हाथ से फोन लेकर रो पड़ी।

'सप्ताह हो गया पिंकी के पापा देखे, परभाजी। भाई साहब से कहिए न, कौनो जान-पहचान का हो तो एक बार मिलवा देते।'

'मैं कोशिश करूँगी, देखिए, आप अपना और पिंकी का खयाल रखिए।'

'हम लोग तो ठीक्के है परभाजी, बस पिंकी के पापा का चिंता है।'

'कहीं वो वेंटीलेटर पर तो नहीं।'

'वही तो, डॉक्टर क्या कर रहे हैं, कुछ बताते कहाँ हैं, मिलने भी कहाँ देते हैं। कहते हैं, आइसोलेटेड है कोरोना का वार्ड। ई आइसोलेटेड मतलब।'

'अलग किया हुआ वार्ड। केवल डॉक्टर और नर्स ही जा सकते हैं।'

'और परिवार?'

'कोरोना के डर से जाने को मना करते हैं।'

'उ तो ठीक है, पर परिवार भरोसा कैसे करेगा?'

'ईश्वर का ही भरोसा है और क्या?'

प्रभा समझ गई कि सिन्हाजी वेंटीलेटर पर हैं, इसकी जानकारी परिवार को नहीं है। स्वयं स्पष्ट रूप से बताने की हिम्मत नहीं कर पाई। न उनके घर जा सकती है, न हिम्मत दे सकती है, इस महामारी ने जाने कितनी भावनाओं को समाप्त कर दिया है। जी में आया, एक बार जाकर माँ-बेटी का हाल पूछ आए, पर परिवार का खयाल करके हिम्मत नहीं कर पाई। कहीं किसी को कोरोना हो गया तो क्या करेगी। टी.वी. में खबरें आती रहतीं, अंतिम संस्कार के लिए श्मशान में जगह नहीं है, लोग बाहर सड़क पर दाह-संस्कार करने को बाध्य हैं। एक बार में गिनती के लोग ही जा सकते हैं, दो-चार पाँच, कभी-कभी वह भी नहीं। कई ऐसे परिवार हैं, जो पार्थिव शरीर लेने अस्पताल नहीं आते, घर से नहीं निकलते। संवेदनाओं का ऐसा अकाल कभी नहीं देखा, सड़क पर सन्नाटा, सोसाइटी में सन्नाटा। प्रभा की सासू माँ सिर पर हाथ धरकर कहतीं, 'जनम बीत गया, ऐसा समय न देखा न सुना।' घर-परिवार, जान-पहचान वालों में किसी-न-किसी की खबर आ ही जाती। परिवार में सन्नाटा छा जाता, फोन करना भी धीरे-धीरे कम होने लगा, खबरें आती रहतीं। मृत्यु के संस्कार में बीस लोग ही एकत्र हो सकते हैं, बीस तो क्या दो-चार भी नहीं जुटते। प्रभा की रिश्तेदारी से खबर आई, प्रभा का चचेरा भाई कोरोना में चल बसा। पैंतीस साल का व्यक्ति, पत्नी जब पार्थिव शरीर लेकर गाँव पहुँची तो गाँव वालों ने गाँव की सीमा पार नहीं करने दी। चाचा का परिवार मन मसोसकर रह गया, गाँववालों से वैर मोल लेकर वे अपने पुत्र के संस्कार में गए जरूर, पर महीना भर हो गया, वे गाँव वापस नहीं लौटे।

कोरोना से मृत्यु मानो परिवार के लिए, गाँव के लिए अक्षम्य अपराध हो गई। मानव सभ्यता के इतिहास में महामारी से मानवता की इस तरह हत्या नहीं हुई होगी। अपने चाचा के परिवार की खोज-खबर नहीं ले पाई प्रभा। इनसान परिवार से, समाज से कटकर कैसे रह सकता है। कहते हैं, 'मैन इज ए सोशल एनिमल।' अब इस पंक्ति से हम सोशल शब्द हटा दें तो क्या बचेगा, मनुष्य में मानवता समाप्त हो गई तो मानव सिर्फ एक जीव बनकर रह जाएगा। संवेदना, भावना अगर व्यक्त न हो पाएँ तो धीरे-धीरे मनुष्य जड़ हो जाता है, पत्थर हो जाता है। एक बात और जानती थी प्रभा कि जिस प्रकार मनुष्य को जिंदा रहने के लिए साँसों की जरूरत होती है, उसी प्रकार घर की दीवारों को जिंदा रखने के लिए भी मनुष्य की साँसों की आवश्यकता होती है। अन्यथा घर वीरान हो जाता है, ढहने लगता है। अंतत: गिर जाता है। कोरोना काल ने पूरे सामाजिक ढाँचे को चरमरा दिया था, परिवार एक दूसरे से दूर होने लगे थे बिखरने लगे थे। पिंकी के घर की तरफ देखती प्रभा, कहीं कोई आहट नहीं, आवाज नहीं, पत्ता भी नहीं खड़कता।

दो दिन बाद अंतत: दिल दहलाने वाली खबर आ गई, सिन्हाजी नहीं रहे। प्रभा के पूरे परिवार को साँप सूँघ गया। प्रभा के पति जाने को उद्यत हुए, फिर ठिठक गए। बच्चे शोर मचाने लगे, 'आप मत जाइए।'

'उन्हें खबर कौन देगा?'

'अस्पताल वाले सूचना देंगे, कोरोना प्रोटोकाल में घर के एक सदस्य को बुलाकर पहचान करने की अनुमति दी जाती है।'

'कोरोना प्रोटोकाल यानी मृत्यु का भी प्रोटोकाल होता है, यह कैसी बात?' प्रभा बोल उठी।

'हाँ यही बात है, पता है अस्पताल वाले एक साथ दो-तीन डेड बॉडी ले जाते हैं। क्रियाकर्म में परिवार वाले शामिल भी नहीं हो पाते, कभी पहुँचते हैं, कभी नहीं पहुँच पाते।'

'पता नहीं, पिंकी के यहाँ क्या होगा।'

प्रभा का परिवार दम साधे देखता रहा, घंटे भर बाद सरकारी गाड़ी आकर रुकी पिंकी के घर के सामने, पाँच मिनट बाद चली गई, रोना नहीं, चिल्लाना नहीं, कोई आहट नहीं, बंद दरवाजे से कान लगाए सुनती रही प्रभा। सिविल अस्पताल मे पूछने पर पता चला, वेरीफाई करने के बाद पिंकी और उसकी माँ को वापस भेज दिया गया, अस्पताल वाले ही अंतिम संस्कार के लिए डेड बॉडी ले गए। सबके प्रतिकूल समय में खड़े रहने वाले सिन्हाजी, आज अपनी अंतिम यात्रा में बिल्कुल अकेले चले गए। मृत्यु के बाद भी घर नहीं ला सकते, लोग नहीं जुटते, अंतिम संस्कार की रीतियाँ पूरी नहीं कर सकते। एक मौत के बाद परिवार जाने कितनी बार मरता है, टूटता है। मृत्यु के इस रूप की क्या कभी किसी ने कल्पना की होगी, नहीं की होगी।

'उन दोनों को वापस क्यों भेज दिया?' प्रभा के पति ने पूछा।

'बच्ची सी उनकी बेटी को भेजना उचित नहीं था और पत्नी की हालत नहीं थी जाने लायक, बिल्कुल सुन्न हो गई थी। आधे घंटे में घर पहुँचने वाले होंगे।'

ये आधे घटे मानो आधी सदी समान हो गए प्रभा के लिए। बंद दरवाजे से कान लगाए बैठी रही। आधे घंटे तो नहीं, करीब पौन घंटे बाद गाड़ी रुकने की आवाज सुनाई दी प्रभा को, अपने को रोक नहीं सकी, दरवाजा खोलकर बरामदे में निकल आई, गाड़ी पिंकी के घर के आगे रुकी थी, साफ-साफ दिखाई नहीं दे रहा था, सीने में अदम्य रुलाई रोककर वह बरामदे की सीढ़ियाँ उतरकर गेट पर खड़ी हो गई, गेट खोलकर पार नहीं कर पाई, पीछे से पूरा परिवार आवाज दे रहा था, 'क्या कर रही हो?'

'कहाँ जा रही हो?'

'अरे, ऐसे में कौन जाता है।'

'देखो, भूल से भी उनके पास जाने की गलती मत कर बैठना।'

गेट की ओर बढ़ते हुए कदम अचानक ठहर गए। पिंकी के घर के सामने खड़ी जीप का पिछला गेट खुला, बदहवास सी पिंकी उतरी, प्रभा को देखा, दबी हुई रुलाई फूट पड़ी। 'अंटीया।' टूटते हुए गले से सिर्फ एक टूटा हुआ शब्द अस्पष्ट सा निकला। प्रभा को देखकर उसने दोनों हाथ फैला दिए, मानो प्रभा के गले लगकर रोना चाहती हो, प्रभा की भी यही स्थिति थी, पिंकी को सहारा देने को उतावली हो उठी, सहसा पीछे से आती आवाज ने रोक लिया।

'रुको, जाना मत। स्वयं को सँभालो', प्रभा के पावों में मानो पत्थर की शिलाएँ बँध गईं, परिवार की बेड़ियों ने जकड़ लिया, 'उसकी भावुकता कहीं उसके परिवार पर भारी पड़ गई तो क्या होगा, घर में वृद्ध सासू माँ हैं, पति है, बच्चे हैं। किसी को कोराना हो गया तो कैसे माफ कर पाएगी खुद को।' अदम्य रुलाई गले में दबाकर किंकर्तव्यविमूढ़ सी खड़ी की खड़ी रह गई। शरीर में दौड़ता हुआ खून बर्फ हो गया जैसे, क्या इसी को खून का पानी हो जाना कहते हैं या आँख का पानी मर जाना कहते हैं। दो पल पिंकी देखती रह गई, प्रभा का यह रूप देखकर वह भी पत्थर हो गई मानो, फिर मुड़कर माँ को उतारने के लिए उसने हाथ बढ़ाया। प्रभा खड़ी नहीं रह सकी, किरन का सामना करने की हिम्मत नहीं जुटा पाई, मुड़कर अपने घर के दरवाजे की तरफ लौट पड़ी, दरवाजा बंद कर उससे टेक लगाकर वहीं जमीन पर बैठ गई या ढह गई। अँधेरा होने लगा तो बत्ती जलाने उठ खड़ी हुई। रोजमर्रा के कार्य में व्यस्त हो गई। तब से कई महीने बीत गए पिंकी अब नहीं आती। कभी-कभार स्कूल जाते आते दिखाई दे भी जाए तो नजर चुराकर निकल जाती है। मैना सी बोलती लड़की बिल्कुल खामोश हो गई। प्रभा उसके मुख से 'अंटी' सुनने को तरसकर रह जाती। किरण भी दिखाई नहीं देती। उसने घर से जैसे निकलना छोड़ दिया।

उनके घर काम करनेवाली बाई आकर आँसू पोंछते हुए बता गई, 'किरण आंटी ने काम से निकाल दिया है, कह रही हैं, हम तुमको पैसा नहीं दे पाएँगे, अब काम ही क्या है, जिसको लेकर सारा काम था, वही चला गया।'

'घर से कोई नहीं आया।'

'नहीं आंटीजी, मैं गई थी, माँ-बेटी ने मिलकर किसी तरह से शांति पाठ कर लिया।' भयंकर अपराध-बोध से व्यथित हो उठी प्रभा। वह भी तो नहीं गई। अब कौन सा मुँह लेकर सामना करेंगी किरण और पिंकी का।

'कैसी है किरण?'

'एकदम शांत है, कह रही थी, पिंकी के बोर्ड की परीक्षा है, तब तक रहना पड़ेगा। सिन्हा साहब के दफ्तर वाले कुछ मुआवजा दे गए हैं, उसी से चल रहा है।'

'दफ्तर में नौकरी की भी बात-चीत चल रही है।'

'हाँ, कह रही थी कि वो पढ़ी-लिखी नहीं हैं, ग्रैजुएट भी नहीं है, पता नहीं कौन सी नौकरी देंगे दफ्तर वाले।'

प्रभा जानती थी, सिन्हाजी बैंक में कार्यरत थे, किरण को कुछ-न-कुछ काम मिल जाएगा। कम-से-कम माँ-बेटी को किसी के आगे हाथ नहीं फैलाना पड़ेगा।

तब से साल बीतने को आया। लॉकडाउन समाप्त हो गया। स्कूल, कॉलेज, दफ्तर हर जगह कार्य पूर्ववत् होने लगा। बस दोनों परिवारों में आना-जाना शुरू नहीं हो पाया। आज भी प्रभा को पिंकी अपने घर के सामने हाथ फैलाए हुए खड़ी दिखाई देती है, किरण उसके बाद दिखाई नहीं दी कभी। पिंकी की वजह से आना-जाना शुरू हुआ था, अब वही पाँव नहीं बढ़ाती, प्रभा उसकी मन:स्थिति समझती। पिता की मौत का धक्का, उस पर प्रभा के पास नहीं आने का झटका। प्रभा की मजबूरी या मन:स्थिति समझने के लिए पिंकी अभी बहुत छोटी थी। उसकी किशोरावस्था पर यह गहरा आघात था। किशोर मन बार-बार आहत हुआ, पिंकी के लिए यह धक्का सँभालना कठिन था। प्रभा से उसकी चुप्पी देखी नहीं जाती। अब पिंकी वक्त-बेवक्त आकर जल्दी-जल्दी घंटी नहीं बजाती, कभी जामन माँगने, कभी ब्रेड रोल ले जाने, कभी दही वड़े पहुँचाने, न प्रभा कुछ भेज पाती है न पिंकी आकर 'अंटी' बोलती है। एक साल में बहुत कुछ बदल गया। धीरे-धीरे लॉकडाउन पूरी तरह से समाप्त हो गया। शहर में, देश में, जिंदगी धीरे-धीरे पटरी पर लौट आई। पर प्रभा के लिए लॉकडाउन समाप्त नहीं हुआ, पिंकी के घर और प्रभा के घर की मेहँदी की झाड़ के आर-पार सन्नाटा छाया हुआ है, न आहट होती है, न पत्ता खड़कता है। पिंकी तो उसी दिन गेट के बाहर छूट गई हो जैसे, गले से आवाज नहीं निकलती। अगर अपने गेट के अंदर आती तो टप-टप बोलती, 'अंटी, मम्मी मेरा शिकायत कर रही हैं न।' प्रभा के लिए लॉकडाउन आज भी जारी है।

उत्कर्षिणी
२/४३, विपुल खंड, गोमती नगर
लखनऊ-२२६०१० (उ.प्र.)
दूरभाष : ०९४१५४०८४७६

गजलें

● नरेश शांडिल्य

: एक :

गजल का साज बजे है, कभी-कभी ही सही
तुम्हारी दाद मिले है, कभी-कभी ही सही

अगरचे दर्द है तारी तमाम हस्ती में
जिगर में पीर हँसे है, कभी-कभी ही सही

यूँ पतझरों की सदाओं के बीच हैं, फिर भी
बसंत राग छिड़े है, कभी कभी ही सही

नहीं है ऐसा कि दिल का हमें पता ही नहीं
हमें भी इश्क रुचे है, कभी-कभी ही सही

तुम्हारा हिज्र कभी वस्ल को भुला न सका
अभी भी हूक उठे है, कभी-कभी ही सही

: दो :

मेरा महबूब क्या है, राम जाने
अला है या बला है, राम जाने

अगर 'हाँ' ही नहीं है उसकी 'हाँ' तो
'नहीं' में क्या छिपा है, राम जाने

गो उसके लब पे तो बस मैं ही मैं हूँ
जिगर में क्या बसा है, राम जाने

कभी पत्थर कभी पानी-सा है वो
ये क्या उसकी अदा है, राम जाने

सुकूँ देता है उसका दिल दुखाना
दिल उस पर क्यों फिदा है, राम जाने

: तीन :

क्या कहा, यूँ ही जीता जाऊँ क्या
खुद को अब और भी सताऊँ क्या

कैसे तुझको न याद रक्खूँ मैं
साँस लेना ही भूल जाऊँ क्या

छोड़ दूँ जिंदगी का दर क्योंकर
मर्सिया खुद ही अपना गाऊँ क्या

तोड़कर आईने से हर यारी
खुद को अब खुद से ही छिपाऊँ क्या

तू भी जिद्दी है, मैं भी हूँ, फिर भी
तू कहे तो तुझे मनाऊँ क्या

: चार :

हमको देखें तो बाअदब देखें
स्याह-उजला हमारा सब देखें

देखना तो हमें भी है तुमको
देखना है कि तुमको कब देखें

तब जो देखा था उसको क्या देखा
देखना है उसे तो अब देखें

तेरे रुख से नजर हटे पहले
हम तेरी बेरुखी तो तब देखें

ठीक कहता है तू; मगर वाइज!
खुद को देखें कि तेरा रब देखें

: पाँच :

गमे जां की दवा कैसे करोगे
सजाओं को जजा कैसे करोगे

सरापा गुँथ चुके हैं तुममें अब हम
हमें खुद से जुदा कैसे करोगे

बदन से हम निकल आए हैं बाहर
कहो हमको फना कैसे करोगे

तुम्हारी शर्त सारी मान भी लें
तो फिर शिकवा-गिला कैसे करोगे

प्रतिष्ठित कवि, दोहाकार, शायर, नुक्कड़ नाट्यकर्मी, समीक्षक और संपादक। विभिन्न विधाओं में सात मौलिक कविता-संग्रह प्रकाशित तथा आठ पुस्तकों का संपादन। हिंदी अकादमी का साहित्यिक कृति सम्मान; वातायन (लंदन) का अंतरराष्ट्रीय कविता सम्मान, कविता का प्रतिष्ठित 'परंपरा ऋतुराज सम्मान'। सलाहकार सदस्य फिल्म सेंसर बोर्ड, सूचना व प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार।

जरा-सा फासला बेहतर है, वर्ना
मुहब्बत बामजा कैसे करोगे

: छह :

नखरे न तेरे हुस्न उठाऊँ तो क्या करूँ
आखिर मैं राहे-इश्क न जाऊँ तो क्या करूँ

अपनी 'सुजान' का मैं 'घनानंद' हूँ तो फिर
उसके कहे पे भी न जो गाऊँ तो क्या करूँ

आईना हो गया हूँ मैं तुझको निरख-निरख
पलकों पे तुझको गर न बिठाऊँ तो क्या करूँ

है जो भी जी में, वो ही तो गजलों में आएगा
गजलों में जी की पीर न लाऊँ तो क्या करूँ

ये दाग-ए-इश्क वो हैं जो ईनाम में मिले
ये दाग फख्र से न दिखाऊँ तो क्या करूँ

सा अ

सत्य सदन, ए-५, मनसा राम पार्क,
संडे बाजार लेन, उत्तम नगर,
नई दिल्ली-११००५९
दूरभाष : ९८६८३०३५६५

ढोल गवाँर सूद्र पसु नारी, सकल ताड़ना के अधिकारी

● प्रमोद कुमार अग्रवाल

गोस्वामी तुलसीदास कृत रामचरितमानस के सुंदरकांड में दोहा ५८ के अंतर्गत तीसरी चौपाई निम्न है—

प्रभु भल कीन्ह मोहि सिख दीन्ही। मरजादा पुनि तुम्हरी कीन्ही॥

ढोल गँवार सूद्र पसु नारी। सकल ताड़ना के अधिकारी॥

हनुमान प्रसाद पोद्दार द्वारा लिखित गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित रामचरितमानस की टीका के अनुसार उपर्युक्त चौपाई का अर्थ है—

'प्रभु ने अच्छा किया जा शिक्षा दी, किंतु मर्यादा भी आपकी ही बनाई हुई है। ढोल, गँवार, शूद्र, पशु और स्त्री, ये सब शिक्षा के अधिकारी हैं।

इस अर्थ से सहमत न होते हुए कुछ वर्ग इसे शूद्रों एवं नारियों के प्रति गोस्वामी तुलसी की टिप्पणी का विरोध करते हैं।

डॉ. हरदेव बिहारी के हिंदी शब्दकोश के अनुसार ताड़ना के बहु अर्थ हैं—डाँटना-डपटना, मारना-पीटना, भाँपना, समझना। बदरीनाथ कपूर के अनुसार ताड़ना का अंग्रेजी में अर्थ है—to reprimand, to guess.

उपर्युक्त संदर्भ में सागर अर्थात् समुद्र एक निंदनीय पात्र है, जो अपनी भूल बाद में स्वीकार करता है। कवि, नाटककार या कथाकार जो अपने धीरोदात्त नायक के मुँह से न कहलाकर अन्य पात्रों के मुँह से कहलाता है, वह उसकी उक्ति नहीं हो सकती, उसमें उसका पूर्ण समर्थन नहीं कहा जा सकता है। उनका संदर्भ विशेष में परीक्षण करना उचित है। जो पात्र जैसा होता है, उसके मुँह से वैसी ही उक्ति कहलाई जाती है। यदि ऐसा न हो तो कवि की कृति में पूरे जीवन और जग का प्रतिबिंब नहीं हो सकता तथा वह कृति नहीं होती, केवल भाषणबाजी होती है। ताड़ना शब्द लक्षार्थ से शिक्षा और सुधार के लिए दंड के अर्थ में आया है। समुद्र के कहने का भाव यह है कि आपने मेरी शिक्षा के लिए और मुझे दंड देने के लिए, जो धनुष-बाण उठाया तो कुछ अनुचित नहीं किया, क्योंकि मैं गँवार हूँ, इस शिक्षा का अधिकारी हूँ। मुझे चाहिए था कि आपका आगमन सुनकर मैं आपकी सेवा में उपस्थित होता। आपने जो मुझे धमकाया, वह अच्छा ही किया। अत: ताड़ना का अर्थ धमकाना मध्यमर्या का ग्रहणीय अर्थ है।

जहाँ तक ढोल का अर्थ है, वह हमारी लोककलाओं में प्रचलित वाद्य-यंत्र है, बड़ा प्रिय है, उसे बड़े हिफाजत से रखा जाता है, पर जब वह काम नहीं देता, तो उसे काम में लाने के लिए ठोंका भी जाता है। पर वह ठोंकने का दूसरों के लिए आदर्श भी देता है, सीख देता है। इसी प्रकार पशु भी अपने व्यवहार से डाँट-डपट का संदेश देते हैं। अत: पाँचों को उनका हित समझाने के लिए दंड, शिक्षा, ताड़न का उपयोग करना उचित है। वैसे शरीर के पैर या समाज के पैर शूद्रों के ऊपर ही समाज का पूरा महल खड़ा है। वैसे भी भारत के अर्थतंत्र में सेवाक्षेत्र का सबसे अधिक प्राय: चालीस प्रतिशत योगदान है। संस्कृत साहित्य में छह वर्ष से सोलह वर्ष तक बालक-बालिकाओं को ताड़ना आवश्यक कही गई है। कविवर शेक्सपियर ने भी कहा है—Frailly thy name is woman कमजोरी तेरा नाम ही स्त्री है। अत: ताड़ना का अर्थ अनुशासन से है, ताकि समाज का प्रत्येक अंग नियमबद्ध होकर काम करे। फिर गो. तुलसी तो स्त्रीजाति के पुजारी थे, उन्होंने सीता के उदात्त चरित्र का वर्णन किया। कौसल्या, सुमित्रा, शबरी और अहल्या मानस के पूजनीय पात्र हैं। मानस को पढ़-पढ़कर भारतीय मजदूरों ने मॉरिशस, फिजी आदि देशों की स्थापना की।

हिंदी साहित्य के सुप्रतिष्ठित कथाकार। पचपन कृतियों में एक दर्जन से अधिक उपन्यास तथा तीन कहानी-संग्रह प्रकाशित। प्रधानतः घटना प्रधान कहानियाँ लिखना, ताकि समाज को कुछ मार्गदर्शन प्राप्त हो सके। सभी कहानियाँ तथा उपन्यास आई.ए.एस. में गहन अनुभव तथा अनुभूति पर आधारित हैं।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के अनुसार—टीकाकारों ने तो वेद, बाइबिल और कुरान में भी बहुतेरे दोष बताए हैं। परंतु उन ग्रंथों के भक्त उनमें दोषों का अनुभव नहीं करते। प्रत्येक ग्रंथ की परीक्षा पूरे ग्रंथ को देखकर ही की जानी चाहिए। यह बाध्य परीक्षा है। अधिकांश पाठकों पर ग्रंथ विशेष का क्या असर हुआ, यह देखकर ही ग्रंथ की आंतरिक परीक्षा की जाती है।

यदि भारत के आधुनिक प्रचलित संदर्भ में देखा जाए तो अधिकारी वह है, जिसके पास प्रभुत्व है, हुकूमत है, अर्थात् जो शासन करता है। अत: ढोल, गँवार, पशु, शूद्र और नारी 'ताड़ना' देने के हकदार हैं, अफसर हैं। आजकल बहुसंख्यक अधिकारी शूद्र एवं नारियाँ हैं। अत: इस अर्द्धाली की आजकल के संदर्भ में शत-प्रतिशत उल्टा ही अर्थ लेना श्रेयष्कर होगा, ताकि गो. तुलसीदास के अज्ञान आलोचकों की जबान बंद हो जाए। उनके इस प्रकार के व्यवहार को लक्ष्य करके ही सामान्य जनता ताड़ना का सीधा अर्थ पीटना लेती है।

अत: नीर-क्षीर-विवेक के अनुसार रामचरितमानस की श्रेष्ठता सिद्ध होती है और है भी रामचरितमानस विश्व के सर्वश्रेष्ठ महाकाव्यों में एक।

४६९, सी. पी. मिशन कंपाउंड,
झाँसी-२८४००३ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९६५०००२५६५

गजलें

● पॉपुलर मेरठी

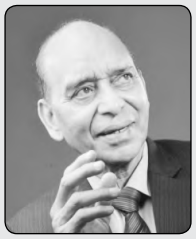

सुपरिचित कवि तथा शायर। देश-विदेश में कई कवि-सम्मेलनों में शिरकत। प्रेम किशोर ठहाका पुरस्कार सम्मान, आजादी का अमृत महोत्सव अवार्ड, काका हाथरसी सम्मान सहित कई सम्मान प्राप्त।

एक

मुकसराने की इजाजत नहीं मिलने वाली
गुल खिलाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

बाद शादी के कहाँ मैं कहाँ बज्म-ए-सुखन
घ्झर से आने की इजाजत नहीं मिलने वाली

कौर कर सकता है बर्दाश्त गणे की आवाज
तुमको गाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

एक दिन ऐसा भी आएगा हसीनों तुमको
दिल दुखाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

अपनी तकरीरों से ऐ दिल को जलाने वालो
घर जलाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

इश्क की कैद से तुम बच के कहाँ जाओगे
भाग जाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

दौर नफरत का रहेगा तो किसी के दिल में
घर बनाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

होश वालों का तो क्या जिक्र है दीवानों को
बड़बड़ाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

जिंदगी लाख गराँ बार हुई जाती है
जहर खाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

अब किसी को भी जहाँ में किसी मुजरिम के खिलाफ
वरगलाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

चाहे मयके से तुम्हें कोई बुलाने आए
मयके जाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

ऐसी जुरअत भी ना करना तुम्हें सामाने-जहेज
बेच खाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

मेहरबाँ तुम पे हैं माँ-बाप ये सच है लेकिन
धन उड़ाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

'पॉपुलर' होश में आ जाओ ना दीवाने बनो
दिल को ढाने की इजाजत नहीं मिलने वाली

दो

बने हो जो रहबर वगैरह-वगैरह
है शोहरत का चक्कर वगैरह-वगैरह

मिरे साथ खुद बैठकर पी चुके हैं
खुमार और सागर वगैरह-वगैरह

नई इक गजल आज छेड़ी है मैंने
कवाफी है जर, पर वगैरह-वगैरह

गलत कह रहे हो कि होंगे बराबर
वसीम और जौहर वगैरह-वगैरह

जहाँ देखिए आज टकरा रहे हैं
मुअन्नस, मुजक्कर वगैरह-वगैरह

सभी एक सफ में नजर आ रहे हैं
गव्विये, सुखनवर वगैरह-वगैरह

तुम्हें शर्म किस बात पर आ रही है
न मतली न चक्कर वगैरह-वगैरह

तरन्नुम के मारे हुओं को खिलाओ
दही और शक्कर वगैरह-वगैरह

सदाएँ ये उट्ठीं मिरे शेर सुनकर
मुकर्रर-सिकर्रर वगैरह-वगैरह

दिखाती है अब तो नई शायरा भी
तरन्नुम का जौहर वगैरह-वगैरह

अदब में ब-हर-दौर जिंदा रहेंगे
जिगर और असगर वगैरह-वगैरह

मियाँ 'पॉपुलर' तोड़कर फैंक भी दो
ये मीना ये सागर वगैरह-वगैरह

तीन

फत्ह करने के लिए मैदान आधा रह गया
आधा पूरा हो गया अरमान आधा रह गया

कर्ज जितनों ने लिये थे हो गए सब लापता
शम'अ की मानिंद घुलकर खान आधा रह गया

कांग्रेस और बी.जे.पी. में बँट गए सूबे तामाम
फिर तो यूँ कहिए कि हिंदोस्तान आधा रह गया

मानता हूँ मैं कि तेरी मेजबानी कम न थी
लौटकर फिर क्यूँ तिरा मेहमान आधा रह गया

सरहदों पर जंग का अंजाम था सर पर सवार
डर के मारे फौज का कप्तान आधा रह गया

तेरा आधा काम खुद इंसान ही करने लगे
काम तेरा अब तो ऐ शैतान आधा रह गया

आपकी ऐसे में आखिर मैं तवज्जो क्या करूँ
आपके आए कदम जब नान आधा रह गया

बारहा मैं कह चुका उस चोर से होशियार रह
तेरे कमरे का हर इक सामान आधा रह गया

नाज जितना था वो सब मुखिया की भैंसे चर गईं
और कल्लू-राम का खलियान आधा रह गया

वालिदा राजी हैं उनकी और वालिद हैं खफा
अब तो शादी का मिरी इम्कान आधा रह गया

आह! अब दो चारपाई की भी गुंजाइश नहीं
खिंच गई दीवार और दालान आधा रह गया

लड़-झगड़कर 'पॉपुलर' वो अपने घर को चल दिया
शायरी रुख्सत हुई दीवान आधा रह गया

३३३ करम अली स्ट्रीट
मेरठ-२५०००२ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२७०४६१४

कुली नं. १२२

● उमेश प्रताप वत्स

प्रतिदिन की भाँति दीपक आज भी स्टेशन पर धीमी गति में आती रेलगाड़ी के कोच नं. ५ के साथ-साथ तब तक दौड़ता रहा, जब तक रेलगाड़ी रुक न गई।

'बाबूजी सामान, मैडमजी सूटकेश। अरे ओ बाबूजी आपका सामान उठवा दें।'

कुछ लोग तो सीधे आगे का रास्ता पकड़ लेते, किंतु कुछ तो ऐसे घूरकर देखते, जैसे उस बेचारे ने कोई गाली दे दी हो। वह भी क्या करे, महँगाई के जमाने में हर यात्री स्वयं ही कुली की भूमिका निभाना बेहतर समझता है। तभी एक मेम साहब गाड़ी से नीचे उतरी तो हाथ में डॉगी बेबी की चैन पकड़े हुए चिल्लाई—

'अरे कोई कुली है?'

(दीपक साथ ही खड़ा था) 'हाँ मेम साहब, मैं हूँ न।'

'तो चलो, गाड़ी में से सारा सामान नीचे उतारो।'

दीपक डिब्बे में चढ़ा तो वहाँ उसकी हमउम्र लड़के (शायद मेम साहब का लड़का था) ने सामान की ओर संकेत किया और दीपक ने एक-एक करके सारा सामान नीचे उतारा। दीपक ने सूटकेश सिर पर रखा, दो बैग बाजू में दाईं ओर तथा एक बैग बाईं ओर टाँगकर चलने लगा तो मेम साहब की कर्कश आवाज से एकदम ठिठका—

'हाँ, पैसे कितने लोगे?'

'मेम साहब, बीस रुपए दे देना।'

'क्या, बीस रुपए! रहने दो, नीचे उतारो सामान, लूट मचा रखी है क्या, दस रुपए मिलेंगे।'

'नहीं-नहीं, मेम साहब, इतना सारा सामान और इस महँगाई में दस रुपए, नहीं-नहीं।' दीपक ने सारा सामान नीचे रख दिया और अपने अँगोछे से पसीना पोंछते हुए मेम साहब को कनखलियों से यों देखा, मानो रोटी का निवाला मुँह तक ले जाकर फिर हाथ वापिस खींच लेनेवाले को निहार रहा हो। मैं उस नौजवान को हताश होते हुए देख रहा था। अकसर मैं रेलगाड़ी से सफर किया करता था और दीपक को जब भी देखता तो वह व्यवहार, बोली-वाणी में अन्य कुलियों से हटकर लगता। कुछ दिन पहले की ही तो बात है, जब मैं गाड़ी से नीचे उतरा तो एक संभ्रांत परिवार

सुपरिचित लेखक। विभिन्न विषयों पर लगभग १४० आलेख कनाडा, यू.एस.ए. सहित देश-विदेश के प्रसिद्ध समाचार-पत्रों में प्रकाशित हो चुके हैं । संप्रति हरियाणा शिक्षा विभाग में हिंदी प्राध्यापक के पद पर कार्यरत।

का शिष्ट लड़का मेरे पास आकर बोला, 'बाबूजी, बाबूजी, आपका बैग।' मैं समझ गया कि था कि यह लड़का विवशता में स्टेशन पर कुली-कार्य कर रहा है।

बैग तो मैं स्वयं ही उठा लूँगा, किंतु मैंने उसके कंधे पर हाथ रखते हुए कहा, 'यह बताओ तुम हो कहाँ के?'

'बाबूजी, मैं सरहंद पंजाब का रहनेवाला हूँ।'

'लगते तो पढ़े-लिखे हो, तो फिर ये···' मेरी बात पूरी होने से पहले ही बोल पड़ा, 'बाबूजी, आया तो था मैं फिल्मों में काम करने, लेकिन भाग्य ने लोगों का वजन उठाना लिख दिया है।'

'फिर तुम वापिस क्यों नहीं जाते?'

'बाबूजी, किस मुँह से वापिस जाऊँ, घर से लड़-झगड़कर, मनमानी करके ही मुंबई आया था, अब वापिस जाऊँ भी तो कैसे? घरवालों के साथ-साथ गली-मोहल्ले वाले भी ताने मार-मारकर मेरा जीना दूभर कर देंगे। बस अब तो मुंबई ही मेरी कर्मभूमि है, यदि किस्मत ने चाहा तो कोई अन्य कार्य ढूँढ़ लूँगा। तब तक गुजर-बसर के लिए यह सबसे उपयुक्त कार्य है।'

मैं उस होनहार नौजवान को देखता रहा। उसके चेहरे से विनम्रता झलक रही थी। मैंने उससे कहा कि कोई काम छोटा-बड़ा नहीं होता, सच्चाई पर चलते रहो, एक दिन सफलता अवश्य मिलेगी। मेरे दिल से आवाज आई कि यह लड़का एक दिन बहुत आगे बढ़ेगा। मैं उस लड़के के बारे में सोचता-सोचता कब ऑटो पकड़कर घर आ गया, मुझे पता ही न चला। बस मेरे सामने उस नौजवान लड़के की ही तसवीर घूमती रही, जो अन्य कुलियों से बिल्कुल भिन्न किस्म का था। उसके व्यवहार से

भले घर की खुशबू आती थी। पेशेवर कुलियों से बिल्कुल अलग दीपक नाम का यह लड़का अपनी मंजिल न पाकर कुछ लाचार तो दिखाई देता था, किंतु हिम्मत न हारी थी। उसकी वाणी में भी मिठास थी। न जाने दीपक जैसे कितने लड़के-लड़कियाँ फिल्मी परदे की वास्तविकता जाने बगैर मुंबई में हीरो बनने के लिए तथा टेलीविजन के परदे पर छाने के लिए हर क्षण सपने बुनते रहते हैं और एक दिन हँसते-खेलते परिवार को बिना बताए उसके हाल पर छोड़कर या जिद करके मुंबई की राह पकड़ते हैं। उस समय वे घरवालों की एक न सुनकर अपने निर्णय को सर्वोपरि मानकर ठीक समझते हैं, क्योंकि वे सोचते हैं कि एक दिन बड़े स्टार बनकर अपने घर-परिवारवालों को अधिक खुशियाँ दे पाएँगे। उनकी सोच में कोई दो राय नहीं है किंतु फिल्मी परदे की जिंदगी परदे पर जितनी आकर्षक, चकाचौंध भरी दिखाई देती है, वास्तव में बिल्कुल इसके उलट उतनी ही कठिन, संघर्षशील एवं षड्यंत्रों से परिपूर्ण होती है। जब फिल्मों की गंध से आकर्षित ये युवक-युवती सच्चाई का मुकाबला करते हैं तो कुछ तो होटलों, क्लबों में लोगों की सेवा करते हैं या फिर रेलवे स्टेशन, ढाबों और वाहनों पर मजदूरी करते-करते मुंबइया छोकरों की तरह चालू किस्म के हो जाते हैं। और कुछ अपराध की दुनिया के हाथों चढ़कर ताउम्र उस दलदल से बाहर आने को तरसते रहते हैं, फिर मुंबई के अँधेरे में ही न जाने कहाँ गुम हो जाते हैं। किंतु पता नहीं क्यों, मेरे मन को लगता है कि दीपक इन सबसे अलग हटकर है, यह लड़का जीवन में आगे चलकर जरूर नाम कमाएगा। और यह सोचता-सोचता मैं अपने प्रतिदिन की दिनचर्या में व्यस्त हो गया। फिर कभी-कभी जब ट्रेन से कहीं जाता तो मुझे दीपक का ध्यान हो उठता और मेरी निगाहें प्लेटफॉर्म पर उसे ढूँढ़ने लगतीं। फिर धीरे-धीरे दीपक की बातें और उसकी सूरत दिमाग में समय के साथ धुँधली होती चली गईं।

मैं अकसर प्रतिदिन प्रात: सैर को जाया करता था, सैर के बाद घर वापिस आता तो सबसे पहले गेट में पड़े अखबार को उठाता और पसीना सूखने तक उसे पढ़ता। आज भी जैसे ही मैंने अखबार उठाया तो फ्रंट पेज पर ही मेन खबर लगी थी कि "मुंबई सेंट्रल रेलवे स्टेशन पर दो खतरनाक आतंकवादियों के ब्लास्ट करने के मंसूबे असफल।" प्रारंभ में हैडलाइन पढ़कर लगा कि हमारे महाराष्ट्र की पुलिस देश में सर्वाधिक चुस्त फोर्स है, अवश्य ही किसी बहुत ही चौकस पुलिस ऑफिसर की बुद्धिमत्ता के कारण यह सफलता मिली होगी और बहुत बड़ा हादसा, जिसमें जाने कितने लोगों की जानें जा सकती थीं। खैर, कल्पनाओं से बाहर निकलकर जब मैंने विस्तार से आगे पढ़ना शुरू किया तो मेरा माथा ठनका···दीपक! (कुछ जाना सा नाम खैर···) दीपक नाम के नौजवान कुली की बुद्धिमत्ता के कारण आतंकवादियों की भयंकर योजना धाराशायी हुई, क्योंकि संदेह होने पर दीपक ने पुलिस की राह पकड़ी और आतंकवादियों का पर्दाफाश किया, किंतु पुलिस की लापरवाही से दोनों आतंकवादी स्टेशन से भागने में सफल रहे और पुलिस ने पूरे क्षेत्र की नाकाबंदी की। खबर पढ़ते ही मेरे सामने उस नौजवान लड़के का चित्र उभर आया, जो एक बार मेरे पास आशा भरी नजरों से मेरा सामान उठाने के लिए विनम्रता से बैग माँग रहा था। मेरी धुँधली यादों से जैसे ही धूल छँटी, मैंने दौड़कर टी.वी. ऑन किया तो न्यूज चैनल पर यही खबर चल रही थी कि एक होनहार युवक की होशियारी से शहर का एक बड़ा हिस्सा बम ब्लास्ट की चपेट में आने से कैसे बचा। टी.वी. रिपोर्टर बता रहे थे कि जब व्यक्ति ट्रेन से उतरे तो सभी कुलियों की तरह दीपक नाम के कुली ने भी दो व्यक्तियों का सामान उठाया और उनके पीछे-पीछे चल दिया, किंतु संदेह होने पर दीपक रेलवे स्टेशन पर स्थित पुलिस चौकी में चला गया। अब हम आपको सारा किस्सा दीपक की जुबान में ही सुनवाते हैं। यह सुनते ही मुझे ऐसा अनुभव हुआ कि जैसे मेरा कोई सगा-संबंधी, कोई अपना सक्रीन पर आनेवाला है, मैं बहुत उत्सुकता से टी.वी. की सक्रीन से चिपककर बैठ गया। मैं बहुत धैर्यविहीन हो रहा था, तभी दीपक का जीता-जागता पूरा चित्र सक्रीन पर आया, मेरी जिह्वा उससे बोलने को आतुर हो रही थी, मैंने सिद्धार्थ की माँ को आवाज लगाई—'उमा! ओ उमा···अरे सुनो तो···देखो वही लड़का···जिसके बारे में मैं अकसर तुम्हें बताया करता था, देखो तो टी.वी. पर उसका इंटरव्यू आ रहा है।' तभी दीपक ने बताना शुरू किया कि प्रतिदिन की तरह जब ट्रेन आई तो लोग अपना-अपना सामान उतार रहे थे, मैं एक यात्री परिवार का सामान ले जाने का मोल-भाव कर रहा था, सामान भी अधिक था। मैं उनसे तीस रुपए माँग रहा था किंतु वे बीस रुपए से अधिक देने को तैयार न थे, तभी दो लोगों ने मुझे आवाज लगाई—अरे सुनो! हमारा शूटकेस ले जाओगे? मैंने कहा, क्यों नहीं बाबूजी, लेकिन पूरे तीस रुपए लगेंगे। वे बोले, हम तुम्हें पूरे सौ रुपए देंगे, चलो जल्दी उठाओ। मैंने फटाफट शूटकेस उठाया, जो काफी भारी था और उनके पीछे-पीछे चल दिया। किंतु मेरे जहन में यही बात घूम रही थी कि एक सूटकेस के लिए बाबूजी सौ रुपए दे रहे हैं, जबकि मैंने तो तीस रुपए कहे थे, मुझे यह हजम ही नहीं हो रहा था, मन कह रहा था कि जरूर कोई गड़बड़ है। ये आदमी भी मुझे गड़बड़ ही लग रहे थे। मैं चुपचाप उनके पीछे चलता रहा और उनकी गतिविधियों पर पैनी नजर रखे हुए था। वे शक्ल से भी संदिग्ध लग रहे थे। उनके चलने, बात करने और इधर-उधर देखने के तरीके से मुझे लगा कि दाल में कुछ काला है और पीछे चलता हुआ यकायक रास्ता बदलते हुए स्टेशन पर ही स्थित पुलिस पोस्ट पर गया और जल्दी-जल्दी सारी बात पुलिस को बताई। जब उन्होंने शूटकेस को खोलकर देखा तो मेरी आँखें फटी-की-फटी रह गईं। पुलिसवालों के मुताबिक शूटकेस में सात-आठ ब्लास्ट का पूरा सामान था। पुलिस अधिकारी ने चार-पाँच जवान लेकर मेरे बताए अनुसार उनका पीछा किया किंतु शायद उन्होंने मुझे पुलिस पोस्ट में घुसते हुए देख लिया होगा, अन्यथा वे शूटकेस के कारण मुझे स्टेशन पर ढूँढ़ रहे होते। रिपोर्टर ने बताया कि पुलिस ने नाकाबंदी कर उन संदिग्ध लोगो को ढूँढ़ना शुरू कर दिया है तथा दीपक के बताए अनुसार उनके स्कैच भी तैयार करवा

लिए हैं। मैंने चैनल बदला तो सभी न्यूज चैनल्स पर एक ही खबर थी, कोई कह रहा था कि पुलिस की नाकामी से आतंकवादी फरार हो गए। कोई ब्लास्ट से हो सकनेवाले नुकसान के आँकड़े बता रहा था तो कोई बार दीपक को बताते हुए दिखा रहे थे। कोई सरकार की आतंकवाद पर ढुलमुल नीतियों को जिम्मेवार ठहरा रहे थे, तो कोई दीपक से इधर-उधर के प्रश्न पूछ रहे थे। जब आपने शूटकेश में ब्लास्ट का सामान देखा तो उस समय कैसा लगा? दीपक, आपको उन पर शक पहली बार कब हुआ? क्या तुम्हें अपनी जान जाने का डर नहीं लगा? यदि तुम्हारी जान को खतरा हो जाता तो? तुम कब से स्टेशन पर काम कर रहे हो? आगे तुम क्या चाहते हो कि सरकार जन सुरक्षा के कैसे उपाय करे? तुम्हारी इस हिम्मत व बुद्धिमत्ता का श्रेय किसे देना चाहोगे? दीपक बारी-बारी सभी प्रश्नों का जवाब देता किंतु तभी दूसरी ओर से कोई अन्य प्रश्न पूछने लगता। वह समझ ही न पाता कि पहले किसके प्रश्न का उत्तर दे, फिर भी वह आधे-अधूरे जवाब देता जा रहा था।

इन सभी प्रश्नों में से यह भी पब्लिक के सामने आ गया कि दीपक एक अच्छे परिवार से संबंध रखता है और फिल्मों में काम न मिलने के कारण घर वापिस न जाकर यही कुली का काम करना शुरू कर दिया। फिर क्या था, इस पढ़े-लिखे युवक की लोगों ने जी भरकर प्रशंसा की।

मैं और उमा जड़ होकर सक्रीन पर दीपक को देखे जा रहे थे। तभी सरकार की ओर से बयान आया कि इस होनहार बहादुर युवक को २६ जनवरी पर गणतंत्र दिवस की परेड में सम्मानित किया जाएगा। जब पत्रकारों ने जनता की प्रतिक्रिया लेनी शुरू की तो हर व्यक्ति दीपक को अपना हीरो बता रहा था। कुछ लोग सरकार से ही जवाब माँग रहे थे कि क्यों न दीपक जैसे पढ़े-लिखे बहादुर युवकों को निठल्ले पुलिसवालों के स्थान पर नौकरी में रखा जाए। कुछ दीपक को बहादुरी पुरस्कार के रूप में पुलिस में नौकरी देने की वकालत कर रहे थे। कुछ सभी को दीपक जैसा बहादुर होना चाहिए, यह दलील दे रहे थे। लोगों में भारी जोश था। आज जनता का हीरो कोई अभिनेता या खिलाड़ी न होकर राष्ट्र-सुरक्षा पर अपने जीवन को खतरे में डालनेवाला यह नौजवान बहादुर दीपक था, जो खतरनाक आतंकवादियों की नाक के नीचे से बम ब्लास्ट से भरा शूटकेस पुलिस के पास पहुँचाकर दुर्दांत योजना को असफल करने में सफल हो सका।

आज मुझे दीपक से कहे अपने वे शब्द याद आ रहे थे कि 'एक दिन तुम बहुत नाम कमाओगे, बड़े आदमी बनोगे।' फिल्मी परदे का हीरो बनने आया दीपक अब जनता का वास्तविक हीरो बन गया था।

१४ शिवदयाल पुरी, निकट आई.टी.आई.
यमुनानगर-१३५००१ (हरियाणा)
दूरभाष : ९४१६९६६४२४

लघुकथा

बैना

• राजेश पाठक

दीनानाथ ने अपने परिवार के साथ हाल ही में उस मोहल्ले में एक भाड़े के मकान में रहना शुरू किया था। वह कुल २०-२५ परिवारों वाला मोहल्ला था। उस मोहल्ले से सटी एक खेलकूद लायक खाली जगह थी, जहाँ उस मोहल्ले के सभी बच्चे सुबह-शाम खेला करते थे। बड़े-बुजुर्ग भी वहाँ घूमा-टहला करते थे। मोहल्ले के लोगों में एक-दूसरे के साथ अच्छा तालमेल था। एक-दूसरे के सुख-दु:ख में सभी भागीदार बने रहते थे। किन्हीं के यहाँ कोई मेहमान या अपने ही घर के बाहर रह रहे कोई लोग घर लौटते तो उनके द्वारा लाए गए संदेश (मिठाइयाँ आदि) मोहल्ले के सभी परिवारों में 'बैना' कहकर बाँटे जाते थे। सप्ताह बीतते-बीतते किसी-न-किसी परिवार में बाहर से कोई-न-कोई मेहमान आ ही जाया करता था और बैने भी घर-घर पहुँच ही जाते। बच्चे तो और भी किसी-न-किसी के यहाँ मेहमान के आने के इंतजार में रहते। बैने में उन्हें मिठाइयाँ जो मिलती थीं! एक दिन की बात है। बच्चों ने देखा कि रीमा दी ससुराल से आई हैं। सभी बच्चे खुश थे कि कल उन्हें मिठाई तो मिलनी-ही-मिलनी है। खेलकूद खत्म होने के बाद सभी बच्चे अपने मकान में लौट आए। हर रोज की तरह कल सुबह तैयार हो सभी बच्चे अपने-अपने स्कूल चले गए। स्कूल से लौटने के बाद दीनानाथ के बेटे अमित ने अपनी माँ से से पूछा—मम्मी! रीमा दी कल अपने ससुराल से आई थीं, उनके यहाँ से बैना तो आया होगा। पहले मुझे बैने वाली मिठाई दो। वैसे भी मुझे मिठाई खाए दस दिन तो हो ही गए होंगे।

अमित की मम्मी ने कहा—रीमा जरूर आई है। पर उनके यहाँ से कोई बैना नहीं आया है।

अमित ने फिर पूछा—क्यों? उनके परिवार से हम लोगों का अनबन हो गया है क्या?

अमित की मम्मी ने उदास हो कहा—नहीं-नहीं, ऐसा कुछ नहीं है। दरअसल बात यह है कि रीमा अब कभी ससुराल नहीं जाएगी।

अमित ने कहा—मैं कुछ समझा नहीं।

बगल में अमित के दादाजी सब सुन रहे थे। वे आए और अमित को अपने कमरे में ले गए, कुछ समझाने।

सहायक सांख्यिकी पदाधिकारी
जिला सांख्यिकी कार्यालय, गिरिडीह
झारखंड-८१५३०१
दूरभाष : ९११३१५०९१७

गजल/गीत

• सुरेश अवस्थी

एक

जिंदगी जिस दिन से मेरी मुसकराने लग गई
जहनियत लोगों की फिर आँसू बहाने लग गई

रौशनी माँगी थी मैंने शहर भर के वास्ते
और ये बस्ती मेरा ही घर जलाने लग गई

वो जो कहती थी नजर से दूर हो जाओ मेरी
मैं चला तो जाने क्यों आँसू बहाने लग गई

धड़कनें तो चल रही थीं रेल सी रफ्तार से
देख ली तसवीर तो फिर नींद आने लग गई

दो

तुम समर्पित हिसाब हो जाओ
प्रेम, पावन किताब हो जाओ।

सबको मिल जाएगा जवाब स्वयं
यूँ बनो, लाजवाब हो जाओ।

कौन चादर से ढाँप पाएगा
तुम तो बस आफताब हो जाओ।

रूप सीता का, ज्ञान शारदा का
लक्ष्मी, बेहिसाब हो जाओ।

जो बिछाते हैं राह में काँटे
उनकी खातिर गुलाब हो जाओ।

कब तलक सहन करते जाओगे
अब उठो इंकेलाब हो जाओ।

इक कयामत तो आ ही जाएगी
तुम जरा बेनकाब हो जाओ।

तीन

सोच कोई पल रहा सघन है
आज बहुत विचलित ये मन है

बाहर बाहर शोर बहुत है
अंदर-अंदर खालीपन है

बार-बार सुधियों ने धोया
फिर भी मैला दिल दर्पण है

तुझसे नहीं शिकायत कोई
मेरी तो खुद से अनबन है

सूरज सिर पर लिये खड़ा हूँ
पावों तले पर बहुत गलन है

शहरों में अपना-अपना है
गाँव में अब भी अपनापन है

तेरे बंदों के सुख-दु:ख में
पूर्ण समर्पित ये जीवन है

गीत (एक)

शरद की चाँदनी सा है
तुम्हारे रूप का दर्पण।
स्वयं के प्राण ही मोहे
तुम्हारे रूप का दर्पण

दिशाओं के मदन बहके
तेरी अँगड़ाइयाँ छूकर
हवाओं के बदन महके
तेरी परछाइयाँ छूकर

चटककर बीच से टूटा
किसी स्तूप का दर्पण
छुआ जो भूलकर उसने
तुम्हारे रूप का दर्पण

फागुनी गंध लिख जाती
तुम्हारा नाम फूलों पर
सावनी छंद रच जाती
तुम्हारी दृष्टि कूलों पर

नदी की धार में उतरा
सुबह की धूप का दर्पण
प्रकृति में छा गया ऐसे
तुम्हारे रूप का दर्पण

गीत (दो)

गल रहे हैं इन दिनों कुछ इस तरह मुखड़े
धूप में बिखरे हुए ज्यों बर्फ के टुकड़े

जेठ के दिन पाँव नँगे और यात्रा रेत पर
धूप काटे एक लड़की महाजनों के खेत पर
रीढ़ की हड्डी चटखती पाँव भी उखड़े
धूप में बिखरे हुए…

द्रौपदी फिर दाँव पर है कौरवों के बीच में
राजसत्ता की लगामें दिख रही हैं कीच में
कौन इनके अब करेगा दूर सब दुखड़े
धूप में बिखरे हुए…

सुपरिचित रचनाकार। हिंदी शिक्षण व साहित्य प्रसार के लिए राष्ट्रपति सम्मान, काका हाथरसी स्मृति हास्य व्यंग्य सम्मान, विष्णु प्रभाकर स्मृति सृजन सम्मान सहित कई सम्मान प्राप्त। आकाशवाणी व टीवी चैनल्स पर दर्जनों बार काव्यपाठ।

११७ एल/२३३ नवीन नगर
कानपुर-२०८०२५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९३३६१२३०३२

कद

● घनश्याम आसूदाणी

"सर, मैंने आपसे कह दिया न, मैं आपके फिटनेस सर्टिफिकेट पर सही नहीं कर सकता।" डॉ. जोशी कुछ तीखे स्वर में कह रहे थे।

"लेकिन सिविल सर्जन साहब, मैंने इससे पहले नागपुर में तीस वर्ष तक विश्वविद्यालय में कानून पढ़ाया है।" श्रीवास्तव सर ने बिना धीरज खोए अपनी बात दोहराई। बाहर जोर की गड़गड़ाहट हुई और बारिश की बूँदें कमरे की खिड़की से अंदर आने लगीं।

"मैं मानता हूँ, आपने कई वर्षों तक विश्वविद्यालय में पढ़ाया है। किंतु मैं कानून के हाथों मजबूर हूँ। हमारे राज्य का कानून कहता है कि विश्वविद्यालय में पढ़ाने हेतु आपकी सभी महत्त्वपूर्ण इंद्रियों का स्वस्थ होना आवश्यक है। आँखें तो इनसान की सबसे महत्त्वपूर्ण इंद्रिय होती हैं। बिना नजर के हजारों कानूनों की लाखों बारीकियों को समझना और समझाना कितना संभव हो पाएगा? और फिर एक शिक्षक का छात्रों से आँखों द्वारा ही तो संपर्क होता है।" बारिश अब कुछ और अधिक बढ़ गई थी। चपरासी ने कमरे की सभी खिड़कियाँ बंद कर दी थीं।

"डॉक्टर साहब, मैं इन सभी वर्षों के दौरान बिना आँखों के ही कानून को समझता और समझाता रहा हूँ। मेरे कई छात्रों ने कई बार विश्व विद्यालय में अव्वल स्थान पाया है। और अनेक छात्र आज देश के नामी वकील और जज भी हैं।" छह फुट से भी कुछ अधिक लंबे कद, छरहरे शरीर और कुछ अंडाकार चेहरेवाले श्रीवास्तव सर आँखों पर काला चश्मा लगाए उसी संयत भाव से कह रहे थे।

"सर, मैं आपकी बात समझ रहा हूँ। मैं आपका आदर भी करता हूँ। मुझे आपके ज्ञान और विद्वत्ता पर कोई शक नहीं है। लेकिन मैं अपने व्यवसाय के प्रति निष्ठावान रहना चाहता हूँ।

सुपरिचित रचनाकार। अब तक १२० से अधिक कहानियाँ, लघुकथाएँ, 'सफर की धूप' (आत्मकथा), 'अस्तित्व की अस्मिता' (कहानी संग्रह), 'अँधेरों का आदर' (कहानी-संग्रह) एवं कई पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित।

और फिर कानून भी इस बात की इजाजत नहीं देता कि मैं किसी ऐसे व्यक्ति को विश्वविद्यालय में पढ़ाने हेतु योग्य घोषित करूँ, जिसकी दोनों आँखें पूर्णत: दृष्टिबाधित हों।" लगातार हो रही बारिश की बूँदों से भीगते, सिकुड़े, ठिठुरे, काँपते पत्तों की घुटी-घुटी सी सरसराहट सारे कमरे में गूँज रही थी।

तभी चपरासी ने सूचना दी कि जस्टिस समीर मेहता बाहर इंतजार कर रहे हैं। डॉक्टर जोशी ने हाथ के संकेत से चपरासी को उन्हें अंदर बुलाने को कहा। जाने कहाँ से दूर कहीं किसी कुत्ते के कराहने की क्षीण सी आवाज सहसा सुनाई दे गई।

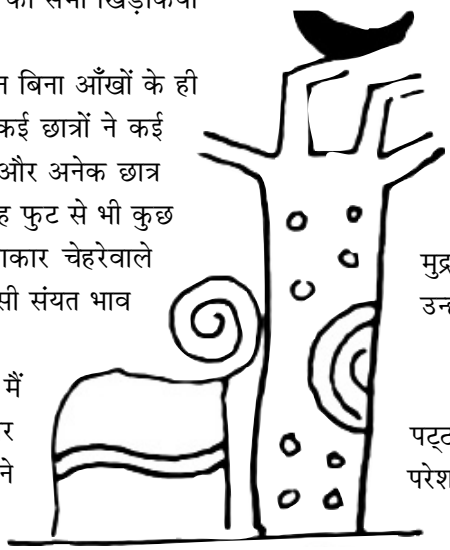

"हैलो डॉ. पराग जोशी! यार, तुम तो देखते-ही-देखते सिविल सर्जन हो गए। हमने तो सोचा था, कहीं शहर के किसी कोने में टपरी डालकर बीमारों की मक्खियाँ भगा रहा होगा।"

तभी जस्टिस मेहता की नजर अत्यंत शांत मुद्रा में कुरसी पर बैठे श्रीवास्तव सर की ओर गई। उन्होंने बड़े आदरभाव से सर के पैर छू लिये।

"सर, आपने पहचाना मुझे?"

"हाँ, भाई क्यों नहीं, मेरा लाड़ला समीर पट्ठा। एक ही दिन में दसियों सवाल पूछकर मुझे परेशान कर देता था। आज बीस साल बाद भी मेरे पट्ठे की आवाज वही है। कहो भई, इतने सालों

में कहाँ से कहाँ पहुँचे? अब तो शादी-वादी भी कर ली होगी। तब तो केवल लड़कियाँ घुमाते थे। याद है कुछ?" कहते-कहते श्रीवास्तव सर के चेहरे पर हल्की मुसकान आ गई।

"सर, मैंने पाँच साल तक मुंबई हाईकोर्ट में वकालात की। फिर गुजरात हाईकोर्ट में जज नियुक्त हो गया। अभी पिछले ही महीने यहाँ मध्य प्रदेश हाईकोर्ट में चीफ जस्टिस बनकर आया हूँ। यह पगला पराग जोशी मेरे साथ स्कूल में पढ़ता था। यहाँ भोपाल आया तो पता चला, यह निकम्मा भी सिविल सर्जन बनकर यहीं आ गया है। सहज ही विश्वास नहीं हुआ कि इसके जैसा एक नंबर का आलसी और ढब्बू प्राणी सिविल सर्जन भी बन सकता है। इसीलिए तसदीक करने चला आया। और किस्मत देखिए, आज इतने साल बाद मुझे आपके भी दर्शन हो गए। सर, मैं सच कहता हूँ, आज यदि मुझे कानून की थोड़ी-बहुत भी समझ है तो वो केवल आप की बदौलत है। अरे, मैंने तो आपसे यह पूछा ही नहीं कि आप यहाँ भोपाल में कैसे आए हैं?"

"अरे भाई, मैं पिछले महीने नागपुर विश्वविद्यालय से रिटायर हुआ तो यहाँ भोपाल के माखनलाल चतुर्वेदी विश्वविद्यालय ने मुझे पाँच वर्ष के लिए पुनर्नियुक्ति पर बुला लिया, सो चला आया।"

"वेरी गुड। पाँच वर्ष ही क्यों, सर आप तो अभी और पचास वर्ष तक पढ़ा सकते हैं। आप जैसे प्रतिभाशाली व्यक्ति से कानून पढ़ने का सौभाग्य कुछ भाग्यवान छात्रों को ही मिल पाता है। आप जैसे ज्ञानी शिक्षकों ने ही इस देश के कानूनों को सही मायने में अर्थ और आकार प्रदान किया है। हम तो केवल लकीर के फकीर बनकर कानून की गुलामी करते हैं। मैं अभी आपको अपने घर ले जाऊँगा। मेरा बेटा भी कानून की पढ़ाई कर रहा है। वह आपसे मिलकर बहुत खुश होगा। वैसे आप इस निखट्टू जोशी के दफ्तर में क्या कर रहे हैं?" अब तक बारिश बहुत बढ़ गई थी। फिर एक दिल दहला देनेवाली गड़गड़ाहट हुई।

श्रीवास्तव सर ने जस्टिस मेहता की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। केवल उनके मुखपर एक रहस्यमय सी मुस्कान फैल गई। उसी समय सारे अस्पताल की बिजली गुल हो गई और कमरे में एक अंधकार सा छा गया। वातावरण की स्तब्धता में गीले पत्तों की दबी-दबी सी सरसराहट अब भी सुनाई दे रही थी। तभी श्रीवास्तव सर ने अपनी मुड़ी हुई सफेद छड़ी खोल ली और कमरे का दरवाजा टटोलते हुए बाहर की ओर जाने लगे।

"ओके डॉक्टर जोशी, आपके सहयोग के लिए बहुत-बहुत धन्यवाद। और समीर, इस बार मैं तुम्हारे घर नहीं आ पाऊँगा। फिर कभी भोपाल आया तो जरूर आऊँगा। मुझे अभी शाम की ट्रेन से ही नागपुर लौट जाना होगा।"

"पर सर, आप तो यहाँ विश्वविद्यालय में जॉइन करनेवाले थे न?" किंतु समीर मेहता के शब्द श्रीवास्तव सर के कानों तक नहीं पहुँचे। वे अपनी छड़ी घुमाते हुए कमरे से बाहर जा चुके थे। फिर बहुत देर तक धीरे-धीरे दूर जाती हुई उनकी छड़ी की ठक-ठक सुनाई देती रही। बारिश और गरमी के कारण कमरे में बहुत उमस हो गई थी। डॉक्टर जोशी ने टेबल पर पड़ा अपना टॉर्च जला लिया। टॉर्च की मध्यम रोशनी में जस्टिस मेहता ने टेबल के कागजों पर एक सरसरी नजर दौड़ाई तो उनके चेहरे पर रोष के तीव्र भाव उभर आए।

"पर सर, आप तो यहाँ विश्वविद्यालय में जॉइन करनेवाले थे न?" किंतु समीर मेहता के शब्द श्रीवास्तव सर के कानों तक नहीं पहुँचे। वे अपनी छड़ी घुमाते हुए कमरे से बाहर जा चुके थे। फिर बहुत देर तक धीरे-धीरे दूर जाती हुई उनकी छड़ी की ठक-ठक सुनाई देती रही। बारिश और गरमी के कारण कमरे में बहुत उमस हो गई थी। डॉक्टर जोशी ने टेबल पर पड़ा अपना टॉर्च जला लिया। टॉर्च की मध्यम रोशनी में जस्टिस मेहता ने टेबल के कागजों पर एक सरसरी नजर दौड़ाई तो उनके चेहरे पर रोष के तीव्र भाव उभर आए।

"अरे भाई समीर, आज तो ईद का चाँद बारिश में निकल आया है। कितना अजीब संयोग है कि मैं और तुम इतने साल बाद फिर यहाँ भोपाल में आकर मिले हैं। कहो, तुम क्या लोगे? चाय-कॉफी या कुछ ठंडा? वैसे तुम इतने शांत और गंभीर क्यों हो गए हो?"

"नहीं-नहीं, तुम कुछ तकलीफ मत करो। अभी मैं कुछ जल्दी में हूँ, फिर कभी आ जाऊँगा।"

जस्टिस मेहता को लगा कि अगर वे वहाँ कुछ देर और रुके तो शायद उनके लिए साँस लेना भी दूभर हो जाएगा। वे कुरसी से उठकर खड़े हो गए। उन्हें महसूस हुआ कि जाने क्यों, उनका कद कुछ बौना हो गया था। वे एक-एक कदम दरवाजे की ओर बढ़ने लगे। कमरे से बाहर आए तो उनका सिर अनायास ही कुछ झुक गया था। बारिश अब कुछ थम गई थी। किंतु सारा आकाश बादलों से बुझा हुआ था। उस घने अँधेरे में एक भी सितारा नहीं टिमटिमा रहा था।

असिस्टेंट प्रोफेसर, अंग्रेजी
आनंद निकेतन कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर, बड़ौदा
जिला-चंद्रपुर-४४२९१४ (महा.)
दूरभाष : ७७०९४६८०७७

अविस्मरणीय वैदिकजी

● राहुल देव

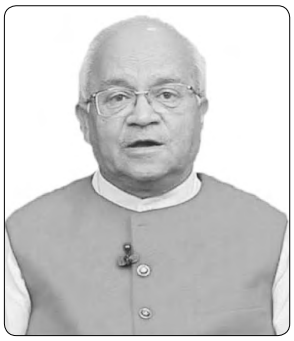

(३०.१२.१९४४—१४.३.२०२३)

ह में भी सही विचार आता है तो समय निकल जाने के बाद। उनके इतने सुदीर्घ, सक्रिय, बहुआयामी जीवन और स्वयं से परिचय तथा साहचर्य के कई वर्षों बाद भी मैं वैदिकजी के बारे में कितना जानता हूँ? कहना होगा कि जो उनके बारे में और उनको सुन तथा पढ़कर जान सका, कुछ अवसरों उनके साथ चर्चाओं में जो उनसे सुना, उसके अलावा कुछ विशेष नहीं। उनके साथ कई मंचों पर साथ रहा, कई बार हम एक ही गाड़ी से आए-गए, दो-तीन बार वे घर आए, लेकिन ऐसे समृद्ध जीवन और कृतित्व वाले असाधारण व्यक्ति को क्या इतने से जाना जा सकता है, जब तक टिककर उसके साथ बैठा न जाए, उसके जीवन और विचार की विविधताओं और पक्षों पर गंभीरता से उससे पूछा न जाए, सुना न जाए? बाहरी जिंदगी और कामों के बारे में तो हम जान जाते हैं, लेकिन एक भरपूर और वैविध्यपूर्ण जीवन के अनिवार्य सुखों-दुखों, आंतरिक उतार-चढ़ावों, समस्याओं, कष्टों, जटिलताओं, संघर्षों, अंत:करण की गुत्थियों का स्पर्श किए बिना क्या किसी को ठीक से जानना संभव है? अब पछता रहा हूँ, यह बुद्धि पहले क्यों नहीं आई!

हम अपने साथ के महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों को अजर-अमर समझकर उन्हें उनकी संपूर्णता में जानने के प्रयास लगभग करते ही नहीं हैं। वैसे तो खुद को भी चिरजीवी न मानकर खुद को गहराई से जानने की कोशिश करने वाले भी कम ही हैं। तात्कालिक के चक्कर में महत्त्वपूर्ण और दीर्घकालिक को टालते जाते हैं। वैदिकजी के बारे में यह गलती मैंने भी की है। वे असाधारण थे, यह उनको जानने वाला हर व्यक्ति जानता था। अकारण नहीं था कि संसार भर में, विविध क्षेत्रों में उनके मित्र, प्रशंसक इतनी बड़ी संख्या में थे कि हममें से हरेक को ईर्ष्या हो सकती थी। उनका जीवन-वृत्त ही असाधारण कामों, हिंदी के लिए बड़े और ऐतिहासिक संघर्षों, बौद्धिक-अकादमिक-पत्रकारीय और अर्ध-राजनयिक उपलब्धियों-सम्मानों और अनथक सक्रियताओं-सरोकारों से भरा हुआ था। इसके बावजूद मेरी जानकारी में उनके जीवन और कृतित्व पर कोई एक पुस्तक लिखी नहीं गई है। उनके जाने का समाचार परदेश में जानने के बाद उनके बारे में सोचते हुए ही मुझे यह विचार आया। पहले आना चाहिए था। आशा करता हूँ, परिजन और मित्र यह काम हाथ में लेंगे।

दरअसल मैं उनसे कई मामलों में ईर्ष्या कर सकता हूँ। उनकी जबर्दस्त स्मृति, उसमें दर्ज सैकड़ों महत्त्वपूर्ण घटनाएँ, परिघटनाएँ, लोग, अनुभव, ज्ञान ये सब कीमती थे। अस्सी के पास पहुँचने के बावजूद उम्र को ठेंगा दिखाते उनके उत्साह, ऊर्जा और स्फूर्ति। हर समय किसी-न-किसी उपयोगी काम में सक्रिय और व्यस्त रहने की प्रकृति। यह सब जानते हैं कि उनमें घटनाओं, बड़े लोगों, राष्ट्रपतियों-प्रधानमंत्रियों आदि के साथ अपने अंतरंग संबंधों को सहज बात से प्रसंग या प्रसंगेतर संदर्भ में भी बढ़ा-चढ़ाकर बताने की आदत थी। इतनी कि सत्य और कल्पना को अलग करना कठिन हो जाता था। लेकिन उनके राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय संबंध और निकटताएँ जब अकसर तसवीरों के रूप में सामने आ जाते थे तो लोहा मानना पड़ता था। मैं नहीं समझता, समूचे हिंदी जगत् में उनसे ज्यादा वैश्विक संपर्कों का कोई दावा कर सकता है।

सबके प्रति स्नेहशीलता और सबको मित्र बना लेने का उनका गुण जबर्दस्त था। संबंध बनाते थे तो पूरे घर से, पत्नियों-पतियों-बच्चों से। उनमें सच्ची रुचि लेते थे। एक बार कहीं से बढ़िया गजक आई तो उसे मल्लिका को देने घर आए, जबकि मैं बता चुका था कि उस समय बाहर नहीं रहूँगा। उन्हें एक और प्रशंसक मिल चुका था। उनकी बहुभाषिता और बहुश्रुतता का एक प्रत्यक्ष अनुभव है पिछले वर्ष का। हम दोनों गाड़ी से कहीं साथ जा रहे थे। ऐसा अकसर होता था, क्योंकि दोनों ही गुरुग्राम में रहते थे, इसलिए आने या जाने में आधे से ज्यादा रास्ते का साथ हो जाता था। हम बातें कर रहे थे कि उनके फोन पर एक कॉल आई। वैदिकजी ने करने वाले विदेशी व्यक्ति का फौरन नाम लेते हुए एक ऐसी भाषा में सहज और प्रवहमान बात करनी शुरू की, जिसे मैंने कभी नहीं सुना था। इतना साफ था कि दूसरी ओर के सज्जन से उनकी भरपूर घनिष्ठता थी। बात पूरी होने के बाद मैंने पूछा, यह कौन सी भाषा थी वैदिकजी, तो सहज बोले—उज़बेकी। फिर उस उच्च पदस्थ मित्र के बारे में बताने लगे। तब समझ में आया कि जब वे कहते थे कि बहुत सी भाषाएँ जानते थे तो सच कहते थे। ऐसे ही एक बार किसी से अंग्रेजी में बतियाते सुना तो पाया कि उसमें भी उनकी दक्षता उच्चस्तरीय थी। लेकिन क्या मजाल है कि हिंदी बोलते हुए वैदिकजी की भाषा से उनके इतनी सारी भाषाएँ जानने का आभास भी हो जाए आपको। आज के हिंदी लेखकों-पत्रकारों के मुँह से सहज फूटने वाली हिंग्लिश से वे उतने ही अछूते रहे, जितने शायद किसी भी तरह की वैचारिक संकीर्णता से।

इससे पहले उनसे बेहद प्रभावित हुआ था एक दृश्य से। पत्रकार हेमंत शर्मा का एक पारिवारिक आयोजन था। हेमंत को जानने वाले जानते हैं कि उसका कोई पारिवारिक या सामाजिक-सांस्कृतिक आयोजन

गिने-चुने परिजनों और दोस्तों के साथ नहीं होता। जिसमें कम-से-कम २००-२५० लोग न हों, वह हेमंत का आयोजन नहीं हो सकता। ऐसे ही एक अवसर पर होटल के सभाकक्ष में प्रवेश किया तो पाया, बड़ी दावतों में जैसे आजकल बाकायदा एक स्वागत स्थल बनाने का रिवाज है, जहाँ कुछ युवक-युवतियाँ आपके स्वागत के लिए तैनात रहते हैं, वैसी एक मेज पर उन संभ्रांत सेवादारों के बीच जगह बनाकर उनकी जैसी कुरसी पर विराजमान वैदिकजी हाथ से अत्यंत सुघढ़ लिखावट में अपना दैनिक लेख लिख रहे हैं, आने-जानेवालों और शोर-शराबे से अनजान एकाग्रचित्त लिखने में डूबे हुए। मैंने चुपचाप दो तसवीरें खींचीं और हट गया। बाद में उन्हें भेज दीं। देखकर प्रसन्न हुए। ऐसे ही एक टीवी स्टूडियो की एक लड़खड़ाती मेज-कुरसी पर अपना लेख लिखकर सहज भाव से फ्लोर पर आकर चर्चा करते वैदिकजी को देखा है। वे कहीं भी, कभी भी, किसी भी हाल में अपना यह दैनिक लेखन-यज्ञ पूरा कर लेते थे। उनके लेखों का ही संकलन किया जाए तो जाने कितने खंड बन जाएँगे। पुस्तकें, पुस्तिकाएँ, परचे अलग हैं।

वैदिकजी की हिंदीनिष्ठा और उसके लिए संघर्ष की गाथा तो इतिहास बन चुकी है। हमारे जैसे लोग तो उस समय हिंदी में आए, जब हिंदी की बात करना, हिंदी में काम करना चलन में आ चुका था। हमने कोई नया काम नहीं किया, अपने से पहली पीढ़ी के बड़े लोगों के बनाए हुए रास्ते पर चलने के अलावा। वैदिकजी तो विदेश नीति जैसे विषय में, जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय जैसे तत्कालीन अंग्रेजी और वामपंथ के गढ़ में हिंदी में अपना शोधप्रबंध लिखने की जिद करके उसे संसद् तक पहुँचा देने और अंतत: जनेवि प्रशासन को झुकाने वाले आधुनिक काल में पहले व्यक्ति थे। उनके उस एक पुरुषार्थ से कई पीढ़ियाँ आज तक प्रभावित-प्रेरित होती रही हैं। यह रेखांकित करना भी आवश्यक है कि वैदिकजी अकेले हिंदी के योद्धा नहीं, अंग्रेजी के वर्चस्व के खिलाफ सारी भारतीय भाषाओं की एकजुटता की अनिवार्यता स्थापित करने वाले और भारतीय भाषा आंदोलन के माध्यम से ठोस प्रयास करने वाले भाषा-नेता थे। उन्होंने देश-विदेश में कितनी जगहों-मंचों पर कितने भाषण दिए, कितने पुरस्कार और सम्मान प्राप्त किए, यह गिनती करना असंभव है। इन बातों का हिसाब रखें, इतने अभिमानी वे नहीं थे। मैंने उनके मुँह से अपने सम्मानों आदि की बात कभी नहीं सुनी।

इतना विपुल और नियमित लेखन करने वाला पत्रकार अपने लंबे पत्रकारीय जीवन में सभी तरह की राजनीतिक विचारधाराओं के वरिष्ठ लोगों का मित्र बना रहा, बावजूद इसके कि कोई विचारधारा, पार्टी, सरकार और सत्ताधारी उनकी आलोचना से बची नहीं। इस विरल उपलब्धि का एक बड़ा कारण तो यह रहा कि वे उन बातों का समर्थन और प्रशंसा भी करने से हिचकते नहीं थे, जो उन्हें ठीक लगती थी। वामपंथियों से हालाँकि उनकी कभी नहीं बनी, जैसा स्वयं उनकी विद्वान् बेटी अपर्णा ने लिखा है। कई बार उनकी प्रशंसा भी चौंकाती थी और आलोचना भी। लेकिन यह परम स्वाभाविक है, क्योंकि सबका किसी भी बात पर सहमत होना असंभव है। हम अपनी दृष्टि से ही दूसरों और हर चीज को देखते हैं। कह सकते हैं कि यह बौद्धिक रूप से सुरक्षित बने रहने की रणनीति भी हो सकती है। लेकिन वैदिकजी के बारे में ऐसे बौद्धिक चातुर्य की बात सोचना मुझे ठीक नहीं लगता। यह उनकी लगभग निरपेक्ष प्रकृति का ही चिह्न मानता हूँ। वे वैचारिक छल-छद्म वाले चिंतक नहीं थे। उनमें कटुता और शत्रुता के तत्त्वों का सर्वथा अभाव था। मैंने उनसे कभी किसी भी व्यक्ति के बारे में बुरा नहीं सुना। संवेदना-विचार-व्यवहार की यह अजातशत्रुता भी उन्हें विलक्षण बनाती है।

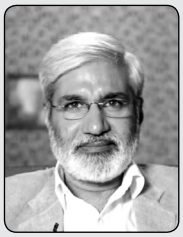

राहुल देव ४० वर्षों से पत्रकार हैं। हिंदी और अंग्रेजी तथा मुद्रित और टी.वी. दोनों माध्यमों में शीर्ष-स्तरीय काम किया। आजतक से टी.वी. पत्रकारिता की शुरुआत करके दूरदर्शन न्यूज, जी न्यूज, जनमत में एंकर तथा अन्य शीर्ष जिम्मेदारियाँ निभाईं। सी.एन.ई.बी. न्यूज चैनल के प्रधान संपादक व मुख्य कार्यकारी अधिकारी रहे। २०१५ से २०१९ तक १६वीं लोकसभा में माननीय लोकसभा अध्यक्ष द्वारा गठित अध्यक्षीय शोध कदम के मानद सलाहकार रहे। संप्रति केंद्रीय हिंदी शिक्षण मंडल के सदस्य हैं।

एक दूसरी बात कहना जरूरी है। अपनी बुद्धिमत्ता, व्यापक, प्रचुर और विविध उपलब्धियों, संपर्कों, अनुभवों के बावजूद तब भी जब वे अपने अनुभवों के बयान में सत्य और कल्पना का वह बहुपरिचित मेल कर देते थे, उनकी पारदर्शी निश्छलता, निर्वैरता और एक खास तरह का भोलापन बराबर मौजूद रहता था। अपने ऊँचे संपर्कों और अनुभवों के ऐसे रोचक और अकसर हास्यास्पद हो जाने वाले कथन में भी वे कभी अहंकारी और दंभी नहीं लगते थे।

हर समय किसी-न-किसी वैचारिक जुगत में लगे रहने वाले वैदिकजी पिछले कुछ महीनों से एक नई योजना को मूर्त करने में जुटे थे। दक्षेस देशों के पत्रकारों का एक मंच बनाना, जो दक्षिण एशिया में सद्भावना और एकता को संभव बनाने में अपनी भूमिका निभा सके। उन्हें इसके लिए अपेक्षाकृत युवा अनुभवी पत्रकारों की तलाश थी। मुझे जिम्मेदारी देनी चाही, लेकिन मैंने विविध कारणों से अक्षमता और अयोग्यता जताई। कुछ वैकल्पिक नाम सुझाए, जो उन्हें अच्छे लगे। नहीं जानता, योजना कितनी आगे बढ़ पाई थी। इस श्रद्धांजलि का अंत उनके अचानक देहत्याग की खबर पाकर ट्विटर पर अपनी तात्कालिक प्रतिक्रिया से करना चाहूँगा।

वैदिकजी जैसा न उनके जीवन काल में कोई था, न अब है। जब वे अपनी अक्षुण्ण ऊर्जा-बहुआयामी सक्रियता-चिंतन-लेखन-यात्राओं-व्याख्याओं-व्याख्यानों में पूर्ववत् व्यस्त रहते हुए अचानक हमारे हिंदी जगत् को गरीब बनाकर चुपके से उधर चले गए हैं, सीखने-प्रेरणा पाने की समृद्ध विरासत छोड़कर। नमन!

साअ

१९०, नैशनल मीडिया सेंटर
एन.एच.-८, गुरुग्राम-१२२००२ (हरियाणा)

राम झरोखे बैठ के

पैदाइशी रौंदू कथा

• गोपाल चतुर्वेदी

कहते हैं कि बच्चा रोते हुए ही जन्म लेता है। अधिकतर की याददाश्त कमजोर होती है। वे धरती पर अपने अवतरण की दुर्घटना को भूलकर हँसने-मुसकराने लगते हैं। कुछ की स्मृति ऐसी भयंकर है कि जन्म की त्रासदी उन पर जीवनपर्यंत हावी रहती है। उनका रौंदूपन स्वभाव और शक्ल पर हुसैन के घोड़े सा अंकित रहता है। हम इस तथ्य के कायल हैं कि भारत में भौगोलिक ही नहीं, इनसानी विविधता भी है। नाटे, लंबे, गोरे, काले, दुबले-मोटे, भद्दे-सुंदर, हर तरह के लोग इस देश की शोभा और शृंगार हैं।

कल ही की घटना है। हम अपने स्कूटर में तरल प्राण-वायु यानी पेट्रोल भरवाने गए तो वहाँ हमारे अतीत के सहपाठी और वर्तमान के उद्योगपति पी. लाल अपनी बड़की गाड़ी में विराजे, क्यू में प्रतीक्षारत थे। उन्होंने हमें पहचानने की कृपा कर महँगाई का रोना रोया, 'आजकल, पेट्रोल फलों से महँगा है। कहीं जाओ तो उधर पेट्रोल जलता है, इधर दिल। इस मूल्य-वृद्धि ने जीना मुहाल कर रखा है।' हमने उनके चेहरे का अध्ययन किया। उस खाए-पिए चेहरे पर दर्द की रेखाएँ उभर रही थीं। हमें शक हुआ कि यह अस्थायी न होकर स्थायी है? उनसे असहमत होने का प्रश्न ही नहीं था? बढ़ती महँगाई से कौन त्रस्त नहीं है? सभी उससे समान रूप से पीड़ित हैं।

अपना तो पेट भरने का खतरा है। यह हम ही जानते हैं कि कैसे 'हम दो, हमारे एक' का गुजारा हो रहा है? पी. लाल तो एस.यू.वी. और चालक सज्जित हैं। इन्हें क्या कष्ट है? कहीं यह किसी नेता की तरह हमसे शाब्दिक संवेदना का नाटक तो नहीं कर रहे हैं? मन ही मन हमारी दुर्दशा पर खुश होकर? हमने उनके चेहरे के भाव फिर से ताड़ने की कोशिश की। कहीं हमारी आँखें धोखा तो नहीं खा रही हैं? यों इधर हर दल का जनता को धोखा देना एक राष्ट्रीय मिशन है। वह चाहे समाजवादी हो या साम्यवादी या राष्ट्रवादी। कौन कहे इस छल के कितने शिकार हैं? पी. लाल का चेहरा हमें वाकई उदास लगा। उनकी बारी आने तक के अंतराल में हमने जानना चाहा, 'और सब कुशल-मंगल तो है?' उन्होंने न कहने के अंदाज में मुंडी हिलाते हुए बताया, 'यही तो रोना है।' फिर उन्होंने हमें घर निमंत्रित करने की कृपा की, 'कभी घर आओ, फोन करके,' कहकर अपना कार्ड थमा दिया, जिसमें नाम, फोन नंबर और पता था।

पेट्रोल भरवाने के बाद हम नौकरी निभाने दफ्तर रवाना हो गए, यह सोचते हुए कि हम कितने भाग्यशाली हैं? बेरोजगारी की महामारी के पहले ही से बाबू बन गए, वरना रोज कतार में लगकर हर प्रकार के दफ्तर के चक्कर काटते, जुगाड़ भिड़ाते, माता-पिता की पूँजी फूँककर उल्लू बनते सफेदपोश ठगों से और फिर भी निराशा ही हाथ लगती। कौन कहे, तब हमारी शक्ल पर भी पी. लाल, यानी प्यारे लाल जैसी ही उदासी छाती। तब और अब की इस तुलना से मन में खुशी की लहर सी दौड़ गई। हम एक कॉलेज के सामने से गुजरे। वहाँ छात्रों की आशा और उत्साह की मुद्रा से हम काफी प्रभावित हुए। हमने कामना की कि ऊपर वाला इतनी कृपा करे कि यह मुद्रा जस की तस बनी रहे। नहीं तो हर भौतिक संपत्ति और सुविधा के बावजूद प्यारे लाल 'नानक दुखिया सब संसार' के जीते-जागते उदाहरण बने हुए हैं।

हमारे अंतर में फिर संदेह की घटाएँ उभर आईं। क्या वाकई प्यारे लाल दुखी हैं? कहीं वह पीड़ित होने का दिखावा तो नहीं करता है? हमने चाय के चलते-फिरते खोखों से लेकर ढाबों तक की भीड़ में देखा है, कई बुद्धिजीवियों को। जब कोई चाय या नाश्ता-खाना खाकर भी उसका बिल न चुकाए, न मुसकराए, बस रौंदू हाव-भाव प्रदर्शित करता रहे, तो वह शर्तिया बुद्धिजीवी है। उसे देखकर प्रतीत हो कि यह एकल इनसान सारे संसार के दुःख-कष्ट, भूख के भार से यूक्रेन बना हुआ है। इसके मन में शर्तिया कोई-न-कोई संघर्ष छिड़ा हुआ है। इसके चलते उसकी मुसकान छिन गई है, खुशी तिरोहित हो गई है, दूसरों की चिंताओं ने इसका सुख ऐसा हरा है, जैसे द्रोपदी का चीर-हरण हो।

कहीं प्यारे लाल को बुद्धिजीवी बनने का मानसिक मर्ज तो नहीं लग गया है? फिर हमें खुद पर हँसी आई। जिस व्यक्ति ने कभी भी पढ़े-लिखे या ज्ञानी-विद्वानों को घास नहीं डाली है, कॉफी-टेबल की किताबों को भी खाली-पीली सजावट के लिए खरीदा है, वह तथाकथित बुद्धि के रोग से कैसे पीड़ित होगा? भले ही वह चिर दुखी दिखे, पर अपनी फैक्टरी और धंधे में कर्मचारियों का सतत आर्थिक शोषण उसका इकलौता उसूल है। वह सिर्फ अपने मुनाफे की सोचता है, किसी अन्य की समस्या का नहीं। उसकी रौंदू मुद्रा का राज ऐसा रहस्य है, जिससे पार पाना कठिन है। जानकार इस मत के हैं कि ऊपरवाले ने उसकी शक्ल ही ऐसी बनाई है। उनके अनुसार वह हँसे, तब भी रोता दिखे। हमें तो बचपन से ही वह रौंदू नजर आता है। तो हम क्या समझें कि वह अनवरत हँसे जा रहा है? यह संभव नहीं है।

लिहाजा हम ने दफ्तर की कैंटीन में इस विषय पर परिचितों से विचार-विमर्श किया। बहुमत इस पक्ष का था कि शक्ल-सूरत किसी के भी व्यक्तित्व का आईना नहीं है। चूहा देखने में कितना डरपोक है? घर के हर इनसान से बचकर रहता है। पर वही चूहा, सोने के दौरान, पैने दाँत गड़ाकर किसी व्यक्ति को कुतरे तो अस्पताल जाने की नौबत तक आ जाती है। दफ्तर के सेक्शन अफसर देखने में भले ही डकैत दिखते हों, पर हैं अत्यंत सहज और शरीफ आदमी। गरमियों में कोई कैंटीन के कूलर के सामने सोए या दफ्तर की मेज पर,

वह उसे जगाते नहीं हैं। वह जानते हैं कि कर्मचारी अल्ल सुबह लोकल ट्रेन से चले हैं। दिन में, वह भी लंच के बाद नींद आना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है।

वहीं हमारा अफसर सीधा-सादा और भोला इनसान नजर आता है। पर व्यवहार और कंडक्ट में बेहद काँइयाँ और चालू है। कतई काँटों भरा कैक्टस है। मुँह पर जितनी मीठी बात करता है, काररवाई उतनी ही कठोर। हमारे कुछ सहयोगी इस राय के हैं कि वह रँगा सियार है। कुछ उसे सूरत से खरगोश व सीरत से बौराया शेर मानते हैं। फाइल दिखी नहीं कि वह अपने से कनिष्ट अधिकारी-कर्मचारी का सरकारी काम तमाम करता है। उसकी कार्यकुशलता की ऐसी चीर-फाड़ होती है कि उसे फिर सामान्य श्रेणी का वर्कर भी सबित करना उसके प्रति पक्षपात लगे ? कम ही होंगे ऐसे अधिकारी, जो इतने न्यायसंगत हों या इनसाफप्रिय कि किसी के सरकारी जीवन में सुधार और सच में इतने रुचि लें।

कटु सत्य है कि जो व्यक्ति जैसा दिखता है, वह वैसा नहीं है। हमने निश्चय किया कि प्यारेलालजी के घर जाकर दरयाफ्त करें कि वह कौन सी गुप्त पीड़ा है जिसने उन्हें इस श्रेष्ठ किस्म का रौंदू बना दिया है कि वह रौंदुओं का भारत रत्न लगे। हमने उनके दिए कार्ड के नंबर पर संपर्क किया। उनके सचिव ने फोन उठाया और सूचित किया कि वहाँ प्यारे लाल नामक कोई व्यक्ति नहीं है। हमने दुबारा श्री पी. लाल से बात करने की इच्छा जताई तो उसका प्रश्न था कि क्या काम है, और क्यों मिलना चाहते हैं? अपनी व्यस्त दिनचर्या में वह बमुश्मिल पहले से निर्धारित सज्जनों को दर्शन का समय दे पाते हैं। हम हतोत्साहित न हुए। कई मंत्री भी व्यस्तता का यही नाटक करते हैं और अधिकतर उच्च अधिकारी भी। हमने उसे बताया कि पी. लाल हमारे बचपन के मित्र हैं और उन्होंने स्वयं ही हमें घर पर आमंत्रित किया है। उसने लगभग रोआसी आवाज में पी. लाल से बात करवाई। प्यारे लाल ने फोन पर चहकते स्वर में घर पधारने को कहा।

हमारे मन में स्पष्ट हो गया कि चेहरे पर रौंदू भाव का ताल्लुक आर्थिक समृद्धता या विपन्नता से नहीं है। ऐसा नहीं है कि समृद्ध सदा सुखी हो और निर्धन हमेशा दुखी। हमने प्यारे के घर में पाया था कि नाश्ते को देखते ही उनके चेहरे के उदासी के रंग कुछ और गाढ़े हो चले थे। वही हमने गरीब को भंडारा के भोज में खाते देखा है। उसके चेहरे पर संतोष, सुख और दिव्य आनंद का ऐसा भाव उभरता है, जिसका वर्णन शब्दों के परे है।

हमें उत्सुकता थी उनका महल, कोठी या आवास देखने की। हम नियत वख्त पर पहुँचे तो गार्ड ने फोन पर अंदर से अनुमति ली और हमें घर से आए एक सज्जन के हवाले कर अपनी ड्यूटी पर लग गया। हम एक आकर्षक और बड़े से हरे-भरे लॉन से गुजरकर उनके किलेनुमा बँगले में दाखिल हुए। एक हॉलनुमा वातानुकूलित कक्ष से सोफे पर धँसे प्यारे लाल नजर आए। हमें देखकर उन्होंने उठने का असफल प्रयास किया। वह सोफे का हत्था पकड़कर स्वयं को उठाते और फिर से उस में धँस जाते। एक पल को हमें अनुभूति हुई कि कहीं सामान्य से अधिक वजन होना तो उनके रौंदूपन का कारण नहीं है? उन्होंने सोफे में लगी घंटी बजाई तो भृत्य एक ट्रॉली पर रखी एक ट्रे ले आया। उसमें फल, नमकीन, डोसा, इडली आदि सजे हुए थे। उन्होंने रौंदू शक्ल से 'मेम साब' को बुलाने का निर्देष दिया। पत्नी के आने पर हमें उनसे मिलाया। वह हमें हँसमुख और सुंदर लगीं। उन्होंने बेटों के चित्र दिखाए, जो यू.एस. में पढ़ रहे थे। वह दोनों भी चित्र में मुसकरा रहे हैं। हमने पाया कि घर में किसी के मुख पर मर्सिया नहीं है, एक पिताश्री के अपवाद को छोड़कर। घर के गार्ड हों या भृत्य, सब सामान्य नजर आए। न किसी के चेहरे पर मरघट या सरकारी अस्पताल जाने की संभावना पर जीवन का संकट है, न रोआसापन।

हमारे मन में स्पष्ट हो गया कि चेहरे पर रौंदू भाव का ताल्लुक आर्थिक समृद्धता या विपन्नता से नहीं है। ऐसा नहीं है कि समृद्ध सदा सुखी हो और निर्धन हमेशा दुखी। हमने प्यारे के घर में पाया था कि नाश्ते को देखते ही उनके चेहरे के उदासी के रंग कुछ और गाढ़े हो चले थे। वही हमने गरीब को भंडारा के भोज में खाते देखा है। उसके चेहरे पर संतोष, सुख और दिव्य आनंद का ऐसा भाव उभरता है, जिसका वर्णन शब्दों के परे है।

जाने यह सच भी है या नहीं, पर हमें यकीन हो चला है कि समृद्धि सुख का पर्याय नहीं है। हमारे मित्र प्यारे ऐसे अन्य कई हैं, जो उन्हीं के समान या उनसे अधिक रौंदू हैं। उन्हें खाना देखकर रोना आता है, परिवार सुखी क्यों है, सोचकर उनके आँसू छलकते हैं।

एक मनोचिकित्सक ने प्यारे लाल का बारीकी से परीक्षण किया, दो-तीन दिन लगाकर। खाने को दवा की सतरंगी गोलियाँ दीं। हजारों की फीस कमाई। प्यारे लाल तो जैसे रौंदू थे, वैसे ही रहे, पर मनोचिकित्सक इनका इलाज करते-करते खुद अवसाद का मरीज हो गया। जब यह वारदात हमें बताई गई तो हम इस सुखद निष्कर्ष पर पहुँचे कि रौंदूपन न संक्रामक है, न छुआछूत का मर्ज है। क्या यह रोगी को देखने से होता है? डॉक्टर की रोगग्रस्त होने की दुघर्टना तो इसी ओर इशारा करती है, पर रौंदू का पूरा परिवार, कार्यरत घर के कर्मचारी इसको मिथ्या सिद्ध करते हैं। उन सबमें कोई रौंदू नहीं है। सब सामान्य नजर आते हैं।

हमें संदेह हुआ कि कहीं इसके पीछे कोई दार्शनिक कराण तो नहीं है? कहीं वह इस तथ्य से तो पीड़ित नहीं हैं कि जीवन के दिन चार हैं? आदमी नश्वर है। कौन कहे, वह भविष्य से सशंकित होकर रौंदू बने हों? हमने तो कुछ मानसिक मरीजों को मिट्टी खाते देखा है। क्या पता, ऐसे रोगी सोचते हों कि जब मिट्टी में ही मिलना है, तो उसे खाने से क्यों परहेज करें? यों हमें शक है कि उनकी मुनाफा-चिंतन के अलावा अन्य किसी चिंतन में रुचि है भी कि नहीं? उनकी रौंदू मुद्रा कही उस तनाव का परिणाम तो नहीं है? फिर भी, इस दोषपूर्ण सोच में कुछ सुधार तो हो ही सकता है। जब जिंदगी ही चार दिन की है तो उसे हँसकर क्यों न बिताएँ? अपने जीवन में खुशी लाएँ और दूसरों के भी। हम आसानी से अनुमान लगाने में समर्थ हैं कि जब रौंदू की मुद्रा देखकर हम दुखी हो जाते हैं तो न जाने उनके अपनों पर क्या बीतती होगी? वह थोड़ा बहुत हँस लें, उन्हीं के खातिर। मुमकिन है कि रौंदूपन के रोग से ग्रसित स्वयं पर नियंत्रण खो बैठते हैं, वरना अपनी स्थायी रुआँसी मुद्रा से जग हँसाई के पात्र क्यों बनते? अपने प्रिय प्यारे भाई के संदर्भ में हम अपनी सीमित समझ से इसी नतीजे पर पहुँचे हैं—

रहिमन चुप हो बैठिये, देख दिनन के फेर।
जब नीके दिन आइ हैं, हँसत न लगिये देर॥

९/५, राणा प्रताप मार्ग, लखनऊ-२२६००१
दूरभाष : ९४१५३४८४३८

वंचित

• नंदकिशोर कौशिक

सुपरिचित कवि एवं कहानीकार। दूर-देहात में सामाजिक, ग्रामीण परिवेश की समस्याओं पर लेखन। देश की प्रतिष्ठित हिंदी पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ, कहानियाँ आदि प्रकाशित होती रहती हैं। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

दोनों भाइयों सोमदत्त व ईश्वरदत्त की उम्र में तीन वर्ष का अंतर था। पिता ने अपने परिवार का पालन-पोषण अपनी खेती-किसानी के सहारे चढ़ती-ढलती हालत में पूरा निभाया। उन दिनों को याद करते तो अनायास ही आँखें नम हो जातीं। संतान ने भी अच्छा परिचय दिया, बड़े ने समर्थ होते ही बापू के काम में हाथ बँटाना शुरू किया, छोटे ने अपनी पढ़ाई-लिखाई पर ज्यादा ध्यान दिया, दोनों की रुचि अपने-अपने कामों में बढ़ती ही चली गई। बड़ा बेटा घर-खेत के काम में लग बैठा, छोटा बेटा ईश्वर पढ़ने में रुचि के कारण आगे बढ़ता गया और सरकारी नौकरी पा गया। दोनों की शादी भी उम्र के अंतर पर अपने हिसाब से हो गई थी। ईश्वरदत्त की शादी के ठीक एक साल बाद एक कार दुर्घटना में, गंगाजी जाते समय, माँ और बाप ईश्वर को प्यारे हो गए। बड़ा बुरा समय आया था, फिर भी संस्कारी संतान ने अपने व्यवहार, बर्ताव का रवैया अपने माँ-बाप की सीख का ही रखा।

बड़े भाई ने ईश्वरदत्त को बड़े प्यार-दुलार से भरोसा दिलाया, 'बाबू, चिंता न कर, मैं काका की तरह ही तुझे रखूँगा, तू मन छोटा मत करना।' छोटा ईश्वरदत्त भाई पर भरोसा रखता था। बड़े भाई को पिता तुल्य मानता था। परंतु भाई-भाई ही तो इस तरह का व्यवहार रख सकते हैं, पर पराए पेट से पैदा हुई देवरानी व जेठानी के व्यवहार में कौन सामंजस्य स्थापित करता। खैर, बड़ी तो शील स्वभाववाली उदार हृदय और नेक संस्कारी घरेलू महिला थी। हाँ, छोटी अवश्य तुर्र-फुर्र आदत की थी। आए दिन दोनों में झड़प हो जाती।

दोनों भाई घर-परिवार चलाने की नीयत से स्थिति सामान्य कर देते, पर छोटी के तेज मिजाज और चलताऊपन के कारण बात कब तक बनती, वह तरह-तरह के बहाने लेकर आए दिन कलहबाजी करने बैठ जाती। दोनों भाई रोज-रोज की उठापटक से परेशान होकर न्यारे-बँटवारे का मन बना बैठे। इससे बड़ी और बड़े भाई को धक्का सा लगा, क्योंकि भाई का भाई से अलग होना उनके मन की सामर्थ्य से बाहर था। लेकिन वक्त की माँग थी, अन्यथा कुछ अनिष्ट हो जाने की आशंका से एक दिन न्यारे हो ही गए। घर का हिस्सा छोटे को दिया बड़े ने और स्वयं लिया नोहरे (घेर) वाला हिस्सा। बड़ा खेती करता और छोटा अपनी सरकारी नौकरी, यानी निगम में वाटर सप्लाई में लगा था। दुनिया जानती है, नौकरी जीवन-यापन यानी समृद्ध जीवन के लिए आज प्रथम स्थान पर है। जिसकी सरकारी नौकरी हो, उसे तो ईश्वर का आशीर्वाद समझो। बड़ा सोमदत्त अपने खेत वाले धंधे से संतुष्ट था। लेकिन घाघ कवि ने जो बात बहुत पहले कही थी, वह बात आज उल्टी पड़ चुकी थी। 'उत्तम खेती मध्यम बान निषिद्ध चाकरी भीख निदान', लेकिन आज नौकरी पहले नंबर का साधन बन चुकी है।

छोटी बहू अति प्रसन्न थी उस न्यारे से, क्योंकि वह अपने पति की सरकारी नौकरी का दुरुपयोग नहीं होने देना चाह रही थी। वह जानती थी कि बड़े सोमदत्त की तीन बेटी जब कल ब्याह-शादी को आएँगी तो पैसा साझे में ही खर्च होगा। इस बदनीयत की गरज से छोटी ने यह सब बखेड़ा कर दिया था। बड़े भाई पर तीन बेटी एक बेटा था और छोटे पर एक बेटा और एक बेटी, लेकिन बड़े के बच्चों से छोटे के दोनों बच्चों की उम्र में काफी अंतर था, क्योंकि बड़े के बच्चे काफी समय बाद हुए थे, कम-से-कम शादी के पंद्रह साल बाद। छोटे भाई ईश्वरदत्त का बेटा बड़ा था, वह भी पढ़ाई पढ़ रहा था। अर्थात् उच्च शिक्षा पा रहा था। उधर बड़े भाई सोमदत्त की गुजर-बसर के लाले पड़ने लगे थे।

खेती में तो ऐसे ही दिन कटते हैं, फिर भी सोमदत्त की पत्नी अपने शील स्वभाव और सधीरता के बल पर एक स्वाभिमानी औरत की तरह टोटे में भी शालीनता से अपनी गृहस्थी चला रही थी। बाहर उसकी चर्चा भली औरत के रूप में भी होती थी। वह बेचारी बच्चों को कभी कमी नहीं खलने देती थी। मोहल्ले भर में उसका आदर-सम्मान होता। बाहर घर में भी अपनी देवरानी से हर संभव अच्छा व्यवहार बनाकर रहना चाहती थी।

ताकि कोई परिवार कुटुंब पर ताने न मार सके। छोटी चाहे कितना भी ताने मारे, कटु वचन बोले, फिर भी यह महसूस होने नहीं देती थी, मजाल क्या, कोई बाहर का उँगली उठा जाए। दिन बीतते गए। दोनों भाई अपनी-अपनी जगह दो जीवन, एक विपन्न और एक संपन्न जीवन काट रहे थे। समय का चक्र चलता रहा। कुछ दिनों में ईश्वरदत्त के बेटे की शादी तय हो गई थी। ईश्वरदत्त की पत्नी बड़े की किसी भी बात से गुरेज कर सकती थी, लेकिन सोमदत्त की पत्नी के कानों में जैसे ही शुभ समाचार पड़ा, वह खिल उठी, आज हमारे परिवार में बेटे की शादी आई है, बहुत दिनों बाद जश्न और उत्सव का माहौल बनेगा।

शादी एक माह बाद शुभ मुहूर्त के क्षणों की बन गई थी और तारीख भी तय हो गई थी। दोनों भाइयों के परिवार में अति खुशी का माहौल बन गया था। छोटी जरूर बड़ी के शुभ कामों में कलह का अड़ँगा डालती आई थी, लेकिन बड़ी सब पिछली बातें भूल जाती और छोटी को समझा-बुझाकर राजी कर लेती। छोटी बहू को इस बात की तनिक भी परवाह न रहती थी। क्योंकि उसे अपने धन पर घमंड था। वह बड़ी के व्यवहार को उसकी मजबूरी मानती थी, लेकिन ऐसा सौ-सौ कोस भी न था। भले और समझदार मनुष्य हमेशा भले ही रहते हैं, चाहे अमीरी हो अथवा गरीबी। शादी का समय आया, छोटी ने औपचारिक सा निमंत्रण बड़े भाई यानी अपने जेठ सोमदत्त के घर अपने पति से भिजवाया। सोमदत्त व उसकी पत्नी अति प्रसन्न हुए और न्योता-निमंत्रण सब सहर्ष स्वीकार किया। और कल-परसों की बात को भी भूल बैठे, जब सोमदत्त अपनी बेटी सुषमा को लेकर अस्पताल में था और छोटी बहू ने सोमदत्त के लाख बुलाने पर भी अपने पति को जेठ की मदद के लिए, उसकी मरीज बेटी को देखने तक न जाने दिया था। सोमनाथ बड़े के नाते सब आई-गई कर देते और अपने पिछले कहे शब्दों को ही याद कर लेता।

छोटा ईश्वर तो परबस था। सोमदत्त कभी चूक नहीं होने देता था। छोटी ने निमंत्रण मन उठाया दिया था, क्योंकि वह बड़ी को तथा उसके बच्चों को अपने स्तर का नहीं मानती थी। कुछ घृणित भाव से भी देखती थी। इस बात से सोमदत्त की पत्नी अनभिज्ञ थी। अब शादी से संबद्ध छोटी-छोटी रस्में होने लगीं। सोमदत्त को परिवार मन से हाजिर रहने लगा। बड़ी बीच-बीच में कह बैठती। 'हमारे देवर ईश्वर के बेटे का ब्याह है। पूरी जिम्मेदारी निभानी है।' रीति-रिवाज यथासमय पूरे कर लिए गए। जिस तरह शादी से ठीक एक दिन पहले माडवा होता है, उसमें प्रीतिभोज भी हुआ, सभी ने प्रेमपूर्वक प्रीतिभोज में हिस्सा लिया, लेकिन आज बड़ी को छोटी की एक बात चाट गई, उसने उतावली में कह दिया, 'जेठानी दीदी बरात को तैयार हो जाओ, बच्चों से भी कह दो और भाई साहब से भी कह दो, जरा ठीक-ठाक कपड़े पहनकर चलें अपने भतीजे की बरात में।' समझदार को इशारा ही काफी था।

बड़ी बात को समझ गई। सहनशीलता की भी कोई हद होती है। उसे यह बात रह-रहकर सालने लगी कि हम बन-ठनके न गए तो बाद में बेइज्जती और तिरस्कार का सामना करना पड़ सकता है। दूसरे दिन यारों, रिश्तेदारों तथा मिलने-जुलनेवालों का जमघट छोटे के घर पर लगने लगा था। बारात की तैयारियाँ पूरे जोरों पर थीं, लेकिन आज सुबह से ही बड़े भाई सोमदत्त दिखाई नहीं दे रहे थे। एनवक्त पर ईश्वर दत्त ने भाई साहब का ध्यान किया, आज दिखाई नहीं दे रहे क्यों? उसका ध्यान भी एक रिश्तेदार ने दिलवाया था। ईश्वरदत्त वहाँ पहुँचा सोमदत्त अपने घर में पड़े सो रहे थे। 'भाई साहब आप सो रहे हो और बारात जानेवाली है।'

'देख बाबू, मैं थोड़ा बुखार में हूँ।'

'चलो, बहाने मत करो तुम्हारे बिना सब बेकार है।'

'नहीं छोटू, मैं नहीं जा पाऊँगा।'

'आखिर बात क्या हो गई, बुखार तो आपको नहीं है?'

'अपनी भाभी से पूछ ले, वह बच्चों को लेकर चली जाएगी।'

'तुम भी तो जाने जरूरी हो, चलो पहन लो कपड़े, दाढ़ी भी नहीं बनाई है, पहले से ही इरादा बना लिया है क्या?'

'नहीं छोटू, मेरी तबीयत ठीक नहीं है।'

'अब तक तो सही थे, अचानक क्या हो गया, आपको कुछ नहीं है?'

'मैं लाख कहने पर भी न जाऊँगा।'

छोटा ऐसा सुनकर स्तब्ध रह गया, बात समझ में आ गई। भाभी ने कोई ताना कस दिया होगा। ईश्वर ने अपनी पत्नी को जाकर बताया, तुझे पता नहीं, बड़े भैया नाराज हो गए हैं, भाभी-बच्चे कोई भी बरात को तैयार नहीं हो रहा है। छोटी से जो अपेक्षा थी उसने वही कड़े शब्द निकाले—'क्या उनके बिना गुड्डू का ब्याह रुक जाएगा, मैं तो जानती ही थी, वे जल गए हैं, अब उन्हें दोबारा बुलाने मत जाना, नहीं तो मैं अपने ही ब्याह में बखेड़ा कर दूँगी।' अपनी पत्नी के तेवर देखकर ईश्वरदत्त चुप्पी साध गया और अपने बेटे की बारात को भाई के बिना ही ले गया। लेकिन ईश्वरदत्त दुखी हो रहा था। उसे समाज का बड़ा भारी भय था कि अपने बेटे के ब्याह में अपने पिता तुल्य भाई को सम्मान न दे सका। फिर उसी दिन से लोगबाग भी टोका-टाकी करने लगे थे। ईश्वरदत्त सबको उल्टे-सीधे समझाने लगा। लेकिन वह इसे बड़ी गलती तो क्या, एक तरह का पाप मानने लगा।

पत्नी की समझ में भी बात जब आई, जब समधी और समधन ने उल्टे ताने मारे। 'समधन, बड़ी तेज हो, जेठ-जिठानी से क्या बनती नहीं है, जो बेटा बिहाने आए और उन्हें साथ में नहीं लाए?' बेटा ब्याहने के बाद छोटी की समझ में परिवार और समाज की कीमत आई तो थी, थोड़ा आदत में भी ढीलापन ले आई। दोनों पति-पत्नी ने तय किया। रिसेप्शन में अपने रूठे भाई को जरूर शरीक कर लेंगे। इस गरज से छोटा फिर एक

बार बड़े भाई के पास पहुँचा। 'भैया गुड्डू की शादी तो हो आई, आप नहीं गए, हम से क्या गलती हुई, हमें माफ करते हुए कल रिसेप्शन में जरूर आना, मैं कहे जा रहा हूँ, नहीं तो देख लेना मैं कभी भी···

'अरे छोटू, नाराज मत हो, हम अवश्य आएँगे, हम पहले दिन भी नाराज नहीं थे, हमारी एक मजबूरी थी उसे खुलासा मत कर।'

'आखिर क्या मजबूरी थी मुझे तो बताते?'

'चल फिर कभी बताऊँगा।'

'मत बताओ, पर कल हर हालत में आना।'

ईश्वरदत्त चला गया। पत्नी को बताया और दूसरे दिन वर-वधू के आशीर्वाद प्रोग्राम की तैयारी में जुट गया। दूसरा दिन आया, सोमदत्त सदा की भाँति कार्य में बिना बुलाए ही समय से पूर्व आ गए थे, लेकिन भाभी और बच्चे अभी नजर नहीं आ रहे थे। ईश्वरदत्त की पत्नी अब पूरी तरह से समझ चुकी थी। न आने की साजिश जेठानी की थी। जेठजी को अपने पक्ष में होते देख, देवरानी जेठानी को बुलाने और थोड़ी जलील करने के हिसाब से कुछ रिश्तेदारों को लेकर बड़ी के घर पहुँची। चलो, अब तो चलो, जो कुछ होना था हो गया। समाज के आगे तो अपनी मजबूरी बताओ। क्यों शादी में नहीं गए थे?'

'छोटी, तू बात को मत बढ़ा। मैं कुछ नहीं कहना चाहती।'

'कहना तो जब चाहोगे, जब कोई बात हो।' छोटी आदतन लाल होने लगी।

बड़ी सधीर मन से बोली, 'छोटी, तू मेरी मजबूरी को उघाड़ने आई है तो देख,' जिठानी अंदर कमरे में गई और सारे मेहमान, मिलनेवाले और दोनों भाई सोमदत्त और ईश्वर भी बात सुनकर इकट्ठे हो गए थे। देखनेवालों ने देखा, वह अंदर से पुराने चिथड़ों की कौली भरकर लाई और आँगन में पटक दिए, फिर कपड़ों के बैग बक्से भी लाकर पटक दिए। जो लगभग खाली थे। रोती हुई बोली, 'छोटी तू हमारी मजबूरी उघाड़ना चाहती है तो देख, हम पर बारात लायक कपड़े कहाँ थे, हम पिछले दस दिन से परेशान थे। नाराज नहीं थे, हमारी तंगी हालत ही हमारी मजबूरी थी। हमारी मजबूरी और तुम्हारी समस्या का यही समाधान था। जिसे हम किसी से क्या कहते। हम नाराज कहाँ थे?' भाभी एक ही साँस में कहे चले जा रही थी।

ईश्वरदत्त तथा उपस्थित समाज के सामने ऐसी नग्न और हृदयविदारक दशा देखकर भाई तो क्या, सभी के आँसू उमड़ रहे थे। छोटी को अपनी कही बात भी याद आने लगी, 'बड़े भैया से कहना, जरा ठीकठाक कपड़े पहन के चलें बरात में।' अपनी जेठानी की ऐसी दीनहीन दशा देख छोटी की मानसिकता तुरंत बदल गई और कौली भरकर दीदी से लिपट गई। मैं अपने जेठ-जिठानी को जीवनभर निरादर भाव से नहीं रखूँगी। यही हमारी भूल और गलती का परिणाम है। दीदी मुझे माफ कर दो।' सोमदत्त एक तरफ खड़े होकर सुबक रहे थे। उधर रिसेप्शन का पंडाल सजाया जा रहा था।

गाँव+पोस्ट-पिसावा, तहसील-गभाना,
जिला-अलीगढ़-२०२००१ (उ.प्र.)
दूरभाष : ८७५५७६४५५०

कविता

दोस्त हैं, पर मित्र नहीं

● कौशल मिश्र

यह आज का जो दौर है, वह कल कभी रहा नहीं।
हवाएँ तेज-तेज हैं, घटाएँ भी घिरी हुईं,
चमक रही हैं बिजलियाँ, पर रोशनी कहीं नहीं।
आँधियाँ हैं चल रहीं, बारिश हो रही प्रचंड है,
उखड़ रहे वट वृक्ष बस, प्रकृति भी साथ है नहीं।
तूफान के संकेत हैं, प्रलय का रूप सामने,
है जिंदगी सिमट रही, निदान सूझता नहीं।
लुटा है प्यार का जहाँ, बहार है बेवफा हुई,
पड़ेगा यह दिन देखना, यह था कभी पता नहीं।
चारों तरफ है बेचैनियाँ, हैं मायूसियाँ घिरी हुईं,
भरोसा दे रहे बहुत, पर आसरा है कोई नहीं।
मनुष्य हो रहा दुखी, देव भी सारे सुप्त हैं,
यहाँ दोस्तों की भीड़ है, पर मित्र हैं कहीं नहीं।

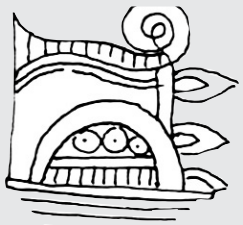

निशक्त हो रहे सभी, है सोच कुंद हो गई,
हमदर्दियों का शोर है, हमदर्द पर कहीं नहीं।
प्रयत्न हो रहे बहुत, पर साधना मरी हुई,
दावे तो रहबरी के हैं, पर रहनुमा कहीं नहीं।
अहम् हुए हैं नष्ट सब, बुद्धि भी है मंद हो गई,
सब चल रहे अलग-थलग, मंजिल का है पता नहीं।
सब थक के चूर-चूर हैं, शक्ति भी शांत हो गई,
मंजिल मिलेगी या नहीं, है इसका कुछ पता नहीं।
ऐ मित्र तू न हो उदास, यह वक्त जाएगा बदल,
यह आज का जो दौर है, वह कल कभी रहा नहीं।

यश मंदिर, ४ भ-९ जवाहर नगर
जयपुर-३०२००४ (राजस्थान)
दूरभाष : ९५७१४०५२४२

रतजगा होता रहा

● **विनय मिश्र**

: एक :

इस तरह कुछ वो मेरे अंत:करण में है
ज्यों अधूरी एक कविता मेरे मन में है

चाहतों की मुसकराती पंक्तियाँ हैं कुछ
इतना सुख तो अब भी दु:ख के मूलधन में है

चीखती बेचैनियों का दब गया है शोर
सिर्फ चुप्पी चेतना के व्याकरण में है

इन अँधेरों में चमकता यह तुम्हारा प्रेम
क्या कहूँ जो रौशनी इस एक क्षण में है

मैं खड़ा हूँ साथ उनके जो अकेले हैं
पुण्य कितना पीर के इस आचमन में है

जिंदगी को रात-दिन जीने की कोशिश में
कम नहीं है जो अभी भी संतुलन में है

बात मेरी इसलिए तुम तक पहुँचती है
जो भी खुशबू है गजल की वो कहन में है।

: दो :

यूँ तो दिखने को दिखा कुछ भी नहीं
पर कहूँ कैसे, हुआ कुछ भी नहीं

प्यार चिड़िया गीत जंगल और नदी
आदमी इनके सिवा कुछ भी नहीं

एक उस वनवास को गर दें निकाल
राम की जीवन कथा कुछ भी नहीं

सामने टूटे खिलौने रख दिए
बेबसी ने यूँ कहा कुछ भी नहीं

इक पुरानी-सी अँधेरी रात है
अपने जीवन में नया कुछ भी नहीं

चाँद निकले और मैं कैसे कहूँ
ज्वार-सा मुझमें उठा कुछ भी नहीं

वैसे तो दिल का खजाना भर गया
जबकि हाथों को मिला कुछ भी नहीं।

: तीन :

दिल में उठती बेचैनी को गाने निकलेंगे
जब चुप्पी बौराएगी तो माने निकलेंगे

ऐ चिड़िया तेरे जगते ही सोई दुनिया के
खत वो सारे तेरे ही सिरहाने निकलेंगे

बंदूकों सी धूप तनी है मंजर बदलेगा
बंजर धरती पर फसलों के दाने निकलेंगे

भीगी आँखों वाला चूल्हा जलता रहता है
इसकी ही चिनगारी से दीवाने निकलेंगे

बाहर चाहे मुस्कानें हों झूठे लोगों के
भीतर केवल छल के ही तहखाने निकलेंगे

पेट भरा हो तो अपने भी दु:ख मिट जाएँगे
मन से हीरे-मोती और खजाने निकलेंगे

इस पर ही निर्भर है सब कुछ अपने जीवन का
सबकुछ खोकर भी क्या हम कुछ पाने निकलेंगे।

: चार :

जागने का सिलसिला होता रहा
रात थी औ' रतजगा होता रहा

जाने-माने रचनाकार। 'सच और है', 'बनारस की हिंदी गजल' (संपादित गजल-संग्रह); 'समय की आँख नम है' (गीत-संग्रह); 'सूरज तो अपने हिसाब से निकलेगा' (कविता-संग्रह); 'इस पानी में आग' (दोहा-संग्रह); 'पलाश वन दहकते हैं' स्व. मंजु अरुण की रचनावली का संपादन। प्रतिष्ठित पत्र-पत्रिकाओं में निरंतर रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति राजकीय कला महाविद्यालय, अलवर (राज.) के हिंदी विभाग में कार्यरत।

अपने मन में कुछ खुशी कुछ दु:ख लिये
कुछ पुराना कुछ नया होता रहा

जुड़ गया था एक खालीपन से मैं
टूटने का फायदा होता रहा

एक मौसम पतझरों के बीच भी
मेरे सीने में हरा होता रहा

जब मिला है आदमी होने का हक
है गनीमत हक अदा होता रहा

तेरी यादों के किसी संदूक से
कुछ निकल मुझमें जमा होता रहा

काम ज्यादा था मगर ये कम नहीं
मुझसे जितना हो सका होता रहा।

बी-१६१, हसन खाँ मेवाती नगर
अलवर-३०१००१ (राज.)
दूरभाष : ०९४१४८१००८३

जननी, हम नहिं जिऊँ बिन राम

• मयंक मुरारी

हमारा जीवन विराट् से आता है। श्वास भी उसी विराट् से आती है। हमारा भोजन, पानी और कर्म भी उसी विराट् द्वारा तय किया जाता है। इस विराट् के वर्तुल में समूचा जीवन चलता है। ऐसी जीवनधारा जहाँ अपने श्वास पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है, वहाँ राम नाम एक ठाँव है। जीवन में राम नाम ही एक ठाँव है। जब हम इस राम से जुड़ते हैं, तो समूचा विराट् एक परिवार की तरह हो जाता है। सभी चेतन और अचेतन, जड़ और पदार्थ तथा जीव और शिव के साथ एक आंतरिक संबंध बन जाता है, जिसकी स्रोतस्विनी में लघु जीवन विराट् हो जाता है। विराट् का नाम राम है। उस जीवन की लघुता में व्यापकता का नाम राम है। राम है, तो जीवन है; नहीं तो लोग (अयोध्यावासी) कह उठते हैं कि 'जननी, हम नहीं जिऊँ बिन राम।' आखिर इस राम का हमारे जीवन में, हमारी चेतना के विकास में और हमारी मुक्ति में क्या योगदान है, जिसके लिए जनमानस चित्कार करता है? वह जननी से गुहार लगता है कि ऐसा जीवन मत दे, जहाँ राम न हों। राम के बिना हम जीवन लेकर क्या करेंगे?

राम वह तत्त्व हैं, जिसमें सारा जगत् स्थित है। उनके साथ यह जीवन की यात्रा सहज है और उनके बिना यह यात्रा कठिन हो जाती है। राम के साथ सारा जगत् मित्र बन जाता है। उनके बिना जीवन में भटकने के कई मार्ग मिल जाएँगे, लेकिन अगर केवल राम नाम की संकीर्ण रास्ते भी मिल जाए तो जीवन पार उतर जाएगा। जीवन में राम नाम का सहारा लेकर हनुमान चिरंजीवी हो गए। राम नाम पर संदेह करने पर माता सती को कभी चैन नहीं मिला। महादेव जिसका स्वयं स्मरण करते हों, वह नाम संसार, समाज और संस्कृति की एकमेव प्रेरणा है। जीवन और जगत् में राम ही सबकुछ हैं। वही हमारी चेतना में गोता लगा रहे हैं, वही गीतों में स्वरबद्ध हो रहे हैं, वही जगत् की लयबद्धता में जुड़े हुए हैं और वही सभी जगहों पर विराजमान हैं। उनके बिना जीवन लघु हो जाता है। राम के साथ हमारी ऊर्जा का विस्तार हो जाता है। हमारी चेतना का स्वरूप विराट् बन जाता है। वह जीवन के अनेक रूपों में प्रकट होता है, लीन रहता है और यह विराट् का खेल भी उनकी ही इच्छा से चल रहा है।

सारा अस्तित्व ही ऊर्जा है और यह ऊर्जा विभिन्न रूपों एवं घटनाओं में प्रकट होता है। यह सदैव हमारे जीवन को ऊर्जा से भरनेवाली शक्ति है। उनका नाम राम है। हमारे जीवन के आरंभ राम हैं और उनमें ही जीवन की

सुपरिचित लेखक। पत्र-पत्रिकाओं में अब तक ४०० से अधिक आलेख एवं आधा दर्जन से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। झारखंड रत्न अवार्ड सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित। संप्रति उषा मार्टिन लि. में वरीय उप्रमहाप्रबंधक-जनसंपर्क पद पर कार्यरत।

ठाँव है। उनके बिना जीवन की धन्यता की कल्पना भी अधूरा है। लेकिन लोग किताबों में उलझे हैं, वे किताबों के श्लोक की अपनी व्याख्या कर रहे हैं। इस विराट् में रामोत्सव चल रहा है। उसमें हम सम्मिलित नहीं होते। प्रभु राम पुकार रहे हैं, उनके कर्म आमंत्रण दे रहे हैं। हमको वह सुनाई ही नहीं पड़ता, हम अपनी किताबों में उलझे हैं। राम किताब में नहीं हैं, वे हमारे जीवन के राग में हैं। वे हमारे समाज के रस में हैं और वे हमारे संस्कृति के रसधारा में हैं। तीन सौ रामायण हैं। हर रचना में उनका संसार है। उनकी चेतना का विस्तार है। मनुष्य सदैव अर्थ निर्माण करने और अर्थ बनानेवाला प्राणी है। अतएव हरेक रामकथा उसके लिए संकेतों का संजाल है, जिसके बीच वह मायने पैदा करता चलता है। परंतु राम विराट् हैं। राम ऊर्जा हैं। रामकथा के कई कथाकार हैं, कई श्रोता हैं। इस संबंध में तुलसीदासजी लिखते हैं कि 'राम सीय जस सलिल सम।' यानी सियाराम का यश सुंदर जल के समान है। हम इस जल को अपने मन को धोने में लगाते हैं या इस जल को ही दूषित कर देते हैं। जिस कथा को महादेवजी ने अपने जीवन में सर्वोपरि रखा, उसके संसर्ग से तीनों प्रकार के दोष—मन, वचन और कर्म के दोष खत्म हो जाते हैं। अगर यह हमारे जीवन में बना रहता है तो यह हमारा दोष है।

जब-जब हमारे जीवन में भ्रम आ जाता है, समय के चक्र से दिशाभ्रम की स्थिति पैदा हो जाती है, कष्ट और थकान से हमारा कर्म लक्ष्यहीन बन जाता है, तब कुछ नहीं सुझता है। अंतर्मन की यह व्याकुलता केवल मानव को ही नहीं, देवों को भी होता है। भगवती माता पार्वती ऐसी ही दुःख के पलों में जब स्वयं को पाती हैं, तो महादेव से आग्रह करती हैं कि कोई ऐसी कथा सुनाएँ, जो हमारे संताप को हर ले, जीवन में सांत्वना दे। तब भगवान् शिव के द्वारा माता को पहली बार रामकथा सुनाई जाती है। यह रामकथा का कथन और श्रवण विभिन्न देश-काल और लोक में

विविध भावों, विभिन्न रूपों एवं विविध भेदों के साथ सदैव प्रवाहित होता रहा है। लौकिक जीवन (आगम चिंतन) में कौन कहे, शास्त्रीय (निगम चिंतन) समाज में भी रामकथा के अनंत और अमिट रूप एवं भेद मिलते हैं। रामकथा के एक साथ कई कथावाचक हैं और कई श्रोता भी।

भगवान् शिव द्वार माता पार्वती को कथावाचन होता है तो कथा आगे बढ़ती है। कथा-श्रवण के दौर में एक भक्त और जिज्ञासु पक्षी काकभुशुंडि समूची कथा को हृदयंगम कर लेते हैं। इसके बाद वह पक्षियों के बीच गरुड़ के माध्यम से इस रामकथा को आगे बढ़ाते हैं। रामकथा का आख्यान ऋषि याज्ञवल्क्य के माध्यम से ऋषि भरद्वाज सहित समूचे ऋषि-मुनि एवं महापुरुषों की परंपरा को प्राप्त होती है, और खुद तुलसी दास उसी राम के चरित का मानसगान भक्तियुग में भारतवासियों को सुनाई, ताकि समाज में जो भय, डर और अंतर्मन की व्याकुलता है, वह दूर हो सके। अब देश-काल का अतिक्रमण देखिए—शिव की कथा में काकभुशुंडि आते हैं। याज्ञवल्क्य के वाचन क्रम में महादेव उपस्थित हो जाते हैं। मानस के सुंदरकांड में एक दृष्टांत आता है। माता सीता की भावदशा का वर्णन जब हनुमान करते हैं, तो श्रीराम अश्रुपूरित हो जाते हैं। जो मर्यादापुरुषोत्तम हैं, वे माया के अधीन हो जाएँ, यह बात भक्त हनुमान को बेचैन कर देती है। उनको लगता है, गलती हो गई। कहीं भगवान् भी भावविह्वल होंगे! वे करुणरस के कारण भावविह्वल हो जाते हैं। यह देख शिवजी अपने को रोक नहीं पाते हैं, वे समाधि में चले जाते हैं। एक कथा के कितने भेद, कितने भाव और कितने रूप प्रकट होते हैं।

रामायण के संबंध में कहा जाता है कि पहली रामायण की रचना हनुमानजी ने महायुद्ध के बाद ही कर दी थी, जिसे बाद में पर्वत के शिखर पर बिखेर दिया था। उसके एक अंश को वाल्मीकि पकड़ पाए। लोक में यह व्याप्त है कि रामकथा कहने का अधिकार उसी को है, जो उसकी अनंतता का मान रखता है और उसे एक रूप में शेष कर देने का दंभ नहीं पालता। जैसे ही वह ऐसा करेगा, हनुमान के द्वारा महाअंतरिक्ष में बिखेरे गए पन्नों से कुछ अंश पृथ्वी पर आ गिरेंगे और उसके दंभ चूर-चूर हो जाएँगे। ए.के. रामानुजम : तीन सौ रामायण, पृष्ठ २४। इस विराट् में राम नाम का स्वर ही गुंजायमान है। उसके नाम का गीत ही बह रहा है और बहता चला जा रहा है। रुकता नहीं, किसी के रोके रुकेगा भी नहीं, क्योंकि यह अस्तित्व की ऊर्जा का नाम है। जिस दिन हम सब व्यर्थ की बकवास छोड़ देंगे, उसी दिन से जिंदगी में राम नाम की बंदगी घटेगी। उसी दिन से प्रार्थना उमगेगी। उसी दिन से हृदय के असली भाव पनपेंगे। वह भाव राम का होगा, वह प्रार्थना राम की होगी।

विद्वान लोग राम और उनकी कथा को समय एवं स्थान की सीमा में बँधते हैं। भारतीय लौकिक अंतर्मन में राम और उनका आख्यान सदैव ही देश व काल की सीमा से मुक्त रहा है। एक लोक-जीवन में कथा आती है कि हनुमानजी का मन रावण-वध के बाद थोड़ा शंका से ग्रस्त हो जाता है, तो श्रीराम उनके भ्रम को तोड़ते हैं। कथा के विन्यास विभिन्न रूपों में कहे गए हैं, लेकिन उसका सार एक है। हनुमान को सीख देने के लिए सागर पार करते समय प्रभु अपनी अँगूठी पानी में गिरा देते हैं और हनुमान से अनुरोध करते हैं कि इस छोटे कार्य को संपन्न कर दें। अर्थात् अँगूठी पानी से निकाल दें। हनुमानजी को यह काम सरल लगता है। वह पानी से अँगूठी निकालने के लिए सागर में चले जाते हैं और अंततः नागलोक पहुँच जाते हैं, जहाँ उनकी भेंट वासुकि से होती है। वे उनसे श्रीराम की अँगूठी की बात कहते हैं। वासुकि मुसकराते हैं और विशाल पर्वत की ओर जाने का संकेत करते हैं। हनुमान जब पर्वत के समीप पहुँचते हैं तो अचंभित हो जाते हैं। वहाँ अँगूठियों का ढेर दिखता है। हर मुद्रिका वैसी है, जैसा श्रीराम की मुद्रिका थी। तब हनुमानजी ने वासुकि से इसका रहस्य पूछा। वासुकि बताते हैं कि क्या आपको लगता है कि यहाँ एक मुद्रिका है? यहाँ मुद्रिका का पहाड़ है। जाने कितने सारे राम की मुद्रिकाएँ यहाँ इकट्ठा पड़ी हैं। हरेक कल्प में सृष्टि जागती है और कर्मरत होती है। हरेक त्रेतायुग में श्रीराम की मुद्रिका गिरती है और एक हनुमन उसकी खोज में यहाँ आते हैं और सवाल करते हैं। जब भी त्रेता का अंत होता है, माता सीता धरती के माध्यम से और प्रभु श्रीराम आकाश मार्ग से अपने धाम को जाते हैं। यह हरेक कल्प में होता है और होता रहेगा। अस्तित्व के गतिक्रम में केवल यह रामकथा ही बार-बार नहीं आती है, बल्कि हम सब और हमारी गाथाएँ भी बार-बार दोहराई जाती हैं। अस्तित्व की गति घूर्णन और परिभ्रमण अपने कक्ष पर चक्रीय है। हमारा अस्तित्व सदैव विकास और अनंत के साथ एकाकार होने के लिए है। हम संसार का जब तक त्याग नहीं करते हैं, तब तक पुरुष की पुरुषोत्तम की यात्रा जारी रहनी चाहिए। अंतर्मन का चिदाकाश में विस्तार होना चाहिए, ताकि वह शाश्वत सांत्वना और शांति में खुद को रख सके। कल्प आएगा और हर बार आएगा। लेकिन हमारा कर्म भी सदैव जारी रहना चाहिए।

अतएव राम को खोजना है तो किताब में मत खोजिए, क्योंकि आदमी के जुबान शब्दों से भरे हुए हैं, लेकिन उसके शब्द जहाँ से प्रकट होते हैं, वे हृदय सूखे पड़े हैं। ऐसे में हमें राममय जीवन के लिए जीने के सलीकों को खोजना होगा। उस मर्यादा के स्वामी को खोजना है, तो अंतस् से खोजना होगा। अगर वह है तो हमारे अंतस् की अर्चना में, हमारी भावना में, हमारे प्राणों की प्रीति में, हमारी श्रद्धा में। अगर यह हमारे अंतस् में होगा तो उसका गीत हमारी कानों में उतरना शुरू हो जाएगा, उसका कर्म हमारे आँखों के समक्ष दिखना आरंभ हो जाएगा। राम सदैव कहते हैं कि अश्रु से अपने आँख तो धो लो, उस विराट् का गीत प्रारंभ करता हूँ। वह आँसुओं से मिलेगा, न कि व्यर्थ के प्रलाप से। वह अश्रुओं से मिलेगा, क्योंकि इससे हृदय निखरेगा। आँसू है आकाश की असली गंगा। लोककथा है, एक गंगा तो उतर आई पृथ्वी पर और एक है स्वर्ग में। आँसू है स्वर्ग की गंगा। उस त्रिलोक के स्वामी को सुनने और देखने के लिए उनके ही लोक के जल से शुद्ध होने की जरूरत होगी। राम को पाना है तो जरा उसके प्यास की पीड़ा को जगाना होगा। हमारे आयोजन और कर्मकांड से नहीं, बल्कि भीतर की पीड़ा, भीतर की प्यास, भीतर की पुकार से जीवन को राम मिलेंगे।

हमारी संकीर्ण धारणाओं में श्रीराम नहीं बँधते, पर हम कोशिश जरूर करते हैं। उनका नाम सभी संकीर्ण धारणाओं का अतिक्रमण करता है, उसके पार जाता है। हम व्यक्ति से, सिद्धांत से, शास्त्र से, शब्द से मुक्त हो जाएँ तो उस मर्यादा पुरुषोत्तम का हमारे भीतर आगमन संभव हो पाए। उसका स्मरण हमारे जीवन का एकमेव लक्ष्य हो जाए, जो हरेक कल्प में खुद अपनी जीवन-गाथा को दोहराता है, ताकि समाज, सभ्यता और समय को पुनः-पुनः संस्कृति और सात्त्विकता के मार्ग पर लाया जा सके। हालाँकि जिस राम की खोज हम करते हैं, वह सदैव हमारे भीतर मौजूद हैं। जिसकी पूजा कर रहे हो, वह पूजा करनेवाले में बैठा हुआ है। रामकथा बताती है कि जीवन तथ्य नहीं, केवल एक संभावना है। जैसा बीज, वैसा ही फूल का पेड़। बीज में छिपे हैं फूलों की सारी सुगंध, उनके सारे रंग, उनकी कोमलता, उनका सौंदर्य और उनसे प्रकट होनेवाली परमात्मा की अनुभूति भी। बीज की तरह ही हमारा मानव जीवन है। ठीक वैसा ही—जैसा विचार, वैसा कर्म और ठीक वैसा ही जीवन। विचार में राम नहीं, तो राम बिन जीवन एकरस और एकरंग होगा ही। हमारा कर्म लक्ष्यविहीन होगा।

जीवन को वासना नहीं, उपासनापूर्ण बनाना चाहिए। राममय जीवन के लिए जरूरी है कि जीवन को हम विद्रोह और विनोद के बदले विस्मय में जीएँ। जीवन में जो सत्य है, जीवन में जो शुभ है और जीवन में जो सम है, रामायण उसकी कथा है। उसका दर्शन ही सद्दर्शन है। राम का जीवन दैव की लीला नहीं है, वह पूर्ण मनुष्य है, मनुष्य का पूर्णावस्था। ऐसे मनुष्य का जीवन-धर्म हर युग में हमें अटके और भटके बिना आगे बढ़ने का रास्ता दिखाता है। वह मार्ग राम का मार्ग हो, जो हमारे चारों तरफ जीवन है, जिससे हम अंतर्संबंधित हैं। जिससे हम जुड़े हैं, उस जीवन में भी राम का चरित्र शांति एवं धर्म की बात करता और सिखाता है।

हमारे भीतर अँधेरा है। उजियारे की हम कोई गुंजाइश ही नहीं रखते हैं और जीवन भर राम को ही पहचान करने का दंभ भरते हैं। अपने भीतर के शाश्वत से परिचय करो। अपने भीतर के अनंत से पहचान बनाओ। जिसने अपने भीतर के अनंत को जान लिया, वह राम को जान जाता है। फिर उसके बाद न स्वर रहते हैं और न शब्द रहता है, केवल उनके नाम की प्रतिध्वनि गूँजती रहती है। आदमी की जिंदगी की शुरुआत ही राम के तलाश से होती है, लेकिन हम राम पर उठे सवाल में भटक जाते हैं। जीवन क्या है ? पशुवत् भोग और शरीर की वासनाओं की पूर्ति। तुलसीदास कहते हैं कि 'ऐहि तन कर फल विषय न भाई, स्वर्गउ स्वल्प, अंत दुःख दाई।' यानी इस शरीर का फल विषय नहीं है भाई, वह फल है मुक्ति और भक्ति को प्राप्त करना। जीवन को वासना नहीं, उपासनापूर्ण बनाना चाहिए। राममय जीवन के लिए जरूरी है कि जीवन को हम विद्रोह और विनोद के बदले विस्मय में जीएँ। जीवन में जो सत्य है, जीवन में जो शुभ है और जीवन में जो सम है, रामायण उसकी कथा है। उसका दर्शन ही सद्दर्शन है। राम का जीवन दैव की लीला नहीं है, वह पूर्ण मनुष्य है। मनुष्य का पूर्णावस्था। ऐसे मनुष्य का जीवन-धर्म हर युग में हमें अटके और भटके बिना आगे बढ़ने का रास्ता दिखाता है। वह मार्ग राम का मार्ग हो, जो हमारे चारों तरफ जीवन है, जिससे हम अंतर्संबंधित हैं। जिससे हम जुड़े हैं, उस जीवन में भी राम का चरित्र शांति एवं धर्म की बात करता और सिखाता है।

'बड़े भाग मानुष तनु पावा'—यह मानव शरीर हमको बड़े भाग्य से प्राप्त होता है, जो शरीर देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। यह मानव तन अति महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि यह साधना-योनि है, जिससे हम अपना परलोक सुधार सकते हैं। यह मानव तन ही मोक्ष का द्वार भी है। मनुष्य को छोड़कर किसी भी योनि में चेतना का विकास इतना तीव्र संभव नहीं है। इस मानव जीवन को हम पूर्णता की ओर ले जाएँ, तभी इसकी सार्थकता है। रामचरितमानस इस जीवन की पूर्णता की यात्रा का साधन है। मनुष्य पूर्णावतार हो, तभी यह जीवन अर्थपूर्ण बनेगा। शरीर और समाज की पूर्णता तीन चरणों में होती है। पहले चरण में शरीर और समाज के ऊपरी भाग को बौद्धिक बनाने का प्रयत्न हो, फिर शरीर और समाज का मध्य भाग हार्दिक तथा नीचे का भाग धार्मिक हो। मस्तिष्क में ज्ञान, हृदय में आचरण और चरण में कर्म की गति तथा धर्म होने से ही व्यक्ति का जीवन पूर्णता को प्राप्त करता है। धर्म के इसी अर्थ को बताने के लिए प्रभु श्री रामचंद्र और माता जानकी का इस धरती पर आगमन हुआ था।

रामजन्म की कथा मानव और समाज में धर्म और कर्म की प्रतिष्ठा के लिए हुआ था। शंकरजी खुद माता पार्वती से रामकथा के तीन कारणों को बताया है। पहला कारण जय-विजय नामक द्वारपाल को मिले श्राप से मुक्ति दिलाने के लिए भगवान् ने खुद मानव शरीर धारण करना स्वीकार किया। दूसरा कारण जालंधर की पत्नी को श्राप-मुक्त करने के लिए राम रूप में भगवान् को जन्म लेना पड़ा और माता का वियोग सहना पड़ा। तीसरा कारण नारद मुनि का श्राप। परमात्मा का स्वभाव होता है कि वह अपने भक्तों के हितों की रक्षा करे। नारद के हित के लिए भगवान् ने माया रची और उनके भीतर उपजे अहंकार के पौधे को उखाड़ दिया। लेकिन भगवान् को नारद ने श्राप दिया कि आप मनुष्य बनेंगे। अब भगवान् मनुष्य जीवन को उच्चतम मान देते हैं। वे कहते हैं कि मैं मनुष्य रूप में अवतार लूँगा; और जब उन्होंने मनुष्य का रूप धारण किया, तो एक आम मनुष्य की तरह ही जीवन के सुख-दुःख का भोग किया। नारदजी का श्राप था कि मनुष्य जीवन में आपको बंदर की मदद लेनी होगी और स्त्री का वियोग सहना होगा। समाज के निर्माण में मनुष्य के साथ अन्य जीव-जंतु की भूमिका को अहम बताया गया। इतना ही नहीं, श्रीराम ने जीवन भर धर्म की स्थापना के लिए मर्यादा के साथ समाज के सभी लोगों की भूमिका को न केवल स्वीकार किया, बल्कि उनका सहयोग भी लिया।

इतना ही नहीं, एक आम मानव की तरह माता के विरह-वेदना को सहा और कभी इसे प्रकट होने भी नहीं दिया।

राम के जन्म का चौथा कारण स्वयंभू मनु और शतरूपा को बताया गाया है। जब वे लोग राजकाज के बाद जंगल में वानप्रस्थ जीवन व्यतीत कर रहे थे, तब उन्हें भगवान् का आशीर्वाद प्राप्त हुआ। स्वयंभू मनु ने वरदान में कुछ नहीं माँगा, लेकिन शतरूपा ने भगवान् से कहा कि आपके जैसा पुत्र प्राप्त हो। भगवान् को अपने वरदान की रक्षा के लिए स्वयं आना पड़ा। स्वयंभू मनु और शतरूपा ही त्रेतायुग में दशरथ और कौशल्या के रूप में आए, तो भगवान् ने खुद श्रीराम के रूप में जन्म लिया। इसके अलावा श्रीराम के जन्म का एक कारण प्रतापभानु था। प्रतापभानु की मुक्ति के लिए समूचे समाज को रामकथा बार-बार स्मरण कराती है कि शीर्ष पर जाकर कोई गलती करता है तो उसका पतन होना निश्चित है। अपराजेय रावण भी समाज की व्यवस्था को छिन्न-भिन्न करता है, अपनी गलतियों से नीचे गिरता है और आचरण में अहंकार और अधर्म का सहारा लेता है, तब उसका विनाश हो जाता है। रामचरितमानस केवल एक ग्रंथ नहीं है, बल्कि यह अच्छे-बुरे, सत्य-असत्य और धर्म-अधर्म की सही परिभाषा एवं परिणाम का भी दस्तावेज है। आपके जीवन में जब भी दु:ख आए, जब आप परेशानी में फँस जाएँ और कोई रास्ता न दिखे, उस समय संसार की नहीं, बल्कि श्रेष्ठ जनों की सुननी चाहिए। राजा दशरथ को संतान का सुख नहीं है। वे क्या करें? वे गुरु वसिष्ठ के पास गए और अपनी पीड़ा बताई। रामचरितमानस में कहा गया है कि 'एक बार भूपति, गुरु गृह गयउ। निज दु:ख-सुख सब गुरहि सुनायउ।' समाज में जो श्रेष्ठ जन हैं, जो गुरु हैं और जो धर्म के जानकार हैं, उनका दायित्व है कि वे गलत होने पर समाज को रास्ता दिखाएँ। भारतीय ग्रंथों में इसको बार-बार कहा गया है। गीता में खुद श्रीकृष्ण कहते हैं—समाज के श्रेष्ठ जन जो करते हैं, जो आदर्श रखते हैं और जैसा रहते हैं, वैसा ही अन्य सामान्य लोग उसका अनुसरण करते हैं। सवाल है कि हमारा वर्तमान समाज गीता और मानस के इन अमृत श्लोक से कुछ सकारात्मकता ग्रहण करता है या नहीं?

जीवन और मृत्यु के बाद भी हमारा जीवन खत्म नहीं होता है, बल्कि यह चलते रहता है। तुलसीदासजी उस परम जीवन के लिए धर्म और कर्म को शुभता पर आधारित करते हैं। उनका परम जीवन रामभक्ति के रूप में प्रकट होता है। राम के अभाव में परमार्थ भी बेकार है। राम के बिना मुक्ति का विराट् आयोजन अपनी सार्थकता खो देता है। राम अपनी वन-यात्रा में जब ऋषियों से मिलते हैं, तो वे अपनी समस्त साधनाओं का फल राम को अर्पित कर उसके बदले उनकी भक्ति की याचना करते हैं। राम अपने भक्तों को सबकुछ देते हैं, यहाँ तक की उन्हें मोक्ष प्रदान करते हैं, लेकिन वे सारे रामभक्ति की ही बात करते हैं। जीवन में मैत्रीपूर्ण संबंध की यह प्रगाढ़ अभिव्यक्ति है।

वाल्मीकिजी के रामायण में श्रीराम श्रेष्ठ पुरुष के रूप हैं, जिनमें षोडश गुणों का समावेश है। इन सभी गुणों में शील और मर्यादा का गुण सर्वोत्तम है। उनमें वीरता और धीरता के साथ धर्मात्मा का उत्कृष्ट गुण भी है। दूसरी ओर तमिल कवि कंबन उनको शीलवान के साथ एक सामान्य पुरुष के रूप में भी चित्रित किया है। कंबन के रामायण में श्रीराम एक आदर्श पुत्र हैं, अच्छे पति हैं और एक आदर्श राजा हैं। उनका सर्वगुणसंपन्न पुरुषोत्तम का व्यक्तित्व रखते हुए कंबन कहते हैं कि पिता की आज्ञा के बावजूद श्रीराम राज्यभार को अस्वीकार कर पुरुष के उत्कृष्टता के शिखर को स्पर्श करते हैं। राजगद्दी जाने के बाद भी उन्हें उसका लेशमात्र भी दु:ख नहीं है। एक मनुष्य के लिए यह सहज संभव नहीं है। वे वनवास को माता-पिता की आज्ञा मानकर शिरोधार्य करते हैं। कंबन के रामायण में श्रीराम कहते हैं—मैं बड़ा भाग्यवान हूँ, जो माता-पिता की आज्ञाकारी पुत्र के रूप में वनवास जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। कंबन इस स्थल पर शीलगुणों से संपन्न राम के मुख कमल की ओर निहारते हैं। उस कठिन परिस्थिति में भी उनके मुख से सुख का भाव प्रकट होता है। कंबन की कलम से कविता नहीं फूटती, बल्कि उनके मन से प्रकट होती है। (भारतीय भाषाओं में रामकथा : वाणी प्रकाशन-तमिल, पृष्ठ-२०)।

सामान्य मनुष्य के रूप में श्रीराम को विधि के खेल पर भी अपार विश्वास है। कंबन कहते हैं कि विधि को कौन पलट सकता है? कहकर एक सामान्य मनुष्य की तरह अपने उद्विग्न मन को सांत्वना देते हैं। कंबन अपने काव्य में अनेक स्थलों पर विधि की शक्ति को प्रकट करते हैं। राज्य नहीं मिलने पर लक्ष्मण को सांत्वना देकर उसके क्रोध को शांत करते हैं। वह कहते हैं कि मनुष जन्म लेने पर चक्रवर्ती का पुत्र होते हुए भी विधि के प्रभाव को कौन रोक सकता है? विधि की इस प्रबल शक्ति पर राम का अपार विश्वास यहाँ प्रकट होता है।

राम करहु सब संजम आजू

किसी भी समाज और सभ्यता में जब उदात्त गुणों की कल्पना होगी, तब उन गुणों का संगठित रूप हमें श्रीराम के जीवन में साकार मिलेगा। उनके चरित्र में जीवन का हर सुख मिलता है, जो हमको भीतर तक शांत करता है। प्रेम के साथ जब उनसे जुड़ेंगे, सुनेंगे, पढ़ेंगे और गाएँगे तो यश व मंगल के धाम श्रीराम हमारे जीवन में उत्साह भरेंगे। सुख की सरिता का प्रवाह होगा और जीवन सुख-दु:ख के तीरों पर भी सम्यक् रहेगा। तुलसीदासजी ने श्रीराम के इस चरित्र का सुंदर बखान किया है—'राम करहु सब संजम आजू, जो विधि कुसल निबाहे काजू।' यानी राम रूपी परमात्मा सारे काम ठीक से कर दें। इसके लिए आज की रात पूरे संयम का पालन करना है। इस संयम और संतुलन का पाठ राम जीवन भर न केवल पढ़ते रहे, बल्कि उसे जीवन में उतारा भी। उनमें एक आम बालक की सरलता है, अतएव माता सीता के प्रति अपने अनुराग को वह भाई लक्ष्मण और गुरु विश्वामित्र से नि:संकोच प्रकट करते हैं। शिव-धनुष के भंग होने के समय उनकी नम्रता अतुलनीय है। परशुराम के द्वारा किए गए सवाल पर श्रीराम का जवाब हमारे जीवन के लिए एक दर्पण है। श्रीराम सफलता के समय या निर्णय के पल में कैसा व्यवहार करते हैं, उसका उत्कृष्ट उदाहरण स्वयंवर सभा में देखने को मिलता है। जीवन

में दायित्व-बोध ही सफलता का द्योतक होता है। राम पिता के सचेत होने तक भी नहीं रुकते हैं और उन्हें अचेतावस्था में ही छोड़कर अपने कर्तव्यपथ पर बढ़ जाते हैं। वे एक राजा हैं, लेकिन उनका हृदय एक सामान्य मनुष्य की तरह भाव का प्रदर्शन करता है। वे वन में अयोध्या के अपने सगे-संबंधियों का स्मरण करके दुखित होते हैं। किंतु जब वे लक्ष्मण और सीता को उस स्मृति से विकल पाते हैं तो अपने भावावेश को रोककर उनका मन बहलाने एवं बदलने का प्रयास करते हैं। इन छोटी-छोटी बातों से हमें अपने जीवन को शिखर पर ले जाने की सीख मिलती है।

संयम क्या होता है, इसे राम का जीवन हरेक कदम पर दरशाता है। चित्रकूट में माताओं से मिलते हैं, तो वे सबसे पहले माता कैकेयी से भेंट करते हैं। उन्हें शांति और सांत्वना देते हैं। समूचे दु:खपूर्ण घटनाओं और विपदा के लिए वे विधाता को कारण मानते हैं। वन से लौटने पर भी वे सबसे पहले माता कैकेयी से मिलते हैं। उनका स्वभाव संकोची है, लेकिन धर्मानुकूल है। जब चित्रकूट में उन्हें अयोध्या लौट जाने के लिए बाध्य किया जाता है तो वे इस समस्या का समाधान पहले गुरु, फिर अपने रिश्तेदार और अंत: में अपने भाई भरत पर ही छोड़ देते हैं। रामचरितमानस में वर्णन है कि जब यह तय हो जाता है कि भरतजी खुद श्रीराम के नाम पर राज्य करेंगे और सभी लोग अयोध्या को लौट जाएँगे, उस समय भी वे अपने मुख से कोई बात नहीं कहते और संकोच करते हैं।

देश और काल की गति के अनुरूप विनम्र संकोच करना और जरूरत पड़ने पर अपने विराट् संकल्प को प्रकट करना श्रीराम जैसे व्यक्तित्व के लिए ही संभव है। रामायण में वर्णन आता है कि जैसे ही विभीषण उनके समक्ष आता है, तो वे उसे लंकेश कहकर संबोधित करते हैं। दूसरी ओर वे शत्रुपक्ष के प्रति सद्भावना की प्रवृत्ति भी रखते हैं। अंगद जब रावण के दरबार में जाते हैं, तो वे उनको यह याद दिलाते हैं कि वह अपने को उसी वार्त्ता पर सीमित रखे जो लक्ष्य की पूर्ति में सहयोगी हो और शत्रुपक्ष का भी भला करे। श्रीराम जीवन भर मानवीय तल पर ही रहते हैं और मानवीय भावनाओं से खुद को बाँधे रखते हैं। रामचरितमानस में इस गुण को बेहतरीन तरीके से उद्घाटित किया गया है। मैत्री का उत्कृष्ट उदाहरण वे तब प्रस्तुत करते हैं, जब रावण का शक्ति प्रहार खुद आगे आकर अपने वक्षस्थल पर झेलते हैं, ताकि विभीषण के जीवन की रक्षा की जा सके। राम के दिव्य चरित्र को मानवता के साधारण धरातल पर उतारकर रख देना आसान कार्य नहीं है। रामचरितमानस में जैसी कथा है, वैसा ही उसका रूप बना रहता है। बावजूद इसके उनकी गंभीरता, धीरता, वीरता, क्षमाशीलता आदि गुण कभी भी उनके चरित्र को ईश्वरावतार के रूप में नहीं दरशाता है। अपने मानवीय चरित्र की पूर्णता को भरने में ही उनकी प्रतिभा लीन रहती है। मानस में उनके इस मानवीय चरित्र का स्वरूप हरेक देश एवं काल में व्यक्ति और समाज को उदात्त प्रेरणा देने में सक्षम है, यदि हमारे मन, विचार एवं कर्म में संतुलन है।

जीवन में चरित्र और जगत् में चरित्रवान व्यक्ति को खोजना बहुत कठिन है। त्रेता में श्रीराम और द्वापर में युधिष्ठिर जैसे चंद नाम ही इतिहास के पन्नों में हैं। वाल्मीकि ने चरित्र को धर्म का पर्याय माना है। उनकी दृष्टि में श्रीराम धर्म के प्रत्यक्ष मूर्ति हैं—रामो विग्रहवान् धर्मः। (अरण्य, ३७/१३)। राम का चरित्र यों ही वाल्मीकि के समक्ष नहीं आ गया। उन्होंने महर्षि नारद से सवाल किया कि इस समय लोक में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, सत्यवादी, चरित्रयुक्त आदि विभिन्न सद्गुणों से संपन्न व्यक्ति कौन है? इसके जवाब में नारद ने गुणों की पूरी तालिका बताई और अंत में कहा कि राम नियतात्मा हैं। उन्होंने इंद्रियों का जय किया है। वे महावीर्य हैं।

रामो विग्रहवान् धर्मः

भारत का जो भौतिक संसार है, जो वृक्ष और पादप हैं, पशु-पक्षी और पर्वतमालाएँ हैं, उनका सर्वोत्तम चित्रण वाल्मीकि रामायण में मिलता है। उस वाल्मीकि ने राम के आख्यान को गाने के लिए कथ्य-सामग्री को लोक से संग्रह किया, ताकि उनके चरित्र का समग्रता से गायन किया जा सके। वाल्मीकि के रामायण में उनका समूचा आग्रह श्रीराम के चरित्र पर होता है। जीवन में चरित्र और जगत् में चरित्रवान व्यक्ति को खोजना बहुत कठिन है। त्रेता में श्रीराम और द्वापर में युधिष्ठिर जैसे चंद नाम ही इतिहास के पन्नों में हैं। वाल्मीकि ने चरित्र को धर्म का पर्याय माना है। उनकी दृष्टि में श्रीराम धर्म के प्रत्यक्ष मूर्ति हैं—रामो विग्रहवान् धर्म:। (अरण्य, ३७/१३)। राम का चरित्र यों ही वाल्मीकि के समक्ष नहीं आ गया। उन्होंने महर्षि नारद से सवाल किया कि इस समय लोक में गुणवान, वीर्यवान, धर्मज्ञ, सत्यवादी, चरित्रयुक्त आदि विभिन्न सद्गुणों से संपन्न व्यक्ति कौन है? इसके जवाब में नारद ने गुणों की पूरी तालिका बताई और अंत में कहा कि राम नियतात्मा हैं। उन्होंने इंद्रियों का जय किया है। वे महावीर्य हैं।

वाल्मीकि ने राम के चरित्र को आधा श्लोक में समेट दिया है। वे कहते हैं कि समुद इव गांभीर्ये धैर्येण हिमवानिव (बाल, ०१/१७)। उनकी नजरों में राम से अधिक कोई सत्पथ में स्थित नहीं है। सीता और राम के संदर्भ में वे कहते हैं कि सीता राम के तुल्य हैं और राम सीता के। शील, आयु, आचार और कुल के लक्षणों के आधार पर सीता का जो चरित्र-चित्रण हुआ है, वह भारतीय सभ्यता के लिए एक मील का पत्थर है। रामायण में ऐसे कई प्रसंग हैं, जहाँ सीता ने राम से अपना मतभेद प्रकट किया, लेकिन कभी भी उन्होंने पति के धर्म पर सवाल नहीं उठाया। इसका कारण यह है कि धर्म भी श्रीराम के रूप में मूर्त होता है। वे प्राणियों के रक्षक और धर्म के परिरक्षक हैं। वे मनुष्यों का दु:ख देखकर सामान्य जन की तरह दु:खी होते हैं और उनके सुख में एक पिता की तरह प्रसन्न होते हैं। उनमें सबसे उत्कृष्ट गुण यह है कि वे एक बार कोई बात कहकर

उससे पलटते नहीं हैं। यह ऐसा गुण है, जो हरेक देश और काल के सापेक्ष है। अब हम इन गुणों एवं चरित्र को छोड़कर कुछ चंद शब्द और अक्षरों के विश्लेषण में ही रह जाते हैं। ऐसे ही समय के लिए कहा गया है कि 'जाकि रही भावना जैसी, प्रभु मूरत देखी तीन तैसी।'

वर्तमान जीवन में संकट क्या है? यह संकट धर्म का है, चरित्र का है और हमारे कर्म एवं वचन की शुभता का है। जिस प्रकार नक्षत्र, ग्रह और पृथ्वी अपने मार्ग पर गतिमान हैं, उसी प्रकार जीवन में धर्म पर अटल रहनेवाला ही बिना टकराए प्रगति करता है। मनुष्य का स्वाभाविक गुण है कि वह इस पर स्थिरता से रहे। अगर ऐसा नहीं हो, तब क्या होगा? राम खुद धर्म से च्युत होकर क्या करते? अयोध्या कांड (५३,२५-६) में वे कहते हैं कि हे लक्ष्मण, मैं अकेला ही क्रुद्ध होकर इस अयोध्या सहित समूची पृथ्वी को अपने बाणों से नष्ट करके अपना अभिषेक कर सकता हूँ, परंतु अधर्म से डरता हूँ। एक बार कल्पना कीजिए, यदि ऐसा कुछ श्रीराम के द्वारा होता, तो क्या जो चरित्र का सुगंध अयोध्या के रामराज्य से जुड़ा है, उसकी सुरभि दिग्दिगंत तक फैलती? वे न केवल अपने पिता, बल्कि अपनी माता के सुझाव को भी दरकिनार कर देते हैं। वे लक्ष्मण से कहते हैं कि तुम्हारे स्नहे को मैं जानता हूँ, लेकिन इस अनार्य बुद्धि को दूर रखो।

राम का चरित्र कुछ भिन्न था। उनका जीवन जटिल था, परंतु उनके जीवन के मार्ग सरल थे। राम के हाथ में शासन की बागडोर नहीं थी, न ही किसी को कुछ देने के लिए धन और संपत्ति थी, तब भी वे उस युवाकाल में समूचे भारतवर्ष के लिए एक आदर्श बन गए। उनकी कीर्ति और यशगान का पताका साधारण जन से लेकर ऋषि-मुनि एवं राजा-महाराजाओं से लेकर वनवासी तक पहुँच गया। वनवास के दौरान मंत्रिमंडल का सहयोगी जाबालि जब विविध प्रकार से तर्क देकर कहा कि वे अयोध्या के राज्य को स्वीकार कर लें, तब राम ने कहा कि जो अकार्य है और अशक्य है, तुम उसकी बात कर रहे हो! वह कहते हैं कि सत्यपरायण धर्म ही लोक में सबका मूल है। लोक में सत्य ही ईश्वर है। सत्य पर ही धर्म आश्रित है, और सत्य सबका मूल है।

व्यक्ति के चरित्र की उत्कृष्टता की पहचान निर्णायक क्षण में होती है। इसका एक अनुपम उदाहरण राम और रावण युद्ध के समय मिलता है। युद्ध में रावण का रथ टूट गया और उसे भूमि पर उतरना पड़ा। उसका प्रसिद्ध धनुष भी खंड-खंड हो गया। उस समय राम चाहते तो रावण का वध कर सकते थे, परंतु उन्होंने अपनी सद्‌गुण का परिचय दिया। उन्होंने कहा कि रावण, तुम इस समय संकट में हो। मैंने तुम्हारा पराक्रम देखा। तुम बहुत बहादुरी से लड़े। तुमने मेरे अनेक वीरों का सामना किया। तुम थक गए हो। मैं तुम्हें समय देता हूँ। घर जाओ और अच्छी तरह स्वस्थ होकर, दूसरे रथ पर बैठकर फिर युद्धभूमि में आओ, तब मैं तुम्हें बताऊँगा कि युद्ध कैसे लड़ा जाता है? (हमारी परंपरा : वियोग हरि, सस्ता साहित्य मंडल)। सभ्यता के इतिहास में ऐसी बात कभी सुनी नहीं गई, जब वीरों ने ऐसा किया हो। रावण-वध के पश्चात् विभीषण को ऐसी दुविधा थी कि पता नहीं, रावण के शरीर के साथ कैसा बरताव किया जाएगा! तब राम ने कहा कि विभीषण यह तुम्हारी भूल है। रावण महान् योद्धा, महान् सम्राट् था। उसने बड़ी शान से मृत्यु पाई है। जाओ, उसका विधि-विधान से अंत्येष्टि करो और पुण्य के भागी बनो। जीवन में राम बनने के लिए ऐसे ही धर्म तथा चरित्र के महान् सोपान का निर्माण करना होता है।

राम के जीवन के दो प्रसंग हैं, जिससे लगता है कि उनका स्वभाव सामान्य था और उनकी दृष्टि सदैव समाजोन्मुख रहता था। राम राजभवन छोड़कर जा रहे हैं। राजा दशरथ राजमहल से बाहर आते हैं और चिल्लाकर सुमंत को कहते हैं कि ठहरो! दूसरी ओर, राम का आदेश है कि नहीं सुमंत, रथ को आगे बढ़ाओ! सुमंत की स्थिति विकट है। वह आगे जा नहीं सकता है और पीछे भी नहीं मुड़ सकता है। वह राम की ओर देखकर कहता है कि आपके पिता का आदेश है—रुको। राम कहते हैं कि आपको यही डर है न कि वन से वापस आने पर महाराज नाराज हो जाएँगे। यदि आज्ञाभंग की स्थिति आए, तो आप कहना कि लोगों के कोलाहल में आपको आदेश सुनाई नहीं पड़ा। इस असत्य वचन के बचाव के लिए राम कहते हैं कि 'चिरं दुखस्य पापिष्ठमिति।' यानी दुःख को बहुत अधिक लंबा खींचना उचित नहीं होता है। दूसरी बार, जब अयोध्या के नागरिक भी राम के साथ रोते-बिलखते वन की ओर गमन करते हैं, तब राम सुमंत को कहते हैं कि रुको नहीं, चलो! संकट काल में राम सर्वसाधारण की तरह क्रियाशील होते हैं।

वाल्मीकि हों या तुलसीदास, कंबन हों या कोई अन्य ऋषि—सभी ने श्रीराम के चरित्र को सहज और सर्वमान्य बनाया है। यदि राम का चरित्र महान् पुरुष की तरह नहीं होता, उनके कर्म हमारी पहुँच के बाहर होते, तो क्या हमारा समाज उससे लाभ ले पाता? आज हमारे राष्ट्रीय चरित्र श्रीराम बने हुए हैं, तो इसका कारण उनके चरित्र का सर्वसुलभ और सर्वग्राही होना है। जब हम अपने जीवन को देखते हैं, तो राम खुद अपने जैसे लगते हैं। उनका दुःख अपना सा लगता है। कुछ बात हो या कुछ काम, राम सदैव हमारे जैसे लगने चाहिए और वे वैसा लगते भी हैं। इसलिए श्रीराम सार्वकालिक हैं। हमारा जीवन त्रुटियों से रहित नहीं होता है। हम अपने निम्न वृत्तियों पर विजय पाने के लिए संघर्ष करते हैं। सदैव ऊँचा-से-ऊँचा उठाने का प्रयास करते हैं। ऐसे पलों में हम विफल न होकर बार-बार के प्रयास से अपने जीवन को सफल कैसे बनाएँ? यह श्रीराम के श्रेष्ठ जीवन से सीखने को मिलता है। जब भी हम अपनी गलतियों से संघर्ष करते हैं, तब हम श्रीराम को स्मरण करते हैं। जब हम अपनी वृत्तियों को सद्‌गुणों में बदलते हैं, तब हम भी श्रीराम की तरह पुरुषोत्तम की प्रतिष्ठा को प्राप्त करते हैं। कर्म के बीच ऊँचा उठने में धर्म का पालन हमको भी उनकी श्रेणी में ला देता है, जिनका गुणगान करना ही हमारे कवियों एवं ऋषियों के लिए मूल भाव हैं।

तेलपा निवास, नजदीक एच-११६ एजी क्वार्टर,
हिनू कॉलोनी, राँची-८३४००२ (झारखंड)
दूरभाष : ९३०८२७०१०३

कुत्ते से सावधान

मूल : **भूपेंद्र कुमार दास**
संपादक : **महेंद्रनाथ दुबे**

सुपरिचित लेखक एवं अनुवादक। बँगला भाषा की चालीस कहानियों व कविताओं का अनुवाद, असमिया भाषा की कहानियों व कविताओं का अनुवाद। अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों और पुरस्कारों से अलंकृत। संप्रति प्रोफेसर, विभागाध्यक्ष आधुनिक भारतीय भाषाएँ एवं हिंदी; निदेशक, हिंदी तथा भाषा-विज्ञान विद्यापीठ; संकायाध्यक्ष (कला संकाय), डॉ. बी.आ.अ.वि.वि., आगरा।

फाटक खोलते-खोलते जितेन अचानक थमकर रह गया। फाटक से लगे हुए पोर्टिको के एक खंभे की आड़ में एक छोटा सा साइनबोर्ड लटका हुआ है, जिस पर लिखा है—'कुत्ते से सावधान'। अब यह समझ पाने में जितेन को कोई कठिनाई नहीं रही कि इस मकान के मालिक ने मनुष्यों को काट खानेवाला कुत्ता पाल रखा है। कुत्ते से भयभीत हो वह कई कदम पीछे हट गया और सड़क पर आ खड़ा हुआ। किंतु इस घर के मालिक का दर्शन करना उसके लिए अत्यंत आवश्यक है। अत: जैसे भी संभव हो, एक बार तो उनका दर्शन करन ही पड़ेगा। जैसाकि उसने जाना-सुना है, उन महाशय से यदि इस वेला में भेंट न हो सकी तो और किसी समय मिल पाना अत्यंत मुश्किल होगा। हाँ, यदि चाहें तो उनके कार्यालय में जाकर उनसे अवश्य भेंट कर सकते हैं। किंतु जितेन के पिता की विशेष इच्छा है कि उन महाशय से उनके घर पर ही साक्षात्कार किया जाए। बहुत बड़े आदमी हैं। कार्यालय के समय वे बहुत ज्यादा व्यस्त रहते हैं। वहाँ नाना प्रकार के लोग नाना प्रकार की जरूरतों से बराबर उनके पास आते-जाते रहते हैं। फलत: उसे जो बातें उनसे कहनी हैं, वे सब उनके घर जाकर कह आना ही श्रेयस्कर है।

'एक बार साँप के काट लेने पर फिर केंचुए से भी डर लगता है' के कथानुसार कुत्ते से भी जितेन को एक प्रकार का अस्वाभाविक डर हो गया है। यद्यपि यह डर अभी हाल का नहीं है, काफी दिनों पहले से ही है। उसे दो बार कुत्ता काट चुका है। और एक बार काट लेने पर कवि डाक की कहावत के अनुसार 'तीन बार में अनिष्ट' हो जाएगा, फलत: उसके पेट में चौदह बड़ी-बड़ी सूइयाँ चुभोनी पड़ेंगी। दो बार कुत्ता काटने से चौदह दूना अट्ठाईस सूइयों की चुभन का स्वाद अभी भी उसके मनप्राण में भली-भाँति बसा हुआ है। इसी से उन महाशय के घर के फाटक पर से ही पीछे हटकर वह सड़क पर आ खड़ा हुआ और 'क्या करे, क्या न करे,' इसी की फिक्र में पड़ा रहा।

जितेन को याद आया कि एक साधारण से ऑफिस की छोटी सी तनखाह वाली क्लर्क की नौकरी करनेवाले उसके पिता को घर-परिवार का खर्च चलाते हुए उसकी पढ़ाई के खर्चे का जुगाड़ करने में कितना कष्ट उठाना पड़ता था। उस पर भी जैसे-तैसे वह बी.ए. तो पास कर गया, किंतु तबसे अभी नौकरी ही ढूँढ़ रहा है कि पिताजी उस छोटी नौकरी से भी रिटायर हो गए। विगत दो वर्षों से नौकरी खोजते-खोजते जितेन हैरान हो गया, फिर भी अभी ज्यों-त्यों बेकार पड़ा है। स्थानीय रोजगार दफ्तर में जो नाम दर्ज कराया था, उसे एक बार, दो बार, करते-करते चार बार नवीकरण करा चुका है। यह बात जरूर है कि इन विगत दो वर्षों में उसने क्लर्की की नौकरी के लिए इंटरव्यू लेटर भी न पाया हो, ऐसी बात नहीं है। किंतु इंटरव्यू देते रहने पर भी नौकरी कहीं नहीं लगी थी। फिर भी जितेन इससे निराश नहीं हुआ है। पहले की तरह इस बार भी रोजगार दफ्तर के क्लर्क को कुछ घूस-घास देकर एक ऑफिस से आई क्लर्की की डिमांड लिस्ट में अपना नाम भी डलवा देने से इस बार भी वह इंटरव्यू के लिए पत्र पा गया है। इसी उद्देश्य से उस दफ्तर के सबसे बड़े अधिकारी से भेंट करने के लिए वह यहाँ आया, किंतु कुत्ते के डर से अब सड़क पर टहलते हुए समय गुजार रहा है। इन महाशय का नाम है—प्रशांत शइकिया। जितेन को जब इस बार इंटरव्यू लेटर मिला तो उसके अनुभवी वृद्ध पिता ने उसे बुलाकर बहुत गंभीरता से समझाते हुए कहा, "बेटे! आजकल इंटरव्यू देने मात्र से नौकरी नहीं लगती। जब तक नौकरी देने में समर्थ अधिकारी को किसी तरह अपने पक्ष में न कर लिया जाए, तब तक नौकरी की आशा बहुत क्षीण ही समझो।"

जितेन भी जानता है कि पिता ने कोई झूठी बात नहीं कही। आज का युग ही मक्खनबाजी का युग है। दरअसल पहले के इंटरव्यू में वह समुचित भेंट पूजा का जुगाड़ कर मक्खनबाजी नहीं कर पाया, इसी से उसकी नौकरी भी नहीं लग पाई। यद्यपि इंटरव्यू लेने के लिए जो समर्थ अधिकारी आए थे, इंटरव्यू के समय उनके सभी प्रश्नों का उत्तर उसने बिना किसी हिचक के सही-सही दिया था, किंतु नौकरी उसे न मिलनी थी, न मिली।

नौकरी पाने की आशा में रात बीतते ही, बिल्कुल भोर में वह महाशय डायरेक्टर प्रशांत शइकिया के घर दौड़ा-दौड़ा गया, पिता के रिटायर हो जाने पर पेंशन की मामूली सी आमदनी पर उसके घर की दशा अत्यंत शोचनीय हो उठी थी। अत: उसके मन के भाव पिंजरे में बंद बाघ की तरह मन-ही-मन उमड़ने-घुमड़ने लगे। अतएव नौकरी की आशा में पागल की तरह इस घर से उस घर तक, इस ऑफिस से उस ऑफिस तक चक्कर काटने लगा। आज इंटरव्यू के पहले ही प्रशांत शइकिया के बँगले पर उनसे साक्षात्कार करके किसी तरह उसे नौकरी में लगा लेने का अनुरोध करने ही जितेन वहाँ आया है। किंतु शइकिया साहब के बँगले पर शिकारी बाज की तरह आकर

जब वह अंदर घुसना चाहता था, तभी 'कुत्ते से सावधान' का बोर्ड पढ़कर वह डरपोक उल्लू की तरह वहाँ से पीछे लौट आया।

अब वह सड़क पर खड़ा होकर इस बात की प्रतीक्षा करने लगा कि शइकिया साहब के बँगले से कोई आदमी बाहर आता है या नहीं। किंतु अभी तक कोई आदमी बाहर नहीं निकला। जितेन छटपटाने लगा। 'बहुत बड़े आदमी हैं' क्या इसी से परिवार का कोई आदमी बाहर नहीं निकल पाता है क्या? तो फिर नौकर-चाकर ही कहाँ मर गए? अथवा बड़े साहब के साथ रहते-रहते वे सब भी साहब हो गए क्या?

"अरे भाई! किसे ढूँढ़ रहो हो?" जितेन को बहुत देर से सामने सड़क पर खड़ा देखकर स्टेशनरी दुकानदार कुछ क्रोध में पूछ बैठा।

दुकानदार की बात सुनकर जितेन को बड़ा सकून मिला और वह दुकानदार के बिल्कुल करीब जाकर बोला, "शइकिया साहब से भेंट करने आया था, लेकिन कुत्ते के डर से सड़क पर यों ही आ खड़ा हुआ हूँ।

"शइकिया साहब से भेंट करना मेरे लिए अति आवश्यक है।" जितेन बड़े असहाय स्वर में बोला।

"भेंट क्यों नहीं कर पाओगे?" दुकानदार ने जितेन की निरीह दशा समझते हुए सांत्वना देने के स्वर में कहा, "कुत्ते के डर के मारे क्या शइकिया साहब से बिना मिले ही चले जाओगे? अरे बड़े भाई! शइकिया साहब के कुत्ते को कब्जे में करने की लाठी तो मेरी दुकान में ही है। बस दो डालमिया बिस्कुट खरीद लो। जब आपको काटने के लिए दौड़ा आए तो उसके आगे बिस्कुट फेंक दीजिएगा। फिर तो वह आपको काटने के लिए दौड़ेगा ही नहीं।"

"अच्छा, ऐसी बात है क्या?" अत्यंत आग्रह से जितेन ने कहा, "फिर दीजिए न दो बिस्कुट। कितना दाम लगेगा?"

"तीस पैसे मात्र।"

जितेन ने तीस पैसे देकर डालमिया बिस्कुट खरीदे और दुकानदार को हार्दिक धन्यवाद देता हुआ वह शइकिया साहब के बँगले की ओर बढ़ चला। फाटक पर पहुँचा। इस बार साहस करके उसने फाटक खोला और भीतर चला गया।

फाटक खुलने की आवाज सुनकर मालिक का भूटिया कुत्ता भों-भों करता हुआ बिल्कुल उसके करीब तक दौड़ आया। उसकी भयानक भों-भों की आवाज से ऐसा लगा कि यदि एक भी पग जितेन और आगे बढ़ा तो वह उसे काटकर मार ही डालेगा। पर अबकी जितेन डरा नहीं। थोड़ी दूर पर बंदूकधारी शिकारी की तरह पाँव समेटे हुए बैठे उस भूटिया कुत्ते के आगे उसने डालमिया के दोनों बिस्कुट फेंक दिए। दुकानदार की बात बिल्कुल सच निकली। बिस्कुट पाकर कुत्ते ने भों-भों करना बंद कर दिया। वह जैसे जितेन के वशीभूत हो गया हो, इस भाव से पूँछ हिला-हिलाकर बिस्कुट खाने में मगन हो गया। इस सुयोग का लाभ उठाते हुए जितेन मकान के बरामदे में चढ़ आया और उसने कॉलिंग बेल का बटन दबा दिया। थोड़ी ही देर बाद दरवाजा खुलने की आवाज हुई।

"किससे मिलना चाहते हो?" द्वार खोलती हुई एक नवयुवती ने मुसकराते हुए जितेन से पूछा।

पायजामा कुरता पहने हुए बॉबकट बालोंवाली उस स्वस्थ युवती, जो देखने में बिल्कुल लड़का लग रही थी, की ओर देखते हुए अत्यंत विनीत स्वर में जितेन ने कहा, "मैं डायरेक्टर शइकिया महाशय का दर्शन करने आया हूँ।" उस नवयुवती ने कहा, "बैठिए! मैं आपके आने की सूचना पापाजी को दे देती हूँ।"

यह कहकर वह नवयुवती नृत्य की भंगिमा करती सी थिरकती हुई अंदर चली गई। अत्यंत चुस्त पोशाक में सुपुष्ट उभरे हुए उसके विभिन्न अंगों की थिरकन बहुत देर तक जितेन की आँखों के सामने नाचती रही।

पास में पड़े सोफे पर जितेन बैठ गया। उस गद्दीदार सोफे पर बैठकर जितेन ने ड्राइंग-रूम के चारों ओर देखा। इस बड़े हॉलनुमा कमरे को बड़ी ही सुरुचि के साथ सजाया-सँवारा गया था। चमचमाते फर्नीचर को देखते ही स्पष्टत: लगा कि दरअसल वे बहुत की मूल्यवान होंगे।

भीतर की ओर से ड्राइंग-रूम की ओर आ रहे किसी व्यक्ति की पगध्वनि सुनकर जितेन सँभलकर बैठा। लगता है, शइकिया साहब आ गए हैं! वह उठकर प्रणाम करने को तैयार हुआ। एक व्यक्ति अंदर आया।

"प्रणाम हुजूर!"

"ओह! आप साहब से मिलने आए हैं क्या?" उस व्यक्ति ने कहा, "वे अंदर ही हैं। मैं तो उनका ड्राइवर हूँ।" इतना कहकर ड्राइवर चला गया।

'धत्तेरे की! हुजूर कहने के लिए और कोई आदमी नहीं मिला!' जितेन ने मन-ही-मन कहा, 'आजकल साहब और ड्राइवर में फर्क करना मुश्किल हो गया है। चेहरा देखकर कैसे पहचान सकेंगे? किसी-किसी ड्राइवर की स्टाइल तो साहब से भी दो कदम बढ़-चढ़कर होती है। पिताजी के दफ्तर का ड्राइवर तो सरकारी गाड़ी का पेट्रोल बेचकर प्रतिदिन दस-पंद्रह रुपए ऊपरी आमदनी कर लेता है। किसी समय पिताजी ने आक्षेप करते हुए कहा भी था—यदि क्लर्क न होकर वे ड्राइवर हुए होते तो परिवारवालों को दो जून सुख से खिला-पिला सके होते। अरे बेटे! यदि बने तो एकदम बड़े आदमी की तरह, अन्यथा एकदम छोटे आदमी की तरह चलने की कोशिश करो। इससे सुखी हो सकोगे।' किंतु यदि परिश्रम करने से ही कोई बड़ा आदमी होता तो उसके साथ पढ़नेवाला, उपमंत्री श्री बरा महाशय का बड़ा लड़का अनुपम बरा, जो बी.ए. में दो बार फेल हो गया था, बिना कोई परिश्रम किए ही चाह बागान के मैनेजर का पद हरगिज नहीं पा सका होता। पिताजी के कथानुसार वह बड़ा मनुष्य न हो पाने पर फिर एकदम छोटे आदमी सा सुखी जीवन बिताने की चेष्टा नहीं कर सका। बी.ए. पास करके भी रास्ते की मेढकी होने क्यों जाएगा? इसलिए पिता की ही तरह मक्खी मारने की क्लर्की जैसी नौकरी अब तक ढूँढ़ता फिर रहा है। चाहे जैसे भी मिले, उसे एक नौकरी जुटानी ही है। छोटे भाई को कुछ और बना पाए या नहीं, कम-से-कम क्लर्क बनने भर के लिए बी.ए. पास तो करना ही पड़ेगा। इस समय उस पर बहुत जिम्मेदारी है। पेंशन पानेवाले पिता पर, अब इस बुढ़ापे के समय और अधिक भार डालकर कष्ट पहुँचाने का साहस उसमें नहीं है।

"कहिए, आपको क्या हुआ है?"

अपने सामने खड़े पाइप पीते हुए अधेड़ उम्र के एक भारी-भरकम

व्यक्ति की गंभीर बोली सुनकर, जैसे नींद से हड़बड़ाकर कोई जग पड़े, वैसे ही अपनी चिंताधारा में बाधा पाकर वह अचानक उठ खड़ा हुआ। हड़बड़ाकर वह कहना चाहने लगा—

"मैं···मैं श्री प्रशांत शइकिया को···"

"मैं ही प्रशांत शइकिया हूँ। कहिए, आपको मुझ से क्या कहना है?"

शइकिया साहब आरामकुरसी पर बैठ गए। जितेन खड़ा रहा। फिर शइकिया साहब की ओर देखते हुए हाथ जोड़कर अत्यंत विनयपूर्वक उसने प्रार्थना की, "सर, मेरा नाम जितेन चंद्र बैरागी है। पिताश्री का नाम सुखमय बैरागी है। पिताजी नौकरी करते थे। आज से दो वर्ष पूर्व वे रिटायर हो गए। उनके रिटायर होने के वर्ष से ही बी.ए. पास कर मैं नौकरी खोजता फिर रहा हूँ, परंतुअभी तक कहीं भी कुछ जुगाड़ नहीं कर पाया। आप तो सर, जानते ही हैं कि रिटायर हुआ आदमी कर्महीन गधे की भाँति चिल्ला-चिल्लाकर घर पत्थर बनाए रखता है। चूँकि पढ़-लिखकर भी मैं अभी तक बेकार पड़ा हूँ, अत: पिताजी बराबर गाली-गलौज करते रहते हैं। दूसरी ओर, पेंशन के थोड़े से पैसे से हमारे घर का खर्च उसी तरह नहीं चल पा रहा है, जैसे कि खाली तालाब में हंस नहीं तैरते।"

एक ही साँस में जितेन यह सारा कुछ उसी तरह कह गया, जैसे मास्टर के छड़ी उठाकर खड़े होने पर कोई तीसरी कक्षा का विद्यार्थी कंठस्थ कविता एक ही साँस में सुना जाता है।

"इसमें मुझे क्या करना चाहिए?" अत्यंत गंभीर स्वर में शइकिया ने पूछा।

"सर! आपके कार्यालय में लोअर डिवीजन असिस्टेंट की नौकरी के लिए जगह प्रकाशित हुई है, इसका मुझे पता लगा है। एंप्लायमेंट एक्सचेंज से डिमांड लिस्ट में मेरा नाम आ जाने के बाद आपके कार्यालय से मुझे इंटरव्यू लेटर मिला है। उसी से मैं आपके पास व्यक्तिगत रूप से दर्शन करने आया हूँ। हुजूर, जैसे भी संभव हो, इसका एक पद मुझे देने की कृपा करें।"

आरामकुरसी पर बड़े आराम से बैठकर चुरुट का पाइप पीते हुए प्रशांत शइकिया ने बड़े ध्यान से जितेन की बात सुनी, किंतु सुनकर अपने आप को ही जैसे झकझोरते हुए गुस्से से चीखे—"नौकरी-नौकरी! सबेरा होने से लेकर दिन ढलने तक नौकरी चाहनेवालों द्वारा दी जा रही परेशानी मैं और कितना सहूँगा? मैं तो एकदम थक गया हूँ।"

"हुजूर! मैं अत्यंत निरुपाय होकर आपकी शरण में आया हूँ।" बड़े असहाय भाव से जितेन ने कहा।

"ठीक है, मैं समझ गया।" शइकिया साहब ने कहा, "किंतु अंतिम रूप से सुन लो, मैं नौकरी नहीं दे सकूँगा। दो जगहों के लिए बड़े-बड़े लोगों से लेकर चेथरू-चमरू तक सभी मेरे पीछे पड़े हैं। आप जा सकते हैं।"

शइकिया साहब उठ खड़े हुए।

"हमारी दशा बहुत शोचनीय हो गई है। इसलिए विनती करता हूँ, हुजूर···।"

जितेन की बात पूरी नहीं हो पाई कि शइकिया साहब उसी तरह गरज उठे, जैसे अपरिचित आदमी को देखकर उनका भूटिया कुत्ता उसकी ओर गरज पड़ता है।

"हाँ है कि नहीं? मैं बिल्कुल नहीं कर पाऊँगा। तुम अब सीधे जा सकते हो।"

शइकिया साहब की इस कठोर गर्जना पर जितेन काठ की पुतली की तरह उनके सामने खड़ा रह गया। उसने अपने बाएँ हाथ से सिर का हिस्सा खुजलाया कि अचानक उसे अपने पिता की बात याद आ गई। शइकिया साहब के घर जब वह मिलने आ रहा था, तब पिताजी ने कहा था, 'बेटे! बिना घूस दिए आजकल कोई भी काम सफल नहीं हो पाता। यदि जरूरत पड़े तो तुम शइकिया साहब से थोड़ा पूछताछ करना कि···।'

जितेन ने शइकिया साहब के चेहरे की ओर देखकर मुसकराने की कोशिश करते हुए कहा, "सर! पिताजी ने कहा था यदि श्रीमान मुझे नौकरी में रखते हैं तो इसके लिए जो भी आपका प्राप्य अंश है, उसे पिताजी आपके घर आकर दे जाएँगे।"

"प्राप्य अंश?" शइकिया साहब के चेहरे पर हँसी खेल गई—"कितने तक दे सकते हो?" सहारा पाकर जितेन तुरंत बोल पड़ा, "सात सौ, आठ सौ अथवा जरूरत के मुताबिक इससे कुछ अधिक भी।"

बिस्कुट पाकर जैसे साहब का अत्यंत क्रुद्ध भूटिया कुत्ता शांत होकर उसके मुख की ओर देखते हुए पूँछ हिला-हिलाकर संतोष दिखा रहा था, उसी प्रकार पैसे का नाम सुनकर शइकिया साहब के मुख पर से क्रोध, घृणा, चिढ़ आदि के सभी भाव क्षण में विलुप्त हो गए और अब उनका मुख पूरी तरह शांत, समुज्ज्वल हो उठा। उन्होंने बड़ी हार्दिकता से प्रेमपूर्वक जितेन के मुख की ओर देखकर कहा, "ठीक है, जब तुम किसी तरह नहीं मान रहे हो, बहुत जोर देकर पकड़ रहे हो तो लाचार होकर एक जगह तुम्हें दूँगा ही। अच्छा, नौकरी मिल जाने के बाद मेरे घर आकर जितना धन दे जाने को कहा है, उसे भूल हरगिज मत जाना।"

जितेन—"नहीं भूलूँगा सर! निश्चय ही नहीं भूलूँगा।" कहकर साष्टांग दंडवत् करके विजयी सैनिक की भाँति वह बाहर निकल आया।

पोर्टिको के चबूतरे पर अभी भी भूटिया कुत्ता बैठा है। जितेन ने उसकी ओर तिरछी नजरों से देखा। उसे देखकर उस कुत्ते ने दोनों पैरों को आगे बढ़ाकर पूँछ हिलाना शुरू कर दिया। लगता है, उसे और भी बिस्कुट की जरूरत है। किंतु अब उसने कुछ झुँझलाहट से उसे "दूर-दूर" कहा और बाहर सड़क पर आ गया। जब वह स्टेशनरी की दुकान के सामने पहुँचा तो उसे देखकर उस दुकानदार ने पूछा, "क्यों भाई! कुत्ता काटने के लिए तो नहीं दौड़ा?"

एक अर्थगर्भित मुसकान फैलाते हुए जितेन ने कहा, "जानते हैं, एक नहीं, दो कुत्ते काटने दौड़े आए थे।"

"तो फिर काटा नहीं?"

"नहीं, नहीं काट पाए। ज्योंही काटने दौड़े आए, त्यों ही आपके दिए हुए दो डालमिया बिस्कुट उसे खाने को देकर एक को वश में किया और दूसरे को अपने रिटायर पिता की पेंशन और ग्रैच्युटी का बड़ा भाग देने का वायदा करके शांत किया। इस प्रकार दोनों कुत्ते भलीभाँति वश में हो गए।"

इतनी बात कहकर जितेन मन के भीतर आनंद से जोर-जोर से ठठाकर हँसने लगा। उसकी बात कुछ समझकर और कुछ बिना समझे ही, समझ और नासमझ के बीच में पड़ा वह दुकानदार भी जितेन के स्वर में स्वर मिलाकर ठठाकर हँसने लगा।

रिश्तों की बुनियाद

• योगेंद्र वर्मा 'व्योम'

जिंदा कई सवाल

भूख मिली थी कल रस्ते में
बता रही थी हाल
पतली-सी रस्सी पर नट के
करतब दिखा रही
पीठ-पेट को ज्यों रोटी का
मतलब सिखा रही
हैं उसकी आँखों में लेकिन
जिंदा कई सवाल

सब्जी के ठेले के संग-संग
घूमी भी दिनभर
किंतु शाम को जला न चूल्हा
गुमसुम सारा घर
चिढ़ा रहा मुँह उम्मीदों को
साँसों का जंजाल

सड़क किनारे बैठ शून्य में
रोज ताकती है
हल तलाशती हर उलझन के
तर्क छाँटती है
छोटा-सा दिखता है उसको
इतना गगन विशाल

शब्दों का बर्ताव

गुजर गया लो एक और दिन
जीते हुए तनाव
सुबह आँख खुलते ही जगते
कर्कश तर्क-कुतर्क
जिन्हें देख दिनचर्या रहती
दिनभर बनकर नर्क
खत्म हो गया अपनेपन से
शब्दों का बर्ताव

कच्चेपन से संबंधों का
होता रहा अनर्थ
चिंता से चिंतन तक जाना
गया सभी कुछ व्यर्थ
दूषित होकर किए सोच ने
आहत मन के भाव

मन में जब-तब उल्टे-सीधे
उगते रहे विचार
किंतु तभी दायित्वों ने भी
लिए नए आकार
चक्रवात में खेना दुष्कर
जीवन की यह नाव

मन का संवत्सर

किसने लिखे शब्द कटु, घर के
कोरे कागज पर

कोशिश तो यह थी अनुभव की
श्रेष्ठ सूक्तियाँ हों
या फिर जीवन-दर्शन की
जीवंत पंक्तियाँ हों
किंतु न जाने पनपे कैसे
गंधहीन अक्षर

मन से मन की मूक-बधिर सी
भाषा पढ़ लेते
काश त्याग की, अपनेपन की
गाथा गढ़ लेते
तो फिर इतने व्यथित न होते
स्वर्णिम हस्ताक्षर

व्यवहारों के सूत्रवाक्य से
भाव जगें शायद
खुशहाली के कालजयी कुछ
गीत उगें शायद
उजले कल की आशा में है
मन का संवत्सर

सुपरिचित लेखक। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ तथा 'इस कोलाहल में' (काव्य-संग्रह), 'बात बोलेगी' (साक्षात्कार संग्रह), 'रिश्ते बने रहें' (नवगीत संग्रह) प्रकाशित। शताधिक संस्थाओं से समय-समय पर सम्मानित। संप्रति राजकीय सेवा।

घर-आँगन का अर्थ

रामचरितमानस जैसा हो
घर-आँगन का अर्थ

मात-पिता, पति-पत्नी, भाई,
गुरु-शिष्य संबंध
पनपें बनकर अपनेपन के
अभिनव ललित निबंध
अहम-वहम रिश्ते-नातों का
करते सदा अनर्थ

आपस के सद् व्यवहारों के
लिखें अनूठे छंद
तभी मान-मर्यादाओं में
छीजन होगी बंद
बरना सिर्फ दिखावे भर का
हर लगाव है व्यर्थ

जीकर देखो अनुशासन की
चौपाई के भाव
बदलेंगे फिर जीवन के
दोहों के सभी स्वभाव
प्रेम, त्याग घर को घर करने
में हैं बहुत समर्थ

वृक्षों से संवाद

पत्तों को करना ही होगा
वृक्षों से संवाद
जानेंगे, समझेंगे बतियाहट की
भाषा को
आँधी-बारिश में भी जीवन की
परिभाषा को
मंत्रमुग्ध कर देगा फिर
हरियाली का अनुवाद

तनों-टहनियों से हर दिन
अपनापन कैसे हो
शब्दों से व्यवहारों में
मीठापन कैसे हो
यही सीखकर पुख्ता होगी
रिश्तों की बुनियाद

आवश्यक है सन्नाटे की,
जड़ता की टूटन
तभी रहेंगे जीवित आगे
अभिनव सोच-सृजन
कभी न हावी होगा इससे
सपनों पर अवसाद

ए.एल.-४९, उमा मेडिकल के पीछे,
दीनदयाल नगर-१, काँठ रोड,
मुरादाबाद-२४४१०५ (उ.प्र.)
दूरभाष : ९४१२८०५९८१

अस्पताल

• वंदना मुकेश

सुपरिचित लेखिका। 'नौवें दशक का हिंदी निबंध साहित्य एक विवेचन' (शोध प्रबंध), पत्र-पत्रिकाओं और साहित्यिक पुस्तकों, वेब पत्र-पत्रिकाओं में विविध विषयों पर कविताएँ, संस्मरण, समीक्षाएँ, लेख एवं शोध-पत्र प्रकाशित। 'सृजन भारती' सम्मान सहित अनेक सम्मानों से सम्मानित। संप्रति इंग्लैंड में अंग्रेजी की प्राध्यापिका एवं हिंदी में स्वतंत्र लेखन।

पैट्रिक को आज अस्पताल से छुट्टी मिली थी। हाथ में कपड़ों का बैग था। काफी देर से वह वहीं डिस्चार्ज लाउंज में बने कैफे में बैठा, उसे घर ले जाने के लिए आने वाली गाड़ी की प्रतीक्षा कर रहा था। बाहर धूप तो नहीं थी, किंतु बारिश भी नहीं थी। जब काँच के बाहर उसने गाड़ी देखी तो सोचा कि इससे पहले कोई बुलाने आए, वह खुद ही चला जाए। उसे किसी से बात करने का कोई मन नहीं था। बड़े बेमन से वह धीरे-धीरे बाहर की तरफ जा रहा था। एक तो जैकेट भारी, ऊपर से हाथ का बैग भी भारी था। उसे एलिस पर गुस्सा आया, जिसने जबर्दस्ती उसमें चार सेब डाल दिए थे। एलिस अस्पताल में उसी के जैसी एक मरीज थी, जिससे पैट्रिक की दोस्ती हो गई थी। वह बाहर निकला तो टोपी-स्कार्फ, मोटी जैकेट, ट्राउजर्स के भीतर थर्मल लॉञ्ग जोंस पहने हुए भी ठंड बिजली की भाँति उसके सारे शरीर में घुस गई। उसने खुद को ठंड से बचाने के असफल प्रयास में धूप की आस में ऊपर देखा।

बर्मिंघम के क्वीन एलिजाबेथ अस्पताल के मुख्य द्वार, गोल चक्कर के काँच वाले दरवाजे के ठीक सामने! एक जोरदार धड़ाम! वह मुँह के बल गिरा, इससे पहले कि कोई कुछ समझ पाता, उसका छह फुटा शरीर फर्श पर अपनी पूरी लंबाई के साथ पड़ा था।

भला हो कि अस्पताल के बाहर था। फटाफट ऐंबुलेंस से वर्दी में उतरे पैरामेडिक्स की टीम ने उसे घेर लिया। उन्होंने अपने सधे हाथों से उसे सीधा किया तो पूरा मुँह ताजा लाल रंग के खून से भरा था।

कारण किसी की समझ में नहीं आया कि वह क्यों गिरा? संभवत: उसे कमजोरी के कारण चक्कर आ गए थे। कमजोर शरीर, अवसादग्रस्त मन वह बेहोश हो गया और जो ऐंबुलेंस से घर जानेवाला था, वह वापस अस्पताल की ओर···। पैरामेडिक्स ही उसे स्ट्रेचर पर डालकर एक्सीडेंट और इमरजेंसी विभाग में छोड़ गए। होश में आने पर पैट्रिक ने स्वयं को अस्पताल के बेड पर पाया। नर्स ने उसे होश में आने पर बताया कि उसकी कलाई में फैक्चर हुआ है और मुँह के बल गिरने के कारण नाक की हड्डी टूट गई है। उसने आँखें खोलीं, उसकी आँखों से दो आँसू दोनों तरफ गिरे, पर होंठ न जाने क्यों मुस्करा दिए। उसने आँखें बंद कर लीं। वह याद करने लगा···

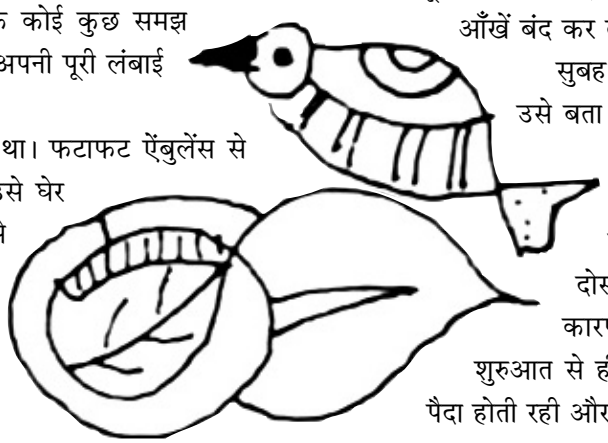

सुबह मॉर्निंग ड्यूटी पर आए डॉक्टर श्याम ने उसे बता दिया था कि दोपहर तक उसे डिस्चार्ज कर दिया जाएगा। पता नहीं क्यों, तभी से मन बैठ सा गया था। यहाँ आदमियों के जनरल वार्ड में उसकी सबसे अच्छी दोस्ती हो चुकी थी। प्रोस्ट्रेट के ऑपरेशन के कारण पिछली बार वह यहाँ भरती हुआ था। शुरुआत से ही उसके केस में कोई-न-कोई समस्या पैदा होती रही और उसका रहना बढ़ता गया। कितने मरीज

उसके सामने आए और चले गए, किंतु वह वहीं था। नर्सों से हँसी-मजाक, १० मरीज थे वार्ड में, पैट्रिक हर एक को जानता था। सुबह की नर्स केटी, नाइट ड्यूटी वाली सैली, क्लीनर क्लारा, वार्ड बॉय सैम सब से रोज की मुलाकात और ढेरों बातें। वैसे पैट्रिक बोलता कम था, लेकिन उसका चेहरा सदा मुसकराता रहता था। वार्ड में इतने लोगों का प्रिय वह यों ही तो नहीं बन गया था। उसके कोई नखरे नहीं थे। बेड नंबर १९ वाला मार्शल तो हर दस मिनिट बाद नर्सों को परेशान करता था। ७ नंबर और ८ नंबरवाले जोसेफ और माइक उसी की उम्र के थे, लेकिन दोनों में छत्तीस का आँकड़ा। कुत्ते-बिल्लियों की तरह लड़ते रहते। मजे की बात तो यह थी कि दोनों बिस्तर से हिल नहीं सकते थे, लेकिन जबान तो निरंतर चलती थी। पाँच नंबर पर नील था। जवान लड़का, अकसर किताब पढ़ता रहता, कभी-कभी पैट्रिक को देखकर मुसकरा देता था। वह खुद ३ नंबर बेड पर था। १ नंबर बेडवाला लेडीज वार्ड के चक्कर लगाता और फिर चटकारे लेकर किस्से सुनाता। उस सबके बीच कैसे पैट्रिक का समय बीतता, पता ही न चलता। इसलिए जब सुबह डॉ. श्याम ने उसे डिस्चार्ज करने की बात कही तो उसके चेहरे की मुस्कान गायब हो गई। घर में कौन था, जो उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। वह उसका घर इसलिए था कि वह वहाँ रहता था। वरना तो बस वह चारदीवारों वाला एक मकान था।

जब वह पिछली बार अस्पताल गया तो जेक नाम का एक मरीज था, उसकी उम्र लगभग ३५ के करीब रही होगी। उसके माथे पर चोट थी, किसी से कहासुनी हुई तो सामने वाले ने पेट में चाकू घुसेड़ दिया। वह काफी ठीक हो गया था। अकसर बाहर 'स्मोकिंग एरिया' में जा-जाकर सिगरेट पिया करता था। उसके चेहरे पर टाँकों के निशान-ही-निशान थे। एक शाम वह एक नए जवान मरीज को सिखा रहा था कि देख, कैसे वापस आता हूँ दो ही दिन में।

जेक की आवाज उसके कानों में पड़ रही थी।

'कल डिस्चार्ज करेंगे, परसों पब पर मारपीट, शनिवार को वापस यहीं, शायद बेड बदल जाए, बस इधर से जाना और उधर से वापस आना। वार्ड तो यही पसंद है। जेक पैट्रिक को बिल्कुल पसंद नहीं है।'

पैट्रिक को कुछ समझ नहीं आया नीमबेहोशी में। लेकिन सचमुच में जेक एक सप्ताह के पहले वापस बाइज्जत न दिखनेवाली चोटों के साथ अस्पताल में दाखिल था। नर्सें भी सब समझती थीं, लेकिन उन्हें तो चुपचाप अपनी ड्यूटी करनी थी। वैसे भी जैक जैसे शातिर दिमाग वाले व्यक्ति से कोई क्यों उलझता?

उसकी बीवी मेंडी तो पाँच साल पहले कैंसर से चल बसी और उसके रहते अपनी उम्र से दस साल कम लगनेवाला जोशीला पैट्रिक अचानक अपनी उम्र से ही नहीं, मन से भी २० साल बड़ा लगने लगा। वह आते सितंबर में ८० पूरे कर लेगा। दो बेटे, एक बेटी हुए, लेकिन सब संसार के कोनों में फैले, अपनी-अपनी दुनिया में मस्त। आखिरी बार मेंडी के जीवित रहते ही मिले थे। लगभग सात वर्ष हो गए, किसी का फोन तक नहीं आता था। अब तो उसे आस भी नहीं रहती थी। मार्था जरूर उससे मिलने महीने में एक बार आ जाती थी, चाहे घर हो या अस्पताल। मार्था उसकी बीवी की बहन। वह अकेली थी, उसने शादी नहीं की थी। मेंडी के जाने के बाद पैट्रिक ने एक बार डरते-डरते साथ रहने का प्रस्ताव रखा, किंतु मार्था ने साफ मना कर दिया था। फिर पैट्रिक ने भी कभी उस विषय को नहीं छेड़ा। और मार्था ने उससे मिलना नहीं छोड़ा, क्योंकि दोनों एक-दूसरे का सम्मान करते थे।

बुढ़ापा अपनी जगह था, लेकिन मार्था का जाना उसे तोड़ गया था। वह और मार्था रोज शाम हाथ-में-हाथ डालकर जब बगीचे में सैर करते तो कितने लोग उन्हें अभिवादन करते, उनकी जोड़ी का तारीफ करते और इस उम्र में भी मार्था का शरमा जाना पैट्रिक को बहुत भाता था। और वह उसे छोड़कर चली गई। मार्था की याद में फिर दो आँसू ढुलक गए।

उसके घर को घर तो मार्था ने ही बनाया था। मार्था बहुत मन से उसके लिए खाना पकाती, टेबल सजाती, कुकीज बनाती। मार्था के जाने के बाद वह मील्स डायरेक्ट से ही भोजन मँगा लेता था। कभी-कभी वह उसे भी खत्म न कर पाता और कभी-कभी खाने का मन ही न होता। फिर प्रोस्ट्रेट के ऑपरेशन की बात हुई तो उसे हॉस्पिटल में रहने की बात सोच-सोचकर बेचैनी हो रही थी कि कैसे रहेगा वहाँ? और अब यह हाल है कि अस्पताल से जाने का मन ही नहीं कर रहा था। लेकिन डॉ. श्याम ने···

उसे याद आ गया कि जब वह गेट पर बाहर जा रहा था तो उसे जेक की बात लगातार याद आ रही थी···बस इधर से जाना और उधर से वापस आना···।

उसकी बंद आँखों से फिर दो आँसू दोनों तरफ गिरे और होंठ मुसकरा दिए।

35 Brookhouse Road, Walsall,
West Midlands WS5 3AE England (U.K.)
दूरभाष : ००४४-७८८६७७७४१८
vandanamsharma@hotmail.co.uk

मेरी बल्गारिया, ग्रीस यात्रा

• स्नेह सुधा नवल

बचपन से ही यात्रा करना अच्छा लगता है। बचपन में दिल्ली से वृंदावन यात्रा एक नियमित यात्रा थी। प्राय: हर माह अपने श्रद्धेय पिता-माता के साथ यह यात्रा होती थी। याद है बाबूजी मैथिलीशरण गुप्त की प्रसिद्ध गाँव विषयक कविता 'शिक्षा की यदि कमी न होती/गाँव स्वर्ग बन जाते' सुनाया करते थे। राह में आ रहे ग्राम-प्रांतरों में झोंपड़ियों में छत तक पहुँच रही घिया की बेल अवश्य दिखाते और कहते, कहीं लौकियाँ लटक रही हैं।

अपने ननिहाल मध्य प्रदेश के गाडरवारा और मंडेसुर की यात्रा वार्षिक यात्रा होती थी। यह भी नियमित थी। ग्रीष्मावकाश में अम्मा के संग रेल में बैठकर जाने का सुख प्राप्त होता था।

शिक्षा की कमी भारत के इन भागों में तब भी थी, दुर्भाग्य से आज भी है। इसीलिए हमारे गाँव ईश्वर के बनाए होने के बावजूद स्वर्ग नहीं बन सके।

जीवन के इस मोड़ पर, जब आज वे यात्राएँ विगत इतिहास की यात्राएँ रह गई हैं, तब नाना, मामा, दादा, दादी, बाबूजी और अम्मा भी इतिहास में चले गए हैं। मैं दिल्ली जैसी नगरी में हूँ, जहाँ भारत में शिक्षा का प्रसार सर्वाधिक है, यह शहर स्वर्ग सा है या नहीं, नहीं कह सकती, हाँ उन देशों में जाते रहने का अवसर मिला है, जहाँ शिक्षा की कमी नहीं है और स्वच्छता तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से वे स्वर्ग से ही लगते हैं।

मेरी विदेश यात्राएँ तीस वर्ष पूर्व की गई नेपाल यात्रा से आरंभ हुई थीं, मॉरिशस और थाईलैंड पड़ोसी देशों के बाद सुअवसर मिला था। १९९९ में यूरोप के एक बड़े भाग को देखने का अवसर मिला। इंग्लैंड, फ्रांस, बेल्जियम, हॉलैंड और जर्मनी के अतिरिक्त सुंदर स्विट्जरलैंड भी देखा था। स्वार्गिक अनुभव ही था।

जिस बार बल्गारिया यानी पूर्वी यूरोप से आमंत्रण था, उस यात्रा के कतिपय कुछ प्रसंगों और व्यक्तियों के विषय में मैं बताना चाहती हूँ।

सुपरिचित कवयित्री व चित्रकार। देश-विदेश में कई प्रदर्शनियों में उनके द्वारा बनाए गए चित्र प्रदर्शित। लाइंस क्लब, रोटरी क्लब, कबीर सेवा सम्मान, कादंबिनी क्लब गाडवारा, कला भारती व साहित्य भारती सम्मान से सम्मानित। संप्रति दौलतराम कॉलेज दिल्ली विश्वविद्यालय में प्राध्यापिका और कार्य प्रिंसिपल पद से सेवानिवृत्त।

सर्वप्रथम सोफिया विश्वविद्यालय से संबद्ध श्रीमती योरदांका का परिचय प्राप्त करें। तीन माह पूर्व ही उनसे परिचय हुआ था। वे एक सरल स्वभाव वाली मृदुल महिला हैं। उन्हें देखकर तथा उनके व्यवहार से कहीं झलकता ही नहीं था कि वे बल्गारिया के ईस्ट-वेस्ट इंडोलोजिकल फाउंडेशन की अध्यक्षा हैं। वे जब भी कुछ बताती थीं—प्रथम पुरुष में नहीं बताती थीं, बल्गारिया जाकर उनके विस्तृत व्यक्तित्व की जानकारी और झलक देखी। उन्होंने १९८९ में भागवद्गीता का बल्गारियन में अनुवाद किया। उनके मार्गदर्शन में एक छात्र ने मास के 'उरु-भंग' का अनुवाद किया। एक छात्र ने 'सुनीता' का और उनके निर्देशन में निर्मल वर्मा, धर्मवीर भारती, हिमांशु जोशी आदि हिंदी के प्रख्यात लेखकों की कहानियों का रूपांतर न केवल बल्गारियन में हुआ है, अपितु पुस्तकाकार रूप में भी आया है।

श्रीमती योरदांका उर्दू और ब्रजभाषा का सम्यक् ज्ञान रखती हैं। संप्रति वे वृंदावन की 'हरित्रयी' साहित्य पर कार्य कर रही हैं, जिसके सिलसिले में उन्हें एक और हरि तो नहीं, पर हरीश मिल गए थे।

उनकी फाउंडेशन में उपाध्यक्ष मिलेना बोबेवा हैं, जो एक जर्मन विश्वविद्यालय से हिंदी में पी-एच.डी. हिंदी विद्वान् प्रो. हान के

निर्देशन में कर सकी हैं।

श्रीमती योरदांका के पति श्री बोरिस बायोनावा बल्गारिया के एक बड़े बैरिस्टर हैं तथा एक समुद्री द्वीप के डिप्लोमेटिक-कमिश्नर भी हैं। वे पहली बार भारत जब आए। उन्हें राजस्थान बहुत अच्छा लगा और वृंदावन से उन्हें प्रेम हो गया। वृंदावन शोध संस्थान और 'ब्रज अकादमी' के लिए वे कुछ भी करने को तत्पर हैं। वे हिंदी जानते नहीं हैं, परंतु भाव समझ सकते हैं।

आस्ट्रिया की राजधानी वियना में मुलाकात हुई श्रीमती स्टीफेनिया से। वे इटली की रहने वाली हैं और हिंदी पढ़ने के लिए वियना आईं। हिंदी तो सीखी हैं, साथ ही हिंदी भाषी श्री मनजीत को भी जीत लिया। हिंदी का अभ्यास करने के लिए उन्होंने ऐसा किया, ऐसा वे श्रीमती मनजीत के रूप में हँसते हुए बताती हैं। हिंदी में उनकी रुचि भारत में रुचि के कारण है। यद्यपि वे खुद रोम में रहने वाली हैं, परंतु उन्हें दिलचस्पी दिल्ली में है। दिल्ली का थ्री व्हीलर उन्हें एक अजूबा लगता है।

वियना विश्वविद्यालय में हिंदी के अध्यक्ष हैं डॉ. जोशी, जो रिटायर होनेवाले हैं। उनके शिष्यों में अधिकतर जर्मन और हंगेरियन हैं।

सोफिया एयरपोर्ट पर विमान से उतरने के बाद मिलीं दो अनाम बल्गारियन युवतियाँ सदा याद रहेंगी। मेरे घुटने में दर्द था, दर्द का अवसाद चेहरे से झलक रहा था। विमान से पोर्ट भवन तक की दूरी तय करने वाली बस में बैठने का स्थान नहीं था, तभी उन युवतियों ने अपनी सीटें छोड़कर मुझे बिठाया और कहा, "नमस्ते, स्वागत है, बैठिए भारत से आई हैं।" उनका अभिवादन और भाषा और उनके भारत-प्रेम का परिचायक थे। वे भारतीय साड़ी को भी प्रशंसात्मक दृष्टि से निहार रही थीं।

ग्रीस की राजधानी एथेंस के मशहूर बाजार प्लाका, जो वहाँ का जनपथ है, का भी एक किस्सा है। मैं साड़ी, बिंदी, चूड़ी पहने घूम रही थी, अचानक एक व्यक्ति आया, बोला—इंडियन, मैं तुमको प्यार करती हूँ।' मुझे उसके 'करती हूँ' पर हँसी आ गई। उसके चेहरे के प्रश्नचिह्न का मैंने अंग्रेजी में उत्तर दिया और वह गोविंदा हो गया।

एथेंस में ही एक लंबा सा घुँघराले बालों वाला एक युवक हरीशजी के समीप आया और बोला, "अमिताभ बच्चन?" हरीशजी ने सिर हिला दिया, वह गाते हुए कहने लगा, "अमर अकबर एंथनी'।"

ग्रीस से लौटते हुए बल्गारिया की सीमा पर हमें किसी संकट का सामना करना पड़ा। वहाँ का एक अधिकारी, जिसका नाम अब याद नहीं, हिंदी फिल्मों का फैन था। बॉलीवुड उसके सिर चढ़कर बोल रहा था। वह हमें हिंदुस्तानी होने की वजह से ही मदद करना चाह रहा था। देखने में वह भारत का ही लग रहा था। एक सामान्य भारतीय जैसी कला फिल्मों के हीरो होते हैं। उसने कहा था, 'मेरी मरजी हिंदी फिल्मों में काम करने की है। मैं एक्टर बनना चाहता हूँ और मिथुन की फिल्म में काम करना चाहता हूँ।'

वहीं डयूटी फ्री शॉप में मरिया थी। वह भी हिंदी फिल्में देखती है। उसे हर हिंदुस्तानी में किसी-न-किसी बंबई या हीरो-हीरोइन की छवि नजर आती है। उसे तथा उसकी सहकर्मियों को आस्था ऐसी हीरोइन ही लगी थी, जिस कारण वे सब हम पर अति कृपा कर रही थीं।

एक व्यक्ति का मैं और जिक्र करूँगी। वे हैं एरिक हावर्ड, मेरे ननदोई, बचपन से अमेरिका में रहे, उन्हें हिंदी का वह रूप ज्यादा पसंद आता है जो बहुत प्रत्यक्ष और अनौपचारिक हो। वे अपने अंदाज में धर्मेंद्र के फिल्मी डायलॉग बड़े भाव से बोलते हैं। उनके प्रिय वाक्य कुछ ऐसे होते हैं—

"मेरी नस नस से आशीर्वाद हैं।"

"तेरी ऐसी की तैसी" और

"जा, आँखों से दूर हो जा" इत्यादि

पांडव जुए में सबकुछ हार गए, को वे यही समझते थे कि उनके सिर में जटाएँ रखने से जुएँ पड़ गई थीं।

अमेरिका में अंतरराष्ट्रीय हिंदी समिति ने हम लोगों की एक रचना-गोष्ठी आयोजित की, हमें लगता था कि केवल हम ही कुछ ठीक-ठीक हिंदी बोलते होंगे, परंतु वहाँ देखकर आश्चर्य हुआ कि श्रोता हिंदी खूब समझ रहे थे तथा अमेरिका के जिन छह हिंदी कवियों ने इसमें भाग लिया, उनमें से तीन की हिंदी जयशंकर प्रसाद की याद दिला रही थी।

हिंदी के मानवीय और संकेतित अर्थ का एक उदाहरण देकर मैं अपना वक्तव्य समाप्त करूँगी।

बल्गारिया में हिंदी की एक प्रोफेसर ने अपनी एक सुंदर छात्रा का परिचय हिंदी में करते हुए बताया कि "ये हमारे विश्वविद्यालय की एक नमूना है।"

मैं सुनकर अचकचाई, आश्चर्य से मैंने कहा, "नमूना? मैं समझी नहीं।"

उस पर प्रोफेसर ने पूर्ण गंभीरता से उत्तर दिया, "ये बिल्कुल नमूना है—नमूना यानी मॉडल, ये हमारी श्रेष्ठ मॉडल हैं।"

शिक्षित होने के लिए हमें शब्द पर आश्रित होना चाहिए या उससे निकल रहे अर्थ से, भाव से, संकेत से या किससे—यह हमें बाहर जाकर ही पता चलता है। वहीं जाकर ज्ञात होता है कि हिंदी अपने पूर्ण शब्द-वैभव और अर्थ-संपदा के साथ वहाँ है।

६५ साक्षरा अपार्टमेंटस
ए-३ पश्चिम विहार
नई दिल्ली-११००६३
दूरभाष : ९८९९५६००९५

उड़ जाता है पक्षी

मूल : **अली अब्दुलरेजाई**

अनुवाद : **बालकृष्ण काबरा 'एतेश'**

अली अब्दुलरेजाई फारसी के कवि, लेखक, साहित्यिक सिद्धांतकार और राजनीतिक विश्लेषक हैं। उत्तरी ईरान में १९६९ में उनका जन्म हुआ। खाजे नासिर यूनिवर्सिटी, तेहरान से मैकेनिकल इंजीनियरिंग में स्नातक किया। समकालीन फारसी साहित्य व कविता के सबसे प्रभावी कवि के रूप में लोकप्रिय हैं। ७० से अधिक पुस्तकें प्रकाशित। अंग्रेजी में भी पर्याप्त लेखन। यहाँ उनकी कुछ चर्चित कविताओं का हिंदी रूपांतर प्रस्तुत कर रहे हैं।

काली शिरा

मार दी जाती है तुम्हें वहाँ गोली
तुम्हारी लाल कोशिकाएँ
होती हैं प्रस्फुटित'''फ्रीडम स्क्वेयर में
तुम मर जाते हो
बर्फ अपनी नर्म, मुलायम श्वेत कोशिकाओं से
ढक लेती है तुम्हें
छिपा लेती है तुम्हें
नहीं चलती है दुष्ट हवा
कि मिले तुम्हें फौलादी सुरक्षा
कि तुम नहीं थे उनमें से एक

तुम नहीं हो उनमें से एक
तुम्हारी धमनियाँ हैं एक शहर की धमनियाँ
तुम्हारा हृदय अभी भी
धड़कता है रिवॉल्यूशन स्क्वेयर में
भेजता जो
एक-एक कर सभी टैक्सियों को
उस सड़क पर
जो बढ़ती है काली शिरा की तरह
मेरे हृदय की ओर
फ्रीडम स्क्वेयर में

हम दोनों लड़ते हैं एक ही सड़क में
तुम्हें मार दी जाती है गोली वहाँ
मरता हूँ मैं यहाँ

दिन दिनों

उन्हें गर्व है
लाठियों और राइफलों पर
जिनके बारे में वे जानते नहीं
वे पीटते हैं लोगों को
जिन्हें वे जानते नहीं
वे मार देते हैं लोगों को गोली
आखिर वे जानते ही क्या हैं?
इन दिनों
हमारे गले में उन्होंने बाँधी है गाँठ
जो फट जाएगी बम की तरह

फेंकता हूँ एक पत्थर

फेंकता हूँ एक पत्थर
टेम्स नदी में
उड़ जाता है पक्षी
जो पी रहा था वहाँ पानी
लेता वह शरण
संसद् भवन की मीनार पर
किंतु तेहरान में
संसद् भवन के पास सड़क में
चलाई गई थी गोली तुम पर
और भाग रहे थे तुम वहाँ से

घर

मेरा दग्ध हृदय
पिघल रहा है
जलती मोमबत्ती की तरह,
इस घटना को उकसाते
तुम भी चला रहे हो नए-नए तीर,
मत कहना कि हम नहीं कर सकते कुछ
नहीं है हमारे पास कोई रास्ता
हम हैं कवि
और पा सकते हैं रास्ता किसी पन्ने पर,
एक सशक्त कविता की
किसी पंक्ति के अंत में
मैं अलग से
छोड़ दूँगा एक गली
और किसे पता
कि इस गली के अंत में
शायद किसी दिन
हम बना सकेंगे
अपना घर

मृत्यु

देखा है मैंने
देखा है बार-बार मृत्यु
एक स्वप्न-पीड़ित व्यक्ति पर मँडराते
लेकिन नहीं जानता मैं
कि आगे इस सड़क में
कोई हाथ दबा लेगा
मेरी गरदन को पीछे से

कई बार जब खोलता हूँ मैं अपनी आँखें
देखता हूँ अपने हाथों में
डैंडेलियन का फूल,
बावजूद इन सबके मुझे नहीं पता
क्यों चाहता मैं उस दिन को
जिसके आने से खुश नहीं मैं

गर्लफ्रेंड के साथ

सड़क पर हाथ पकड़कर चलने के लिए
वे आए थे बाहर पिछले साल
और वे माँगते वापस अपने वोट
तभी उसके गर्ल फ्रेंड को
मार दी गई गोली,
अब वह कर रहा है मार्च
दूसरी गर्ल फ्रेंड के साथ
और लगाते हुए नारा
वह सोच रहा है
कि अगले मार्च पर वह निकलेगा
किसके साथ

मरता हूँ हर कविता में

मृत्यु है जन्म के समान
एक कवि जितना अधिक लिखता है
चाहता है दूसरों से अधिक मौतें

कविता का जन्म

दिल पर एक जख्म
तब्दील होता ज्ञान में
होता जन्म कविता का

ईश्वर का अंतिम श्लोक

उबाऊ हैं प्रार्थनाएँ
पढ़िए कविताएँ

कुछ सेकिंड पहले

अभी कुछ सेकिंड पहले
जब लोग लगा रहे थे नारे
कर रहे थे आपस में बातें

सुपरिचित लेखक एवं कवि और अनुवादक। अद्यतन कविता-संग्रह 'छिपेगा कुछ नहीं यहाँ'। विश्व काव्यों के अनुवादों का संग्रह 'स्वतंत्रता जैसे शब्द' प्रकाशित एवं दूसरा संग्रह 'जब उतरेगी साँझ शांतिमय' प्रकाशनाधीन।

उनके वाक्य थे
वर्तमान काल की क्रियाओं में,
अभी
वह कर रहा है बात
अपने दोस्त के बारे में
जिसे कुछ सेकिंड पहले ही
मार दी गई गोली
उसकी सभी क्रियाएँ हैं
भूतकाल में

११, सूर्या अपार्टमेंट, रिंग रोड, राणाप्रताप नगर
नागपुर-४४००२२ (महाराष्ट्र)
दूरभाष : ९४२२८११६७१

सक्षम

लघुकथा

• शैफालिका सिन्हा

'बधाई हो दीपा! सुना है तुम्हारी बहन गाँव में चुनाव जीत गई है, तुम्हारी तरह तेज और स्मार्ट लगती है।' दीपा को सामने देख बबीता अपनी खुशी जाहिर किए बिना नहीं रह सकी।

'थैंक्यू आंटीजी, पर मेरी बहन तेज-तर्रार नहीं है, वह तो मेरे जीजाजी हैं, बहुत चलता पुर्जा।' गर्व से दीपा ने कहा।

हँसते-मुसकराते दोनों अपने-अपने काम पर चल दीं। दीपा की पास में ही एक दुकान है और बबीता एक बैंक में काम करती है। उसके पति भी बैंक में हैं, लेकिन अभी पोस्टिंग दूसरी जगह है।

बैंक जाते हुए बबीता यही सोच रही है कि सरकार महिला को आरक्षण देकर उसकी भागीदारी बढ़ाती है, पर उसके काम का संपादन, निर्णय तो पति ही करता है। यह बात दीपा की बहन के साथ ही नहीं है। हरेक जगह ऐसा देखा जा सकता है, चाहे घर हो, सब्जी मंडी हो या दुकान हो। वह अपने बारे में ही सोचने लगती है कि उसका काम तो सिर्फ पैसा कमाना है, पर उसे खर्च कैसे करना है, कौन सा म्युचुअल फंड लेना है, कैसे इनकम टैक्स रिटर्न भरना है, ये सब काम तो उसके पति ही करते हैं।

वास्तव में इसमें दोष पुरुष का नहीं, हमारे परिवार और समाज के अंदर के कानून का है, जो शताब्दी से भी अधिक समय से ऐसा जड़ जमाए हुए है कि एक शिक्षित, आत्मनिर्भर महिला भी निर्णय लेने में संकोच करती है। एक महिला ही अपने अधिकार का प्रयोग करना नहीं जानती। वह खुद पति से बार-बार कुछ पूछती है तो उसका छोटा बेटा कहता है,

'मम्मी, तुम बड़ी कब होगी?'

उसकी बात से तो चेहरे पर मुसकान आ जाती है, लेकिन जब ध्यान से बबीता सोचती है तो लगता है, महिला को आरक्षण से अधिक जरूरी है, लड़की को जन्म से ही बराबर का वैसा अधिकार मिले कि वह उसके दिल-दिमाग तक छा जाए और वह निर्णय लेने में सक्षम बने।

फ्लैट नं ५ सी, फेज ३
शुभाश्री अपार्टमेंट
बरियातु, राँची -८३४००९ (झारखंड)
दूरभाष : ९९५५३४६५६६

पाँच प्रण और नए भारत का निर्माण

• बिपिन कुमार ठाकुर

पाँच प्रण कालांतर में देश को मजबूत, विकसित और सुदृढ़ बनाने की दिशा में देखा गया एक अनोखा सपना है, जिसका ध्येय समस्त देशवासियों को देश के विकास में अपना योगदान देने हेतु उत्प्रेरित करना है। इसका मुख्य उद्देश्य राष्ट्र-विकास हेतु एक शांतिपूर्ण, सतत आंदोलन शुरू करना है। आजादी के अमृत काल में देश को आत्मनिर्भर बनाने की कड़ी में पाँच प्रण एक आवश्यक एवं सही कदम है।

पूर्व कुल सचिव, राष्ट्रीय संग्रहालय संस्थान, जनपथ, नई दिल्ली। संप्रति एशोसिएट प्रोफेसर, राजनीति विज्ञान विभाग, श्री गुरु तेग बहादुर खालसा महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

भारत के ७६वें स्वतंत्रता दिवस (१५ अगस्त, २०२२) के अवसर पर लाल किले की प्राचीर से राष्ट्र को संबोधित करते हुए प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने अगले २५ साल की यात्रा को देश के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण बताते हुए 'पाँच प्रण' का आह्वान किया। उनके अनुसार, 'आजादी के अमृत काल में यह एक ऐतिहासिक दिवस है और यह पुण्य पड़ाव—एक नई राह, एक नए संकल्प और नए सामर्थ्य के साथ कदम बढ़ाने का शुभ अवसर है।' पाँच प्रण आने वाले ढाई दशकों के लिए लक्ष्यों की एक रूपरेखा है जो कि २०४७ तक तथा कालांतर में देश की गति को ऊर्जावान करेगी तथा आजादी के सौ वर्ष पूरे होने पर भारत को पूर्णत: विकसित कर इसका नव निर्माण करेगी। पाँच प्रण कालांतर में देश को मजबूत, विकसित और सुदृढ़ बनाने की दिशा में देखा गया एक अनोखा सपना है, जिसका ध्येय समस्त देशवासियों को देश के विकास में अपना योगदान देने हेतु उत्प्रेरित करना है। इसका मुख्य उद्देश्य राष्ट्र-विकास हेतु एक सतत शांतिपूर्ण आंदोलन शुरू करना है। आजादी के अमृतकाल में देश को आत्मनिर्भर बनाने की कड़ी में पाँच प्रण एक आवश्यक एवं सही कदम है। अगले अनुच्छेदों में पाँच प्रण का विस्तृत विश्लेषण किया गया है—

१. पहला प्रण : विकसित भारत का लक्ष्य

प्रधानमंत्री श्री मोदी के अनुसार—'अब देश बड़े संकल्प लेकर चलेगा, और वह बड़ा संकल्प है विकसित भारत और उससे कुछ भी कम नहीं होना चाहिए।' यह सच है कि पिछले ७५ साल में भारत में काफी प्रगति हुई है, परंतु अभी भी हम विकसित देशों की कतार में शामिल नहीं हो पाए हैं। भारत की विकास-यात्रा 'सबका साथ सबका विकास' के संकल्प के साथ तीव्र गति से आरंभ हो चुकी है तथा २०४७ तक भारत को विकसित राष्ट्रों की सूची में अवश्य ही अपना स्थान हासिल करना चाहिए।

संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (UNDP) हर साल मानव विकास सूचकांक (HDI) प्रकाशित करता है, जिसका उपयोग देशों को मानव विकास के चार स्तरों में क्रमबद्ध करने के लिए किया जाता है। यह जीवन प्रत्याशा, शिक्षा (शिक्षा प्रणाली में प्रवेश करने पर स्कूली शिक्षा के पूरे वर्ष और स्कूली शिक्षा के अपेक्षित वर्ष), और प्रति व्यक्ति सकल राष्ट्रीय आय संकेतक का एक सांख्यिकीय समग्र सूचकांक है। किसी भी देश की सामाजिक और आर्थिक आयामों में समग्र उपलब्धि को मापने के लिए मानव विकास सूचकांक का प्रयोग किया जाता है, क्योंकि यह सभी प्रमुख सामाजिक और आर्थिक संकेतकों को जोड़ता है जो आर्थिक विकास के लिए जिम्मेदार हैं।

मानव विकास सूचकांक (HDI) २०२१ में भारत १९१ देशों में से १२३वें स्थान पर है (पिछले वर्ष से दो स्थान की गिरावट दर्ज की गई)। यह तीन दशकों में पहली बार लगातार दो वर्षों में अपने स्थान में गिरावट को दरशाता है। ज्ञातव्य है कि वर्ष २०२० में, भारत ०.६४५ के एच.डी. आई मूल्य के साथ १३१वें स्थान पर था जबकि वर्ष २०२१ में यह ०.६३३ (१३२वाँ स्थान) तथा कोविड-१९ महामारी से पहले, २०१८ में यह ०.६४५ (१३०वाँ स्थान) था। २०२० में १८९ देशों में भारत का स्थान १३१वाँ था। मानव विकास सूचकांक २०२२ के अनुसार स्विट्जरलैंड, नॉर्वे एवं आइसलैंड का स्थान क्रमश: प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय रहा, जबकि हमारे पड़ोसियों का स्थान इस प्रकार रहा—श्रीलंका (७३); चीन (७९); भूटान (१२७); बांग्लादेश (१२९); पाकिस्तान (१६१); मालदीव (९०) आदि।

अत: यह कहा जा सकता है कि यदि भारत को विकसित राष्ट्रों की

सूची में २०४७ तक अपने आपको शामिल करना है तो उसे सभी मापदंडों पर खरा उतरना होगा। हालाँकि यह ज्ञातव्य होना चाहिए कि वर्तमान सरकार के नेतृत्व में भारत दुनिया की पाँचवीं सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था हो गई है। इसने हाल ही में ब्रिटेन को पीछे छोड़ा है। यह उल्लेखनीय है कि भारतीय स्वाधीनता के अमृत काल में भारत ने यह उपलब्धि हासिल की है तथा जल्द ही यह (२०२९ तक) दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थ व्यवस्था बनने वाली है।

भारतीय स्टेट बैंक की एक रिपोर्ट के अनुसार विश्व सकल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में भारत का हिस्सा साल २०१४ में २.६ प्रतिशत था, जो कि वर्तमान में ३.५ प्रतिशत है तथा २०२७ तक यह बढ़कर जर्मनी के वर्तमान हिस्सेदारी (४.१ प्रतिशत) के बराबर हो जाएगा। साल २०२९ तक भारत दुनिया की तीसरी सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था बन जाएगी। इस प्रकार यदि सही आवश्यक कदम उठाए जाएँ तो भारत निश्चित ही साल २०४७ से काफी पहले विकसित राष्ट्रों की अग्रिम पंक्ति में अपने आपको स्थापित कर सकेगा।

२. दूसरा प्रण : गुलामी के हर अंश से मुक्ति

स्वाधीन भारत ने १९५० में अपना संविधान प्राप्त किया, जो कि एक 'संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न, लोकतांत्रिक गणराज्य' की अनंत यात्रा की शुरुआत थी। संविधान में 'सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता; प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त करने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करनेवाली बंधुता' बढ़ानेवाली व्यवस्था की गई है। इसके अतिरिक्त संविधान में 'मौलिक अधिकार, राज्य के नीति निर्देशक तत्त्व; कार्यपालिका, व्यवस्थापिका, न्यायपालिका, पंचायती राज संस्थाएँ एवं नगरपालिकाएँ, अल्पसंख्यकों के संरक्षण एवं कुछ वर्गों के संबंध में विशेष उपबंधों' की भी व्यवस्था की गई है।

भारत ने पिछले ७५ सालों में पराधीनता के निशानों को मिटाते हुए अपना मार्ग बखूबी, प्रशस्त किया है—चाहे वह मानव विकास सूचकांक के निर्धारित मापक हों अथवा प्रजातांत्रिक मूल्यों का संरक्षण या अंतरराष्ट्रीय मंच पर मानवीय संवेदनाओं का प्रदर्शन ही क्यों न हों। प्रधानमंत्री श्री मोदी ने कहा, 'जब सपने बड़े होते हैं··जब संकल्प बड़े होते हैं तो पुरुषार्थ भी बहुत बड़ा होता है। शक्ति भी बहुत बड़ी मात्रा में जुट जाती है।' उनके अनुसार भारत को गुलामी के हर अंश से मुक्त होना होगा; चाहे वह कितना ही सूक्ष्म क्यों न हो। हमें नए भारत के निर्माण के लिए अपनी सोच एवं संकल्प को काफी दृढ़ करना होगा। हमें अपनी मानसिकता परिवर्तित करनी होगी। अपने दिन-प्रति-दिन की दिनचर्या में अपनी नई सोच को लागू करना होगा। निश्चय ही उनके द्वारा सुझाए गए 'आत्मनिर्भर भारत का संकल्प' इस दिशा में मील का पत्थर साबित होगा। सन् २०२० में अपनाई गई नई शिक्षा नीति हमारी स्वाधीन सोच को दृढ़ करने की दिशा में उठाया गया एक सराहनीय कदम है। यदि इसे ठीक से लागू किया गया तो भारत के शैक्षिक विकास को यह नवीन एवं असीमित ऊँचाइयों पर ले जाने की संभावना रखता है। एक ऊर्जावान नए भारत के निर्माण हेतु यह अनिवार्य है कि हम पराधीन सोच के पिछलग्गू न बनें।

३. तीसरा प्रण : अपनी विरासत पर गर्व करना

प्रधानमंत्री द्वारा उद्‌बोधित तीसरा प्रण देशवासियों को 'अपनी विरासत पर गर्व करना, उनसे प्रेरणा लेते हुए उन्हें संरक्षित करना है।' यह सर्वविदित है कि भारत एक प्राचीन सभ्यता है तथा इसकी समृद्ध विरासत और संस्कृति, समस्त नागरिकों के लिए एक सतत और बृहत् प्रेरणास्रोत है। यह देश के सतत आध्यात्मिक, धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक विकास-यात्रा में अपना दृढ़ योगदान करती है।

हमारी सांस्कृतिक विरासत एवं धरोहर भौतिक कलाकृतियों और समाज की अमूर्त विशेषताओं का समावेश है, जोकि एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी में सदैव हस्तांतरित होती है। इसका संरक्षण भारत के भविष्य निर्माण हेतु अति आवश्यक है।

मुख्य रूप से हमारी धरोहरों की तीन श्रेणियाँ हैं—

(क) सांस्कृतिक धरोहर : इनमें भौतिक या कलाकृतियों जैसे मूर्त सांस्कृतिक धरोहर शामिल हैं। इनके अंतर्गत चल और अचल दोनों प्रकार के धरोहरों को शामिल किया जाता है। अचल धरोहरों में ऐतिहासिक इमारतें, प्राचीन स्थान और स्मारक शामिल हैं।

(ख) प्राकृतिक धरोहर : इनमें वनस्पतियों एवं जीवों सहित ग्रामीण इलाके और प्राकृतिक पर्यावरण शामिल है। प्राकृतिक धरोहरों में सांस्कृतिक भूदृश्य भी शामिल हो सकते हैं।

(ग) अमूर्त धरोहर : मूलत: इनमें सामाजिक परंपराएँ, रीति-रिवाज एवं प्रथाएँ, सौंदर्यात्मक एवं आध्यात्मिक आस्थाएँ, कलात्मक अभिव्यक्ति, भाषा और मानव गतिविधि के अन्य पहलू शामिल हैं।

यहाँ यह स्पष्ट करना जरूरी है कि अमूर्त सांस्कृतिक धरोहरों को संरक्षित करना भौतिक धरोहरों (मूर्त) के संरक्षण के मुकावले काफी जटिल एवं कठिन है। भारत में ४० विश्व धरोहर स्थल हैं, जिनमें ३२ सांस्कृतिक स्थल, ७ प्राकृतिक स्थल और एक मिश्रित स्थल शामिल है। इसके अलावा भारतीय पुरातत्त्व सर्वेक्षण (ASI) की देखरेख में शामिल ३६९१ ऐतिहासिक स्थलों को 'राष्ट्रीय महत्त्व के स्मारक' के रूप में घोषित किया गया है। भारत के संविधान के मूल कर्तव्य (अनुच्छेद ५१A), राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत (अनुच्छेद ४९) में राष्ट्रीय धरोहरों एवं सांस्कृतिक विरासतों के प्रति आदर एवं उनके संरक्षण हेतु निर्देश दिए गए हैं। नए भारत के निर्माण हेतु यह आवश्यक है कि विरासत एवं धरोहर-संरक्षण एक जन आंदोलन बन सके, जिसमें प्रत्येक देशवासी का उल्लेखनीय योगदान हो, क्योंकि हमारी सांस्कृतिक विरासत ही एक पीढ़ी से दूसरे पीढ़ी को तथा देश को दूसरे देशों से जोड़ती है। भारतीय दर्शन एवं सांस्कृतिक परंपराएँ जैसे, 'वसुधैव कुटुम्बकम्; एकम् सत् विप्रा बहुदा वदन्ति; एकोऽम् बहुस्याम' आदि ऐसे मूल-मंत्र हैं, जिनके माध्यम से भारत निश्चित ही विश्व-मंच पर अपनी नई भूमिका अदा कर सकता है। यदि वर्तमान से लेकर आनेवाले पच्चीस सालों में इन उद्‌देश्यों पर प्रयास किए जाएँ तो निश्चय ही हमें सफलता प्राप्त होगी।

४. चौथा प्रण : एकता और एकजुटता

प्रधानमंत्री द्वारा उद्‌बोधित चौथा प्रण 'एकता और एकजुटता' को बढ़ाना है। इसका मतलब यह नहीं है कि भारत में इसका अभाव है, पर

इस बात से भी इनकार नहीं किया जा सकता है कि विगत कुछ वर्षों में कई विघटनकारी प्रवृतियाँ भारत में सक्रिय हुई हैं। दुनिया के प्रमुख देशों की शासन व्यवस्था के अवलोकन के पश्चात् यह स्पष्ट होता है कि भारत में लोकतंत्र प्रगाढ़ रूप में जगमगा रहा है तथा जन-आकांक्षाओं को सुदृढ़ करते हुए यह विश्वपटल पर अपनी मजबूती को सुदृढ़ कर रहा है। स्वाधीनता के उपरांत देश में निश्चित अंतरालों पर अनवरत निष्पक्ष आम चुनाव होना तथा उनमें निर्वाचकों का सक्रिय भागीदारी एवं योगदान देना निश्चिय ही यह इंगित करता है कि भारत में लोकतंत्र की संस्थाओं एवं संरचनाओं में लोगों की अटूट आस्था है।

यह सच है कि भारत में एक विविध संस्कृति का समावेश है, क्योंकि यह एक ऐसा देश है, जहाँ विभिन्न धर्म के अनुयायी, विभिन्न भाषाएँ बोलने वाले तथा विभिन्न रीति-रिवाज माननेवाले लोग रहते हैं। साथ ही सभी लोग एक ही संविधान; एक ही राष्ट्रीय झंडा तथा एक ही राष्ट्रीय चिह्न को मानते हैं। फिर भी ऐसे विविधता वाले देश को एकता के सूत्र में मजबूती से बाँधना एक समस्या है। रजनी कोठारी के अनुसार, ''राजनीतिक विकास की बुनियादी समस्या एकीकरण की है। अर्थात् नए राजनीतिक केंद्र-बिंदु की स्थापना और दृढ़ीकरण, उनका बहुमुखी प्रस्तार, विभिन्न संस्थाओं का पल्लवन, विविधता को एक सूत्र में संग्रहण कर एक राष्ट्र का निर्माण अर्थात् एकीकरण की क्षमता का विकास यही समस्या हमारे राष्ट्र-निर्माताओं के सामने सबसे बड़ी समस्या रही है।"

हालाँकि हमने समय-समय पर राष्ट्रीय एकता और एकजुटता का परिचय भी दिया है—उदाहरणस्वरूप, स्वाधीनता संग्राम का संघर्ष; १९६२ के चीनी आक्रमण के समय; १९६५, १९७१ और १९९९ में पाकिस्तान के साथ युद्ध और संघर्ष के समय आदि। फिर भी वर्तमान समय में राष्ट्रीय एकता और एकजुटता बढ़ाने की आवश्यकता है तथा हमारे पास एक स्वर्णिम अवसर है कि आनेवाले पच्चीस वर्षों में हम इसे चट्टानी शक्ति प्रदान करें।

प्रो. एम.एन. श्रीनिवास लिखते हैं, 'विभाजनकारी प्रवृत्तियाँ आज भी अस्तित्व में हैं और भविष्य में कई वर्षों तक बनी रहेंगी। देश की अधिकांश जनता के लिए भारत एक नई कल्पना है और इस कल्पना के सत्य रूप होने में कुछ समय लगेगा।' उनके अनुसार, 'भारत की एकता के मार्ग में प्रमुख बाधाएँ अनेक हैं—जाति, सांप्रदायिकता, अल्पसंख्यकों का सवाल, छोटे-छोटे राज्यों की माँग, प्रादेशिकता, अत्यधिक आर्थिक विषमता, भाषागत विभिन्नता, राजनीतिक अवसरवादिता, हिंसात्मक गतिविधियाँ, सामाजिक विभेद, भ्रष्टाचार आदि।' यदि हमें नए भारत का निर्माण करना है तो निश्चित ही मूल समस्याओं का निदान ढूँढ़ना होगा तथा प्रत्येक नागरिक को अपना सर्वश्रेष्ठ योगदान देना होगा, क्योंकि राष्ट्र-निर्माण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसमें सभी निवासियों का योगदान अनिवार्य है। हमें 'अनेकता में एकता' को मानते हुए अपने आगामी पच्चीस वर्ष राष्ट्र-निर्माण हेतु सुपुर्द करना होगा। साथ ही हमें यह भी सुदृढ़ करना होगा कि समाज के संसाधनों में सभी वर्गों का प्रतिनिधित्व हो; सामाजिक विकास में सभी घटकों का समावेश हो; आर्थिक विषमताएँ न्यूनतम हो; लोकतंत्र सशक्त हो; सांस्कृतिक तथा भाषायी आदान-प्रदान हो तथा तटस्थ एवं स्वस्थ राजनीतिक दलों का निर्माण हो, ताकि वे सही ढंग से राजनीतिक व्यवस्था को संचालित कर पाएँ। साथ ही जनमानस का विश्वास जनप्रतिनिधियों में बढ़ना चाहिए, ताकि राजनीतिक वातावरण देशहित के मुद्दों पर केंद्रित हो ताकि नवीन भारत का नव-निर्माण सुनिश्चित हो।

५. पाँचवाँ प्रण : नागरिकों में कर्तव्य की भावना का होना

पाँचवें प्रण के रूप में प्रधानमंत्री ने 'नागरिकों में कर्तव्य की भावना' के होने पर ध्यानाकर्षण करवाया। यह गौरतलब है कि १९५० में लागू किए गए भारत के संविधान में मूल कर्तव्यों का उल्लेख नहीं किया गया था; सन् १९७६ में संविधान संशोधन के उपरांत इसे शामिल कर लिया गया। प्रारंभ में इनकी संख्या दस थी, जो कि २००२ के बाद ग्यारह हो गई है। संविधान के अनुच्छेद ५१ क में निहित ग्यारह कर्तव्य निम्न हैं—

(i) भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्रध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे।

(ii) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करनेवाले उच्च आदर्शों को हृदय में सँजोए रखे और उनका पालन करे।

(iii) भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे।

(iv) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे।

(v) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा, प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे, जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं।

(vi) हमारी समन्वित संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्त्व समझे और उसका परिरक्षण करे।

(vii) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और अन्य जीव भी हैं, रक्षा करे और उनका संवर्धन करे, तथा प्राणिमात्र के प्रति दया भाव रखे।

(viii) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे।

(ix) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे व हिंसा से दूर रहे।

(x) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों से सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे, जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नवीन उँचाइयों को छू सके।

(xi) माता-पिता या संरक्षक, छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य के लिए शिक्षा के अवसर प्रदान करे।

यहाँ यह उल्लेख करना उचित होगा कि दुनिया के कई देशों के संविधान में अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का अनुसरण भी अनिवार्य

है, जैसे—जापान, इटली और चीन आदि में। परंतु हमारे देश में अधिकारों पर ही ज्यादा जोर दिया जाता है। हमें यह समझना होगा कि हर अधिकार किसी-न-किसी कर्तव्य से ही जुड़ा हुआ है।

आजादी के ७५ वर्ष पूर्ण होने के उपरांत भी हमारा अपने कर्तव्यों के प्रति नजरिया उदासीन ही रहता है। अत: हमें अपने नजरिए को बदलने का समय आ गया है। आगामी पच्चीस साल हमें संविधान में उल्लिखित मूल कर्तव्यों के प्रति अपने आपको समर्पित करना चाहिए, ताकि नव भारत का निर्माण हो सके। हर नागरिक को इस पवित्र संकल्प में अपनी हिस्सेदारी सुदृढ़ करनी चाहिए, तभी हमारे सपनों का भारत बन पाएगा।

निष्कर्ष

हाल ही में भारत ने दुनिया के सबसे बड़े प्रजातंत्र के रूप में अपनी स्वाधीनता का ७५ वर्ष पूरा किया है और सन् २०४७ में यह एक शतक हो जाएगा। ७५ वर्ष की काल यात्रा में देश ने अनेक ऐतिहासिक उपलब्धियाँ हासिल की हैं तथा वर्तमान में यह दुनिया की सबसे मजबूत उभरती हुई अर्थव्यवस्थाओं में शामिल है। विश्व रंग-मंच पर यह विकासशील देशों का नेतृत्व कर रहा है तथा विकसित राष्ट्रों को भी समय-समय पर शांति स्थापित करने हेतु अपना मार्गदर्शन प्रदान कर रहा है। देखा जाए तो भारत एक नई आशा, उल्लास एव उम्मीद का संचार कर रहा है। आनेवाले पच्चीस वर्ष देश के लिए काफी निर्णायक साबित होनेवाले हैं, ताकि देश, विकसित राष्ट्रों की सूची में अपना स्थान स्थापित एवं सुदृढ़ कर सके। आजादी के अमृतकाल में प्रधानमंत्री द्वारा संकल्पित पाँच प्रण को यदि सही रूप से लागू किया जाए तो निश्चय ही हमारा भविष्य सुदृढ़ रूप से फलीभूत होगा, जो कि भारत का नव निर्माण करेगा। यह एक ऐसा संकल्प है, जो कि विश्व-मंच पर भारत को और अधिक मजबूती से प्रतिष्ठापित करेगा। साथ ही यह एक ऐसा स्वर्णिम अवसर है, जो कि हमारे प्रयासों द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। अत: बिना समय नष्ट किए हम प्रत्येक भारतवासी को अपने अभीष्ट प्राप्त करने हेतु पूरा एवं दृढ़ प्रयास करते हुए पाँच प्रण को चरितार्थ करना चाहिए।

डी.ए.-१९४, शीशमहल अपार्टमेंट,
शालीमार बाग, दिल्ली-११००८८
दूरभाष : ९८९९१७३१६७

गीली रेत सी

कविता

• राजीव कुमार 'त्रिगर्ति'

सुपरिचित रचनाकर। मूलतः कविता और व्यंग्य लेखन। अनेक पत्र-पत्रिकाओं में कविताएँ और व्यंग्य के साथ-साथ दो काव्य-संग्रह 'गूलर का फूल' और 'जमीन पर होने की खुशी' प्रकाशित। संप्रति छावनी परिषद् विद्यालय, योल कैंट, धर्मशाला में अध्यापन।

एक विश्वास ही तो है

कितने ही देवताओं के मंदिरों में गया
कितनी ही देवियों की
देहरी पर टेका माथा
जख भी मना लिए
मना लिए नाग भी

दरगाहों पर भी
माँग आया मन्नतें
गिरजाघरों में भी
पढ़ आया रटे-रटाए
कुछ देवताओं के स्तुति-श्लोक

झुकाया माथा तुलसी को
पीपलों-बरगदों को
मौजराते आमों से माँगा
फलीभूत होने का आशीर्वाद

टेका माथा पहाड़ों को
नदियों-निर्झरों को
सूरज को चाँद को
टिमटिमाते तारों को
गिड़गिड़ाया बादलों के आगे
तुम्हारे शीतल शब्दों के लिए
लहराती फसलों से माँगी
तुम्हारी गदराई सुरभि
खिलते फूलों से माँगी
तुम्हारी रँगीली मुस्कान

लगाई मैंने जिससे
थोड़ी-सी भी आस
उसने किया निराश
सभी बन गए सरकंडे
रक्तरंजित हुआ विश्वास

नहीं सुनी किसी देवी-देवता ने
नहीं काम आए पत्थर-नदियाँ-पहाड़
नहीं सुनी बादल-फूल-फसलों ने
अनसुना किया सूरज-चाँद-सितारों ने

सब तरफ से थक हारकर
एक विश्वास ही तो है
जो हुआ है और भी पक्का
प्रेम की कलम से
तुम्हारे दिल पर उकेरा जाता हुआ।

एक-दूसरे के नमक में

मैं लगातार कोशिश करता हूँ
भरसक कोशिश करता हूँ
अपने भीतर उठती तरंगों को
ले जाना चाहता हूँ
तुम्हारे चेहरे की सूखी रेत तक
धो देना चाहता हूँ
तुम्हारे गालों पर
आँसुओं के सूखे नमक को
उसे सँजो लेना चाहता हूँ
होना चाहता हूँ
उससे कुछ और खारा
पर कोई भी ज्वारभाटा
मेरी कोशिश को
नहीं देता आवश्यक गति

आओ, हम दोनों
किसी से उम्मीद न लगाएँ
अपने प्यार के दम पर
एक-दूसरे के नमक में
घुल-मिल जाएँ।

प्रेम की रेखा

मेरे हाथ पर
प्रेम की रेखा
सागर तट की
गीली रेत-सी

उभर आती है
एक मुस्कान में
विलीन हो जाती है
तरंगों की तान में।

गाँव-लंघू, डाकघर-गांधीग्राम,
तह.-बैजनाथ, जिला-
काँगड़ा-१७६१२५ (हि.प्र.)
दूरभाष : ९४१८१९३०२४

अप्राप्त की अधीर अभिलाषा

● अयोध्या प्रसाद

साहित्य जगत् में प्रवेश के बाद उन्होंने अपने नाम के बाद लगाने के लिए उपनाम की बहुत तलाश की, लेकिन कुछ रास नहीं आने पर बिना उपनाम के ही साहित्य साधना के क्षेत्र में उतर गए। वे बिना किसी पुरस्कार या सम्मान की लालसा से साहित्य साधना में लगे हुए थे या यों कह लें कि काव्य सृजन को ही उन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य बना लिया था और उसी के निमित्त वे निरंतर रचना सृजन के लिए प्रयत्नशील रहते थे। जब तक कोई रचना मन से निकलकर कागज पर उतरकर अपना स्वरूप ग्रहण नहीं कर लेती, वे उसी तरह बेचैन रहते, जैसे कोई रचनाकार संपादक से अपनी रचना की स्वीकृति मिलने तक बेचैन रहता है। उनके समकक्षी जब कभी अभिनंदित या सम्मानित होते तो उन्हें उनसे कोई ईर्ष्या नहीं होती। वे तो बस तटस्थ भाव से साहित्य साधना में लगे हुए थे!

लेकिन इनसान के जीवन में कई ऐसे मोड़ अचानक आ जाते हैं कि वह अपने को दोराहे पर खड़ा हुआ पाता है। उसे सुझाई नहीं देता कि किधर जाए। ऐसे में उसे किसी ऐसे मार्गदर्शक की नितांत आवश्यकता पड़ती है, जो उसे उचित राह पर चलने का सुझाव दे। उनके साथ भी कुछ ऐसा ही घटित हुआ।

साहित्य साधना करते-करते एक दशक का समय बीत गया। एक दोपहर वे साहित्य साधना में मगन थे, तभी डाक से दो लिफाफे प्राप्त हुए। उन्हें लगा, कहीं रचनाएँ संपादक के सखेद व्यक्तीकरण के साथ वापस प्राप्त तो नहीं हुई हैं, लेकिन ऐसा नहीं हुआ था। दो अलग-अलग संस्थाओं से उन्हें पत्र प्राप्त हुए थे। एक-एक कर दोनों लिफाफे खोले गए। पहला लिफाफा खुलते ही उनकी आँखों में जो चमक दिखाई दी, इसके पहले कभी नहीं देखी गई थी। उनके ही शहर की एक संस्था ने उन्हें साहित्य सृजन के लिए सम्मानित करने के लिए उनका चयन किया था। उन्होंने तुरंत दूसरा लिफाफा बड़ी जिज्ञासा से खोला। पढ़ते ही उनके चेहरे पर प्रसन्नता के भाव अचानक अदृश्य हो गए। इसमें भी सुदूर की एक संस्था ने उनके साहित्य सृजन के दृष्टिगत उन्हें सम्मानित करने की सूचना दी थी। दु:ख की पराकाष्ठा का विषय यह था कि दोनों सम्मान एक ही दिन प्रदान किए जाने वाले थे।

उनकी इस अकथ वेदना को समझने वाला कोई आसपास नहीं था। उन्होंने जब यह बात पत्नी को बताई तो उसने सीधे सपाट शब्दों में कहा—दूर जाने में समय और किराया भाड़ा लगेगा, इसलिए चुपचाप अपने शहर का सम्मान ले लो। उन्हें इससे ज्यादा पत्नी से उम्मीद भी नहीं थी, क्योंकि उसका साहित्य से दूर-दूर तक कोई नाता नहीं था। उनके लिए इससे ज्यादा कष्ट क्या हो सकता था कि कवि महोदय की छपी रचनाओं को पढ़ने तक की इच्छाशक्ति उसमें नहीं थी।

सुपरिचित लेखक। मूलतः व्यंग्य लेखन! अनेक विधाओं में साहित्य सृजन। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में डेढ़ सौ से अधिक रचनाएँ प्रकाशित। भारत सरकार (युवा कार्यक्रम एवं खेल मंत्रालय) एन.एस.एस. क्षेत्रीय निदेशालय, लखनऊ से युवा अधिकारी के पद से सेवानिवृत्त। संप्रति स्वतंत्र लेखन।

कहते हैं, दु:ख बाँटने से हल्का हो जाता है, इसलिए इस विकट समस्या पर राय लेने के लिए वे अपने एक स्थानीय वरिष्ठ कवि मित्र के पास पहुँचे। सारी बात उन्हें बताई तो मित्र ने सुझाया—अपना शहर तो अपना है ही। यहाँ तो कुछेक लोग आपको जानते ही हैं। सुदूर से आए निमंत्रण में आप जाएँ तो यह अच्छा रहेगा, क्योंकि बाहर के लोगों से सम्मान और प्रशंसा ज्यादा मिलती है। स्थानीय लोग तो घर के साग बराबर ही मूल्यांकन करेंगे। कवि महोदय को बात में वजन दिखाई दिया, लेकिन उन्हें लगा कि जब अपने ही शहर के लोग उन्हें नहीं पहचानेंगे तो बाहर के लोगों के बीच पहचाने जाने से क्या फायदा। यहाँ सम्मानित होने का एक फायदा यह भी होगा कि उनसे ईर्ष्या करनेवाले स्थानीय लोगों को उनके वजनी होने का पता तो चलेगा और उनकी कीर्ति-पताका को फहराने का अवसर मिलेगा। बाहर जाकर प्रशंसा के बोल ज्यादा मिल जाने से कौन सा उनका कद बहुत बड़ा हो जाएगा। हाँ, एक बात उन्हें सुदूर वाला सम्मान आकर्षित कर रहा था और वह था वहाँ सम्मानित होनेवालों में कवयित्रियों की संख्या का ज्यादा होना। महिलाओं से प्रशंसा भरे बोल सुनने को अच्छे-अच्छे तरसते हैं, वहाँ यह सुलभ होगा··· आजकल तो लोग एक-दूसरे को देख-देखकर ईर्ष्या से ही जले जाते हैं।

वे ऐसे दोराहे पर खड़े थे, जहाँ से कोई भी रास्ता उन्हें मानसिक शांति नहीं दे रहा था। बेचैनी और अन्मयस्कता बढ़ती जा रही थी। कोई रोग-व्याधि होती तो हकीम वैद्य से इलाज करा लेते, लेकिन यह तो ऐसी ऊहापोह वाली समस्या थी, जिसका कोई हल नहीं सूझ रहा था। सम्मानित होने के लिए विशेष प्रकार के वस्त्र भी नहीं थे उनके पास! उन्होंने महसूस किया कि सम्मान प्राप्त करने के लिए तो कपड़ों में भी विशिष्टता दिखनी चाहिए। इसलिए बाजार जाकर साहित्यिक लुकवाले रेडीमेड कपड़े खरीद

आए, लेकिन समस्या ज्यों-की-त्यों थी—इधर जाऊँ या उधर जाऊँ! एक बार तो सोचा कि किसी एक आयोजक से तिथि आगे पीछे करने का अनुरोध करें, लेकिन फिर विचार आया कि यह तो निहायत मूर्खतापूर्ण कार्य होगा। अपने स्वार्थ के लिए इस स्तर तक इनसान को नहीं सोचना चाहिए, ऐसा मनन करते हुए उन्होंने इस विचार को तिलांजलि दे दी।

ज्यों-ज्यों सम्मान की तिथि निकट आ रही थी, उनकी बेचैनी भी बढ़ती जा रही थी। सम्मान से तीन दिन पूर्व सुदूर वाले सम्मान समारोह के आयोजक से टेलीफोन पर उन्हें सूचना प्राप्त हुई अपरिहार्य कारणों से सम्मान कार्यक्रम स्थगित किया जा रहा है। इतना सुनते ही उन्होंने राहत भरी साँस ली—चलो रात-दिन मानसिक कष्ट से मुक्ति मिली। लेकिन अगले ही पल वे सोच में डूब गए कि सम्मान समारोह की अगली तिथि तो बताई ही नहीं। उन्होंने संस्था से अगली तिथि की जानकारी के लिए कई बार संपर्क करना चाहा, लेकिन उधर टेलीफोन रिसीव ही नहीं हुआ।

नियत तिथि पर उन्हें स्थानीय सम्मान समारोह में सम्मानित किया गया। यह उनके साहित्यिक जीवन का पहला सम्मान था, इसलिए अपार प्रसन्नता के भाव उनके चेहरे पर स्पष्ट देखे जा सकते थे। सम्मान समारोह में पत्नी भी साथ थी, जो मिली हुई शॉल, माला, गुलदस्ते और सम्मान-पत्र को सहेजने में व्यस्त थी। जब लोग कवि महोदय को सम्मान की बधाई देते तो पत्नी झट मोबाइल फोन से एक फोटो क्लिक कर लेती। हाँ, जब कोई महिला उन्हें बधाई देती तो वह साइलेंट मोड में आ जाती। पत्नी का यह दोहरा व्यवहार कवि महोदय को मर्मांतक पीड़ा देता और उनकी सुकोमल भावनाओं को ठेस पहुँचाता।

सम्मान समारोह समाप्त हुआ। वे सपत्नीक घर लौट आए। सम्मान-पत्र को मढ़वाकर बैठक कक्ष में दीवार घड़ी के बगल में टाँग दिया, जिससे आगंतुक की निगाह समय देखने के लिए घड़ी के साथ सम्मान-पत्र पर भी पड़ती रहे।

दिन बीतने लगे। प्राप्त सम्मान की यादें मस्तिष्क में सँजोकर वे निश्चिंत हो गए। स्थानीय सम्मान का सुख उन्हें उतनी खुशी नहीं दे रहा था, जो दु:ख स्थगित सम्मान समारोह उन्हें रोज रोज दे रहा था। कवि महोदय को स्थगित सम्मान समारोह की याद रह-रहकर नित्यप्रति सताती। संस्था ने सम्मान समारोह की नवीन तिथि की सूचना भी नहीं दी थी, यह विषय अत्यंत पीड़ादायक था। यह एक नई प्रकार की बेचैनी थी, जो उन्हें साहित्य सृजन के लिए केंद्रित नहीं होने दे रही थी। विचार जब भी साहित्य सृजन के लिए आते, सम्मान-समारोह के स्थगन वाली बात दिलोदिमाग पर छा जाती और वे उस अप्राप्त सम्मान प्राप्ति के चिंतन में फिर से डूब जाते।

म.नं.-५५१ घ/५०६, नंदनगर,
(निकट जय प्रकाश नगर)
आलमबाग, लखनऊ-२२६००५
दूरभाष : ८३१८९२६७३८

लघुकथा

पहुँच से परे

• कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'

मणि के यहाँ पोते-पोतियों आ जन्म हुआ तो लगा, आसमान के चाँद-सितारे, जो पहुँच से दूर थे, बहुत दूर, अचानक घर के आँगन में उतर आए हैं।

उसे याद आने लगे वे लोग, जो 'अकेले' रह रहे हैं या वृद्धाश्रमों की शरण ले चुके हैं। अवश्य ही उनसे कोई चूक हुई होगी। कभी-न-कभी उनके व्यवहार से किसी को कोई चोट अवश्य पहुँची होगी।

नहीं, नहीं। मेरे साथ ऐसा कुछ नहीं होगा। ये न तो मुझसे दूर जा सकते हैं। न मैं इनसे।

छुटके-छुटकियाँ बढ़ने और समझदार होने लगे। इस कल्पना से सिहरकर मणि ने एक-एक कर पोते-पोतियों को सीने से इस तरह चिपका लिया कि कोई उन्हें छीन न ले जाए उससे।

मौसम बीतते चले गए, दृश्य परिवर्तित होना शुरू हुआ।

जिस मणि को अपने और उनके बीच सेंटीमीटर की दूरी भी असह्य थी, वे धीरे-धीरे अपने कमरों में कैद होने लगे थे। उनके बारे में अगर कुछ जानना हो, उनसे कुछ बतियाना हो तो वे नहीं, उनकी माँ सामने आती, उनके पास बचाव के कई हथियार रहते। जैसे वह वॉशरूम में है। वे सो रहे हैं या पढ़ रहे हैं। उन्हें फुर्सत कहाँ?

पर कभी ऐसी सांत्वना न मिली, 'उन्हें कह दूँगी।'

मणि को समझते देर न लगी कि माताओं ने कंगारू की तरह संतानों को अपनी झोले में सहेजना शुरू कर दिया है।

दादी से अपने बच्चों को दूर रखने के ऐसे कई विकल्प उन्होंने ढूँढ़ लिये थे। भले ही वे पढ़ाई न कर रहे हों, सो न रहे हों, लेटे-लेटे मोबाइल व ईयरफोन लगाए मग्न हों।

उसके आगे दुनिया की एक बदली हुई तसवीर थी। अब आदत डालनी होगी एकाकी रहने की। चाँद-सितारे अपनी मूल जगह लौट चुके थे। मणि की आँखों में छाई घटाओं के कारण धुँधले 'और धुँधले' उसकी पहुँच से दूर 'बहुत दूर जा चुके थे वे'।

'शिवनंदन', ५९५, वैशाली नगर (सेठीनगर)
उज्जैन-४५६०१० (म.प्र)
दूरभाष : ९४२४०१४४७७

मेरे पापा मेरी यादों में

● ऊषा निगम

जीवन के अंतिम प्रहर में न जाने क्यों अपने जन्मदाता की याद रह-रहकर आने लगी है। संभवत: गृहस्थ के दायित्वों से मुक्त यह जीवन अतीत की स्मृतियों के सघन वन में अनायास ही विचरण करने लगता है। उन यादों में सर्वप्रथम स्थान मेरे पिता का है, जिन्हें आज कागज पर उतार लेने का मन हो आया है।

उन्हें मैं पापा कहती थी। इतने वर्षों के बाद अपने जनक के विषय में लिखना सरल नहीं है। लंबा समय व्यतीत हो चुका है। यादें धुँधली पड़ गई हैं। कभी यह भी तो नहीं सोचा था कि उनके विषय में लिखना चाहूँगी, अन्यथा कुछ यादें पन्नों पर सँजोती रहती। अस्तु।

देखने में दुबले-पतले, साँवले, सरल सौम्य मेरे पिता श्री राम दुलारे गुप्त मूल रूप से शाहजहाँपुर के निवासी थे। यह वही शहजहाँपुर शहर है, जो क्रांतिकारी शहीद रामप्रसाद बिस्मिल, अशफाकउल्ला खाँ और ठाकुर रोशन सिंह की कर्मभूमि रहा था। यह मुझे बहुत बाद में ज्ञात हुआ। मैं प्राय: अपने ननिहाल जाया करती थी। तब मुझे यह नहीं ज्ञात था कि इस शहर का क्रांतिकारी आंदोलन से विशेष रिश्ता है तथा शाहजहाँपुर को सत्तावनवीं क्रांति से लेकर बाद तक के स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है।

इतना तो पता है मुझे कि सरकारी सेवा में आने से पूर्व पापा का जीवन अत्यधिक संघर्षमय रहा था। वे हाईस्कूल में थे, तभी उनके पिता, यानी मेरे दादाजी का निधन हो गया था। मेरी दादी जैसा मैंने उन्हें जाना था, पूर्णत: अशिक्षित, सीधी-सरल, व्यावहारिकता से अनभिज्ञ थीं। मुझे नहीं मालूम कि उन्होंने अपना वैधव्य जीवन एक बेटे के साथ, जो उस समय शिक्षा ग्रहण कर रहा था, कैसे बिताया था। दादी की एक बेटी भी थी, जो मेरे पापा से आयु में काफी बड़ी थीं, विवाहित थीं और संपन्न भी, संभवत: उन्हीं के सहारे यह कठिन समय व्यतीत हुआ होगा। प्रारंभिक शिक्षा शाहजहाँपुर में पूरी करने के बाद पापा ने इंटरमीडिएट के लिए कानपुर के बी.एन.एस.डी. कॉलेज में प्रवेश लिया था। कुशाग्र बुद्धि पापा को किसी सहारे की आवश्यकता नहीं हुई। एक के बाद एक सीढ़ियाँ चढ़ते गए। बी.ए. और एम.ए. इलाहाबाद विश्वविद्यालय से किया। उन दिनों ट्यूशन द्वारा अपनी आर्थिक आवश्यकताओं की पूर्ति करती रहे। रहने के लिए रिश्तेदारों की शरण ली। यह वह जमाना था, जब व्यर्थ के दिखावे के बगैर भी जिंदगी चलती रहती थी, किसी मानसिक दबाव या कुंठा से जीवन ग्रसित नहीं हुआ करता था।

सुपरिचित लेखिका। स्वतंत्रता सेनानियों पर विशेष लेखन। पत्र-पत्रिकाओं में लेख आदि निरंतर प्रकाशित। 'कानपुर : एक सिंहावलोकन' स्मारिका भी। सन् १९७०-७२ में पी.पी.एन. कॉलेज में अध्यापन कार्य किया। संप्रति लेखन में रत।

पापा सदैव प्रथम श्रेणी से उत्तीर्ण होते रहे। एम.ए. के बाद शीघ्र ही सहकारिता विभाग में इंस्पेक्टर के पद पर उनकी नियुक्ति हो गई। इस नियुक्ति से उनके जीवन को नई दिशा मिली, जीवन में ठहराव आया, आर्थिक निश्चिंतता क्या होती है यह जाना। केवल ८० रुपए मासिक वेतन से आरंभ हुई इस सरकारी नौकरी का अंत १८०० रुपए मासिक वेतन पर हुआ। यह धनराशि हमारे परिवार के लिए पर्याप्त थी। साधन सीमित थे तो आवश्यकताएँ भी सीमित थीं। किसी के बाह्य वैभव को देखकर पापा ने कभी लोभ नहीं किया। शत-प्रतिशत ईमानदारी और लगन को उन्होंने अपने जीवन का मूलमंत्र बनाया था।

जीवन भी कैसा विचित्र होता है। जो विद्यार्थी अपनी छोटी-छोटी आवश्यकताएँ भी कठिनाई से पूरी कर पाता था, अब उसे विशाल बँगलों की, कार और चपरासियों की सुविधाएँ उपलब्ध थीं। ये चपरासी तब सरकारी बँगलों के परिसर में ही रहा करते थे। बाद में दूरभाष की सुविधा भी इसमें जुड़ गई। पापा का निरंतर स्थानांतर होता रहा। गौंडा, फैजाबाद, झाँसी जैसे शहरों में उन्होंने क्लब-जीवन का भी आनंद उठाया। वहाँ भी उनकी निर्धारित सीमाएँ थीं। समय से जाना और समय से घर वापस आना। मेरी माँ उनके साथ होती थीं और प्राय: मैं भी। कभी शराब को हाथ नहीं

लगाया। बस सिगरेट का शौक था, वह भी दिन में केवल दो बार पीते थे। स्वयं अनुशासित रहे और हमें भी अनुशासित जीवन जीने की कला सिखा गए। आज की पीढ़ी के लिए तो यह सब मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

न जाने कैसा संतुलन था उनकी सोच में। आज याद करती हूँ तो हतप्रभ रह जाती हूँ। उन्होंने परिवार के प्रत्येक सदस्य को उसका अधिकार दिया, दूसरी ओर अपने कर्तव्यों की पूर्ति करते रहे। परिस्थितिवश पापा ने अपनी चाची को साथ में रख लिया था। इस प्रकार मेरी दो दादियाँ थीं। सास और बहू के मध्य टकराव होता रहता था। पापा के लिए दोनों रिश्ते बराबर थे। दोनों माँओं को पूरा सम्मान दिया और अपनी पत्नी को पूरा आदर और अधिकार प्रदान किया। मेरी दादी को मम्मी का क्लब जाना बिल्कुल नापसंद था, फिर भी पापा नियमित रूप से उन्हें क्लब ले जाते थे। वापस आने पर मम्मी को प्राय: भयंकर तांडव का सामना करना पड़ता था। अपनी दोनों संतानों के प्रति भी पापा का कुछ ऐसा ही व्यवहार था। हम दोनों भाई-बहन को उन्होंने कभी किसी कार्य के लिए रोका-टोका नहीं। हमने जहाँ तक पढ़ना चाहा, पढ़ने दिया, भविष्य में भी हमने अपने-अपने लिए जो मार्ग चुने, भले ही वे गलत हों, उन्होंने हमें रोका नहीं। परामर्श दिए लेकिन उन्हें स्वीकार करने के लिए विवश नहीं किया। हमने सदैव खुली हवा में साँस ली। पिता का कठोर शासन हमने कभी महसूस नहीं किया।

स्वावलंबी होने के उपरांत पापा का जीवन एक साफ-सुथरे लंबे राजमार्ग सा देखा मैंने। उनके जीवन में मोड़ तो अनेक आए, जो केवल मोड़ थे; समस्याओं, दुर्घटनाओं अथवा आघात जैसा वहाँ कुछ नहीं था। मम्मी पापा के बीच मधुर संबंध थे। उन्हें कभी लड़ते-झगड़ते नहीं देखा। दोनों के अपने-अपने विभाग थे। अपना-अपना पृथक् साम्राज्य था। कोई एक-दूसरे में हस्तक्षेप नहीं करता था। एक कुशल, सफल प्रशासक था तो दूसरी ओर एक कुशल गृहिणी थीं। दोनों सहृदय थे। दोनों ने अपने सीमित साधनों में भी, जितना संभव हो सका, दूसरों की मदद की। उनकी इस आदत को हमने विरासत में पाया था।

जब मैं हाई स्कूल में थी, तब मुझे ज्ञात हुआ कि कभी उन्होंने कविताएँ लिखी थीं। उन कविताओं का ९६ पृष्ठों का संग्रह 'पञ्शर' नाम से प्रकाशित हुआ था। उन दिनों हम झाँसी में थे। पापा कुछ बीमार हो गए थे। अस्वस्थता के दौरान उनकी लेखनी से पुन: कुछ कविताएँ कागज पर उतर आई थीं। मैं चकित थी। वे कविताएँ आज भी मेरे पास किसी अनमोल निधि की भाँति सुरक्षित हैं। जानती हूँ कि मेरे इस संसार से विदा लेते ही यह सब नष्ट हो जाएगा, यही जीवन का शाश्वत नियम है। कभी मैंने पापा से पूछा था कि उन्होंने अपने कविहृदय की अभिव्यक्ति पर पूर्णविराम क्यों लगा दिया था? विचित्र उत्तर था उनका, क्योंकि आज तो अनेक प्रशासक कवि हैं। पाप ने कहा था, "मुझे ऐसा प्रतीत हुआ था कि अति भावुकता और प्रशासन का ताल-मेल थोड़ा कठिन है। एक ओर कोमल अनुभूतियाँ हैं तो दूसरी ओर कठोर धरातल।" अत: उन्होंने कवि की भावुकता को छोड़ दिया था। निसंदेह वे एक कुशल प्रशासक थे, अपने विभाग में आदर के पात्र थे।

मैं जैसे-जैसे बड़ी होती गई, पापा से मेरी निकटता बढ़ती गई। पता नहीं कैसे और कब पिता-पुत्री का संबंध मित्रता में बदलता चला गया। मुझे याद है, लखनऊ के महानगर का वह घर, जिसके छोटे से लॉन में बैठकर शाम के समय मैं और पापा प्राय: बातें किया करते थे। कुछ जग बीती तो कुछ आपबीती। मम्मी अपनी महिला मित्र-मंडली में व्यस्त हो जाती थीं। उन दिनों उनकी किसी मित्र ने कहा भी था कि ये दोनों बाप-बेटी क्या बातें किया करते हैं। सचमुच आज से अट्ठावन वर्ष पूर्व यह दृश्य लोगों को विचित्र लगता होगा। उस समय से हमारे बीच संवाद का जो सिलसिला आरंभ हुआ, वह फिर कभी रुका नहीं। मैंने अपने जीवन में जो कुछ भी किया—अच्छा या बुरा, उचित-अनुचित उस सबके वे साक्षी थे। मैंने उनसे कभी कुछ नहीं छुपाया। संभवत: इसीलिए जीवन में कोई ऐसी त्रुटि नहीं हुई, जिसके लिए मुझे लज्जित होना पड़े। मुझे भी सदैव ऐसा प्रतीत होता रहा कि जिस पिता ने मुझ पर इतना विश्वास किया है, इतनी आजादी दी है मुझे, तो उसके विश्वास की लाज रखनी ही है मुझे।

गोरखपुर के सेंट ऐंड्रूज कॉलेज से इंटरमीडिएट किया। वहाँ सहशिक्षा थी। साठ छात्रों की कक्षा में मात्र छह छात्राएँ। वह आज का युग नहीं था। १९६१ की बात है। हम छात्राओं के लिए बड़ा ही असहज वातावरण था। कॉलेज में हम आजाद पंछी नहीं थीं। हमारी उड़ान की सीमाएँ थीं। लखनऊ विश्वविद्यालय से एम.ए. करने के उपरांत शोधकार्य आरंभ किया तो राष्ट्रीय अभिलेखागार में अध्ययन के लिए दिल्ली जाना पड़ा। जिस परिवार में मेरे रहने की व्यवस्था हुई थी, वह हमारे लिए अजनबी था। यह निर्णय भी जोखिम भरा था। फिर कानपुर में अध्यापन कार्य आरंभ किया। वहाँ भी किसी छात्रावास में न रहकर फ्लैट में रहने का निर्णय लिया। यह भी अतयंत कठिन निर्णय था। सन् १९७० में तो यह एक क्रांतिकारी कदम था। बस पापा के विश्वास के सहारे जीवन की अनेक कठिनाइयों को पार करती चली गई। ऐसा नहीं था, जीवन में फिसलने, बहकने के अवसर नहीं आए। बस उनका मुझपर जो विश्वास था, वही मेरा संबल बनता रहा, मुझे गिरने से बचाता रहा।

आज पापा हमारे बीच नहीं हैं, उनको गुजरे लगभग तीन दशक बीत चुके हैं। फिर भी समय-समय पर मेरे जहन में उनके विचार कौंध जाते हैं। उनके अपने जीवन के कुछ निष्कर्ष थे, जिन्हें वे मुझसे कभी-कभी साझा किया करते थे। पापा कहा करते थे कि नियमित रूप से कभी किसी की मदद मत करना। क्योंकि मदद लेनेवाला व्यक्ति

इसे अपना अधिकार समझने लगता है। उनके अपने जीवन ने ही उन्हें यह सिखाया था कि कभी किसी व्यक्ति को अपने परिवार में स्थायी रूप से शरण नहीं देनी है। किसी को शरण देने के दुष्परिणामों को मैंने अपने बचपन में अपनी आँखों के सामने से गुजरते देखा था। देखा था अपनी माँ की पीड़ा और अपमान को। फिर भी ऐसी ही एक त्रुटि हम पति-पत्नी से अनायास ही हो गई थी, जिसके दुष्परिणाम हम भी वर्षों भुगतते रहे थे। पापा ने अपने अतीत का साया अपने वर्तमान पर नहीं पड़ने दिया था। वे सदैव वर्तमान में जीते रहे थे। यहाँ मैंने भी कोई त्रुटि नहीं की। अपने 'आज' में जीती रही हूँ।

आज पापा हमारे बीच नहीं हैं, उनको गुजरे लगभग तीन दशक बीत चुके हैं। फिर भी समय-समय पर मेरे जहन में उनके विचार कौंध जाते हैं। उनके अपने जीवन के कुछ निष्कर्ष थे, जिन्हें वे मुझसे कभी-कभी साझा किया करते थे। पापा कहा करते थे कि नियमित रूप से कभी किसी की मदद मत करना। क्योंकि मदद लेनेवाला व्यक्ति इसे अपना अधिकार समझने लगता है। उनके अपने जीवन ने ही उन्हें यह सिखाया था कि कभी किसी व्यक्ति को अपने परिवार में स्थायी रूप से शरण नहीं देनी है।

वे स्वयं कभी निराश-हताश नहीं हुए, न ही मुझे निराश होने दिया। प्रत्येक व्यक्ति का जीवन अपनी-अपनी तरह की कठिनाइयों और समस्याओं से भरा होता है। मेरे साथ भी ऐसा ही था। मेरा विवाह-पूर्व का जीवन समतल धरातल जैसा था। वहाँ ऐश्वर्य नहीं था, लेकिन सभी सुविधाएँ थीं। तब जीवन ने आर्थिक संघर्ष को नहीं जाना था। उन दिनों जो भी संघर्ष रहा, उसका कारण मैं स्वयं थी। मैंने स्वयं ही सामाजिक व्यवस्था को त्यागकर स्वावलंबी बनने का मार्ग चुना था। मार्ग कठिन था, असंभव नहीं। सफलता की सीढ़ियाँ चढ़ती चली गई। बाद का जीवन अत्यधिक संघर्षमय रहा। पापा सबकुछ देखते, समझते थे। जब कभी मैं कमजोर पड़ी, उन्होंने यही कहा कि क्या कमी है तुम्हें। सबकुछ तो है तुम्हारे पास। उनके ये शब्द मुझे गिरते-गिरते सँभाल लेते थे।

पापा के जीवन को मैंने बहुत करीब से जाना था, जाना था कि वे अत्यधिक भावुक थे। उनकी भावुकता दिखाई नहीं देती थी, बस महसूस होती थी। न जाने क्यों, मैंने महसूस किया था कि ऐसे व्यक्ति के जीवन में प्रेम ने दस्तक अवश्य दी होगी। एक दिन मैंने उनसे पूछ ही लिया, "पापा, आपके जीवन में कभी कोई आया था, जिसे आपने चाहा हो, प्यार किया हो?' कुछ देर मौन रहने के उपरांत उन्होंने जो दास्ताँ बताई, उसने उस समय मुझे अत्यधिक आहत किया था। इलाहाबाद विश्वविद्यालय में प्रवेश लेने के बाद के किसी समय में वे अपने एक परिचित परिवार के घर में रहने लगे थे। परिवार समृद्ध था। उसी परिवार की एक कन्या थी, आयु में पापा से कुछ छोटी। पढ़ रही थी, पापा से जूनियर थी। उसे पापा कभी-कभी गाइड कर दिया करते थे। नहीं मालूम, कब उन दोनों में प्रेम की रसधार बह चली, तभी उनके कविहृदय ने अतीत को याद करते हुए लिखा था—

"प्रथम परिचय में हृदय के निकट इतनी आ गई तुम,
नव परिचय में पुरातन-प्रीति सी आ छा गई तुम।'

और फिर कवि ने आग्रह किया—

"धड़क रहा वह हृदय दबा लो
अपने घर में आज प्रिये,
मचल रहे थे भाव सुला दो
जिन थपकी से आज प्रिये।

यह मिलन तो होना ही नहीं था। एक निर्धन प्रेमी छात्र था, प्रेयसी थी धनी परिवार की कन्या। दोनों का अपने प्रणय-प्रसंग को समाज के सामने लाने का साहस ही नहीं हुआ। दोनों के मार्ग की दिशाएँ बदल गईं, विदा का समय आ गया—

"आज बिछड़ते चौराहे पर हम दो राही,
मिल जाएँ तो दैव, नहीं तो विलग सदा ही।"

और दोनों विलग हो गए सदा-सदा के लिए। कभी किसी को कुछ पता नहीं चला। मैं एकमात्र साक्षी थी उनकी प्रेम-कहानी की। एक ही समाज में रहते हुए कभी-कभी परस्पर भेंट होने के अवसर आ जाते थे। पापा ने उन अवसरों का कभी लाभ नहीं उठाया। जीवन में अपनी उस प्रेयसी से दोबारा नहीं मिले। अतीत को वर्तमान से जोड़ने का प्रयास नहीं किया।

वर्षों बीत जाने के बाद भी उनकी प्रेयसी के हृदय के किसी कोने में उनकी कुछ यादें शेष रह गई होंगी, तभी उन्होंने अपनी बेटी से कहा था कि वे रामदुलारे की बेटी से मिलना चाहती हैं। वे सचमुच मुझसे मिलने आईं। उनके नयनों की भाषा, उसमें छलकता हुआ स्नेह, उसमें तैरती अतीत की यादों की परछाइयाँ उस समय केवल मैं महसूस कर सकी थी, क्योंकि मैं, सिर्फ मैं ही जानती थी कि उस समय उनके हृदय में क्या चल रहा था। पापा इस दुनिया से विदा ले चुके थे। वे केवल मुझे देखने आई थीं। उन्होंने जब मुझे प्यार से अपने सीने से लगाया था, निश्चय ही उसमें उन्हें राम दुलारे के स्पर्श का अहसास हुआ होगा। मैं उन्हीं का अंश तो थी! जिस खामोशी से इस प्रेम कहानी का आरंभ हुआ था, उसी खामोशी से उसका अंत हो गया।

पाप ने सरकारी सेवा से अवकाश प्राप्ति को सहज भाव से स्वीकार किया था। उन्हें अधिकारों के त्यागने की उलझन या अवसाद नहीं था। उन्होंने शेष जीवन शांति से व्यतीत करते हुए अपनी जीवन-यात्रा पूरी की। मैंने सैकड़ों परिवारों को देखा और जाना है, लेकिन पापा जैसा संतुलित, सहृदय, विवेकपूर्ण व्यक्ति मेरे संज्ञान में नहीं आया। मेरे मित्रों की सूची बहुत लंबी नहीं थी। उसमें भी पापा जैसा मित्र कोई दूसरा नहीं मिला। पापा, आपकी यादें आज भी मुझे सँभालती हैं, सहारा देती हैं।

७४, कैंट, कानपुर-२०८००४
दूरभाष : ९७९२७३३७७७

अपने-अपने स्वार्थ लड़ रहे

नवगीत

● बसंता

मर्यादा पुरुषोत्तम राम

राम, रमापति, भुवन पति, कौशलेश दशरथ नंदन।
कण-कण में नित रमनेवाले, तुमको मेरा है वंदन।
मर्यादा पुरुषोत्तम रामजी, स्वयं धर्म के श्री विग्रह।
सीतापति, जानकी रमन प्रभु, रसना उनकी महिमा कह॥

सरसिज नयन, करुणा अयन, एक पत्नीव्रत धारी।
धर्म के संस्थापक, अजेय प्रभु, दशरथ अजिर बिहारी॥
रावण हंता, जगन्नियंता, सुखकर प्रीति प्रदाता।
राम की महिमा राम ही जानें, अखिल सृष्टि के दाता॥

राम, लखन, सीता संग प्रभुजी, किए अरण्य निवास।
माता शबरी को कृतार्थ कर, किए निशाचर नाश॥
प्रस्तर बनी अहिल्या का सम्मान पुनः लौटाए।
जंगल में निवास कर प्रभुजी, सहन किए विपदाएँ॥

रावण का संहार किए प्रभु, विभीषण को मुकुट पहनाए।
राक्षस विहीन किए धरती को, संत सुमन हर्षाए।
ऐसा कौन दयालु दाता जो सबको गले लगाए।
केवट की लौकिक सेवा ले, भवसागर पार लगाए॥

हाथों में शरचाप लिये प्रभु, मर्यादा पुरुषोत्तम राम।
कामदेव भी शरमा जाए, अखिल सृष्टि के शोभा धाम॥
कपि समूह को साथ लिये प्रभु, सागर पर सेतु निर्माण किए।
एक विनम्र गिलहरी का भी, विनम्र हो अवदान लिए॥

कण-कण में नित राम रह रहे, महिमा उनकी न्यारी।
साँस-साँस में राम-राम हैं, राम भव्य अवतारी॥
जिसने राम को विस्मृत कर, किसी अन्य को मन में लाया।
वह आश्रय विहीन हो गया, अंत समय पछताया॥

राम अलौकिक, लौकिक रूप धर, वसुंधरा पर आए।
मर्यादा के साथ प्रभु ने सबको गले लगाए॥
सत्य सनातन धर्म के विग्रह, आर्यवर्त की हैं पहचान।
मन मंदिर में बसो निरंतर, तेरा नित्य करूँ गुणगान॥

सुपरिचित कवि एवं रचनाकार। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में रचनाएँ प्रकाशित। संप्रति अंग्रेजी विभाग के प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय, कैमूर (बिहार)।

भौतिकता के चरम बिंदु पर

भौतिकता के चरम बिंदु पर,
नजरें उठा, जरा तू देख।
अपने और पराए में तो,
खिंची हुई है पतली रेख॥

इधर बज रही स्वार्थ की डफली,
उधर भी होता रौरव-रौरव शोर।
आपस में हो रही है टक्कर,
अपने में हैं आत्म-विभोर॥

कुरुक्षेत्र का युद्ध चल रहा,
उद्यत हैं देने को मात।
अपने-अपने स्वार्थ लड़ रहे,
आँक रहे अपनी औकात॥

रीते हाथ भले जाना है,
कोई नहीं किसी से कम।
सभी लड़ रहे स्वार्थ कवच ले,
रणभेरी बजती हरदम॥

यह जीवन बन गया रणांचल,
अस्त्र-शस्त्र ले सब तैयार।
अपना कौन, पराया कौन है,
सभी कर रहे अंध प्रहार॥

जीवन कानन जल ही रहा है,
कौन बुझाए इसकी आग।
जंगल के सब वृक्ष जल रहे,
सभी अलापते अपनी राग॥

सभी जल रहे धूँ-धूँ करके,
अंधकार है, और भटकन है।
कोई किसी की मदद करे क्यों?
नहीं दीखता अपनापन है॥

सरदार वल्लभभाई पटेल महाविद्यालय
भभुआ (कैमूर), बिहार-८२११०१
दूरभाष : ०९४३०५८१२४६

बाल-कहानी

आदित्य की सफलता

● रेनू सैनी

आदित्य बिस्तर में लेटा हुआ था। टेलीविजन पर इंडियन आइडल कार्यक्रम चल रहा था। फाइनल में पहुँचे हुए प्रतियोगियों को वह लेटे-लेटे देख रहा था। अचानक एक प्रतियोगी का सुर गड़बड़ हो गया और उसी गीत को गुनगुनाते हुए आदित्य ने उठने का प्रयास किया कि तभी उसकी चीख निकल गई। चीख सुनकर माता-पिता दोनों दौड़े-दौड़े उसके पास आए। उसे आराम से दोबारा लिटाया। तेज दर्द से आदित्य की आँखों में आँसू निकल आए थे। नन्हे मासूम की आँखों में दर्द के आँसू देखकर माता-पिता की आँखें भी नम हुए बिना न रह सकीं। उन्होंने कोने में आए आँसुओं को छिपाकर पोंछा और मुसकराते हुए बोले, 'हमारा बहादुर बेटा, किस बात से इतना उत्तेजित हो गया, जो बिना सोचे-समझे उठने का प्रयास कर उठा।' आदित्य बोला, 'आज इंडियन आइडल में फाइनल में पहुँचे विनय का सुर गड़बड़ हो गया था, वह बहुत अच्छा गा रहा था। उसको गड़बड़ाते देखकर मैं भूल ही गया कि मुझे ऐसे नहीं उठना है।'

दरअसल आदित्य सुरेश को बचपन से ही ओस्टियोपोरोसिस इंपरेफेक्टा नामक विकार था। यह एक आनुवंशिक विकार है, जो हड्डी के फ्रैक्चर और कोलेजन दोषों में वृद्धि का कारण बनता है। जन्म के कुछ दिनों बाद ही आदित्य का पहला फ्रैक्चर हुआ था।

आदित्य के जन्म से पहले माता-पिता दोनों की खुशी का ठिकाना न था। उसके जन्म के बाद डॉक्टरों ने जब माता-पिता को बताया कि आदित्य को ओस्टियोपोरोसिस इंपरेफेक्टा नामक विकार है तो माता-पिता दोनों भौचक्के से एक-दूसरे को देखते रहे थे।

उनके सामने सबसे बड़ी चुनौती थी आदित्य के पालन-पोषण की। दोनों ने वादा किया कि आदित्य को हर तरह की खुशी देंगे और उसे किसी भी तरह की कमी महसूस नहीं होने देंगे।

लेकिन जैसे-जैसे आदित्य बड़ा होता जा रहा था, वैसे-वैसे वह समझ गया था कि वह सामान्य बच्चों से अलग है। वह न ही सामान्य बच्चों की तरह तेजी से उछल-कूद कर पाता था, न ही खेलों को खेल पाता था। उसे मालूम था कि हल्की सी चोट या धक्का भी उसकी हड्डियों को नुकसान पहुँचा सकता है।

सुपरिचित साहित्यकार। 'दिशा देती कथाएँ' एवं 'बचपन का सफर'। हिंदी अकादमी, दिल्ली द्वारा चार बार नवोदित लेखन एवं अनेक बार आशुलेखन में पुरस्कृत, 'भारतेंदु हरिश्चंद्र पुरस्कार', राष्ट्रीय स्तर की पत्र-पत्रिकाओं, समाचार-पत्रों एवं आकाशवाणी से समय-समय पर रचनाओं का प्रकाशन व प्रसारण।

लेकिन माता-पिता के प्रेम ने उसकी शारीरिक कमी को भुलाने में बड़ी भूमिका निभाई थी। संगीत सुनते-सुनते आदित्य को संगीत का शौक लग गया था। वैसे भी बिस्तर पर लेटे-लेटे एक संगीत ही तो उसका सबसे प्रिय साथी था, जो दिन-रात उसके साथ रहता था। दिन-रात संगीत की संगति ने आदित्य को संगीतमय कर दिया था और वह भी गुनगुनाने लगा था। माता-पिता ने जब आदित्य के इस शौक को देखा तो उन्होंने उसे संगीत की विधिवत् शिक्षा दिलाने का निर्णय लिया।

माता-पिता का प्रोत्साहन और संगीत की शिक्षा ने आदित्य के सपनों को पंख लगा दिए और वह गाने लगा। कोल्लम के साईं ज्योति हाई स्कूल में पढ़ने के साथ-साथ वह समय निकालकर गीत का प्रतिदिन अभ्यास करता। इससे उसका संगीत निखरने लगा।

एक दिन उसे एक मंच पर गीत गाने का प्रस्ताव मिला। बड़े कार्यक्रम का प्रस्ताव सुनकर आदित्य के चेहरे की प्रसन्नता देखते ही बनती थी। उसके चेहरे की खुशी ने उसकी शारीरिक पीड़ा को कम कर दिया था। पहला बड़ा कार्यक्रम था, इसलिए आदित्य ने जुटकर तैयारी की। पूरी तैयारी के साथ जब उसने अपना कार्यक्रम प्रस्तुत किया तो दर्शक वाह-वाह कर उठे। कार्यक्रम की सफलता के साथ ही आदित्य की सफलता भी बढ़ी और उसे अब आए दिन मंच पर गीत गाने के प्रस्ताव मिलने लगे।

संगीत की कला आदित्य की सबसे अच्छी मित्र थी। वह लगभग ५०० से अधिक मंच पर अपने संगीत का प्रदर्शन कर चुका था। अब आदित्य का आत्मविश्वास भी बढ़ गया था। उसके कई अच्छे मित्र थे। इस कारण उसे अब अपनी शारीरिक कमी का कम अहसास होता था। ऐसा प्रतीत होता था, मानो आदित्य और उसकी शारीरिक कमी में ठन गई

हो और आदित्य ने उसे पराजित करने का निश्चय कर लिया हो।

आयु बढ़ने के साथ-साथ उसकी शारीरिक दिक्कतें भी बढ़ रही थीं। केवल १३ साल की आयु में आदित्य की कम-से-कम २० बार हड्डियाँ टूट चुकी थीं। इसी से समझा जा सकता है कि आदित्य के माता-पिता के साथ स्वयं उसको भी अपना कितना ध्यान रखना पड़ता होगा। हिलते-डुलते या चलते समय आदित्य बहुत सावधानी बरतता था।

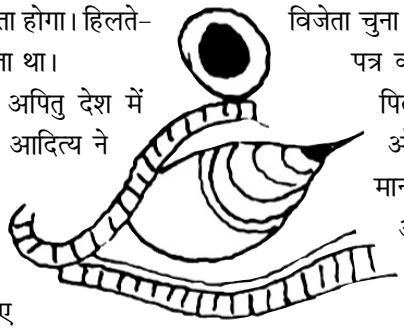

अब आदित्य केवल अपने क्षेत्र में ही नहीं अपितु देश में अपनी एक खास पहचान बना चुका था। एक दिन आदित्य ने प्रधानमंत्री बाल पुरस्कार विजेताओं के बारे में पढ़ा। उन्हें पढ़कर न जाने क्यों उसे ऐसा लगा कि एक दिन उसे भी यह पुरस्कार मिलेगा।

आखिर प्रधानमंत्री बाल पुरस्कार २०२३ के लिए उसका नामांकन कर दिया गया। आदित्य परिणाम की परवाह किए बिना अपनी मंजिल पर बढ़ रहा था। एक दिन वह संगीत का कार्यक्रम करके घर लौटा था। कार्यक्रम बेहद सफल रहा था। कार्यक्रम की सफलता की खुशी आदित्य के चेहरे पर थी, साथ ही थकान के चिह्न भी थे।

माता-पिता दोनों ने मुसकराकर उसका स्वागत किया। पिता बोले, 'आदित्य, आज तुम्हारे लिए एक बहुत बड़ी खबर है। पहले खाना खाओगे या फिर खबर सुनोगे।'

आदित्य माता-पिता के चेहरे को देखकर पता लगाने का प्रयास कर रहा था कि क्या खबर होगी? तभी माँ ने उसके सामने उसकी पसंद का खाना परोसा और कहा, 'पहले पेटपूजा, फिर कोई काम दूजा।'

आदित्य मुसकरा उठा और हाथ धोकर खाना खाने लगा। खाना खाने के बाद पिता ने एक लिफाफा उसके सामने रख दिया। उसने लिफाफा खोला तो उसकी आँखें आश्चर्य और खुशी से चौड़ी हो गईं। उसे कला एवं संस्कृति की श्रेणी में प्रधानमंत्री बाल पुरस्कार २०२३ का विजेता चुना गया था।

पत्र को पढ़ते ही आदित्य ने उसे चूम लिया और माता-पिता से बोला, 'जिसके आप जैसे माता-पिता हों, वहाँ ओस्टियोपोरोसिस इंपरेफेक्टा नामक बीमारी को भी हार माननी पड़ती है। अभी यह तो मेरी शुरुआत है। मुझे बहुत आगे जाना है।'

माता-पिता दोनों ने आदित्य को गले से लगा लिया। इस बार तीनों की आँखों में खुशी के आँसू थे। आदित्य ने अपनी हिम्मत, हौसले और संकल्प से संगीत की ओर जीत के कदम बढ़ाए थे और ओस्टियोपोरोसिस इंपरेफेक्टा का विकार उसके आगे अब बौना हो चुका था।

आदित्य की सफलता अनेक उन बच्चों के लिए एक मिसाल है, जो छोटी सी परेशानी पर अपने कदम पीछे खींच लेते हैं। आदित्य की जीत प्रेरक कहानियों को जन्म देती है और प्रत्येक हारे हुए व्यक्ति को हौसला कि हारकर बैठ गए क्यों भाई, जीत अब दूर नहीं है।

३, डी.डी.ए. फ्लैट्स
खिड़की गाँव, मालवीय नगर,
नई दिल्ली-११००१७
दूरभाष : ९९७११२५८५८

स्वाद

लघुकथा

• कोमल वाधवानी 'प्रेरणा'

इन्हें जो टॉफियाँ पसंद हैं, वे आजकल मार्केट में नहीं मिल रहीं। लगता है कंपनी बंद हो गई। विश्वास नहीं हो रहा। भला, इतनी बड़ी नामी कंपनी बंद कैसे हो सकती है? कहीं दुकानदार उल्लू तो नहीं बना रहा? नई कंपनियाँ ज्यादा कमीशन दे रही होंगी, इसलिए बहला रहा है, 'आंटीजी ये टॉफी खाएँगी तो पहले वाली भूल जाएँगी।'

इस तरह कई दुकानदारों ने उसे बहलाकर दूसरे ब्रांड की टॉफियाँ थमाईं। कुछ फ्री तो कुछ पैसों से।

'भैया, मुझे नहीं ये टॉफियाँ मेरे पति को पसंद है। उन्हें यही ब्रांड चाहिए।' अपनी यह गाथा वह सबसे शेयर कर चुकी थी।

'मम्मी, मुझे रोज बाबू को जूड़ो-कराटे की क्लास छोड़ने और लेने जाना पड़ता है। बाजार बीच में ही पड़ता है। वहाँ ढेरों कन्फेक्शनरी की दुकानें हैं। मैं देख लूँगी। किसी के पास तो पुराना स्टॉक पड़ा होगा!' आश्वस्त करके वह चली गई।

दो-चार दिन बाद वह आई और दुकानदारों से उसी ब्रांड की गिनती की कुछ बची हुई टॉफियाँ लाकर दे गई, 'मम्मी, अभी तो इनसे काम चलाओ। नया स्टॉक आने वाला है। मैं टॉफियों की बरनी लाकर दे दूँगी।'

एक महीने से ऊपर हो गया। उसने फोन करके कुछ न बताया। 'अरे निधि! क्या हुआ टॉफियों का?'

'क्या कहूँ, एक महीने से मेरा घर से निकलना ही नहीं हुआ।' कहकर वह यह जा, वह जा।

उसके जाने के बाद डिब्बे में से गुड़ की डली निकालकर पति को देते हुए मैंने कहा, 'खाना खाने के बाद इस असली टॉफी का मजा लो। बाकी स्वाद तो मैंने चख लिये।'

'शिवनंदन', ५९५, वैशाली नगर (सेठीनगर)
उज्जैन-४५६०१० (म.प्र)
दूरभाष : ९४२४०१४४७७

छत्तीसगढ़ में आदिवासी जीवन

• मृणालिका ओझा

आ हजारी प्रसाद द्विवेदी का कथन है कि 'लोक' शब्द का अर्थ जनपद या ग्राम्य नहीं है, बल्कि नगरों और ग्रामों में फैली समूची जनता है। इनके व्यावहारिक ज्ञान का आधार पोथियाँ नहीं हैं। यह लोग नगर में परिष्कृत रुचि संपन्न तथा सुसंस्कृत समझे जानेवाले लोगों की अपेक्षा अधिक सरल और अकृत्रिम जीवन के अभ्यस्त होते हैं। परिष्कृत रुचिवाले लोगों की समूची विलासिता और सुकुमारता को जीवित रखने के लिए जो भी वस्तुएँ आवश्यक होती हैं, उनको उत्पन्न करते हैं।

आदिवासियों की उत्पत्ति से संबंधित लोक अवधारणा : छत्तीसगढ़ एक आदिवासी जनजाति बहुल राज्य है। इसमें लगभग बयालीस आदिवासी जनजातियाँ हैं। नारायणपुर, दंतेवाड़ा और बीजापुर जिले में इनकी संख्या अधिक है। वर्तमान में इनकी जनसंख्या लगभग अठहत्तर लाख से अधिक मानी जाती है। ऐसा लोक विश्वास है कि युगों पूर्व 'माड़िया' गोंड़ संप्रदाय के एक प्रेमी युगल ने घर से दूर भागकर वन में अपनी गृहस्थी बसा ली थी। वही युगल, जो इनके पुरखे थे, क्योंकि इन्हें यहाँ कोई जानता नहीं था, इसीलिए वह 'अबूझमारिया' नाम की जाति से संबोधित होने लगे। वहीं 'कमार जनजाति' धमतरी, मगरलोड, छूरा, गरियाबंद, बागबाहरा आदि में अधिक है। 'बैगा जाति' के लोग प्रमुखत: बिलासपुर जिले और उसके आसपास पाए जाते हैं। ये 'ब्रह्मा' जी को अपना पूर्वज मानते हैं। अन्य जनजातियों की संख्या इनसे न्यून है। इन सबको दोरला, गोंड, कँवर, बैगा, हलबा, उरांव, भैना, कमार, कोरवा, भुजिया, धुरवा, भतरा, गोरिला, डोइला, बिंझवार, भूरिया, मारिया, भील, कोरकू, नगेसिया, कर्मसैनी आदि जातियों के रूप में जाना जाता है। कहीं-कहीं हो रहे धर्मांतरण को यदि हम न गिनें तो प्राय: आदिवासी जनजाति के लोग हिंदू ही हैं।

देवी-देवता : आदिवासी अनेक देवी-देवताओं की पूजा करते हैं। वे उन्हें बड़ी श्रद्धापूर्वक मानते हैं। प्रत्येक गाँव की सीमा में ग्राम-रक्षक देवता, जिसे 'मेडो देव' और ग्राम देवता जिसे 'ठाकुर देव' भी कहते हैं, विराजते हैं। इसी तरह खेतों की सुरक्षा के लिए वे 'भैंसासुर देवता' को मानते हैं। उसे मनाते हैं और प्रसन्न करके अपनी खेती की सुरक्षा के प्रति किसी हद तक निश्चिंत हो जाते हैं। मृत्यु से रक्षा हेतु 'मेड़ो देव' और 'भवानी चौरा' का निर्माण एवं स्थापना भी की जाती है। अधिकतर आदिवासी देवताओं को 'देव' और देवियों को 'माई' शब्द से संबोधित करते हैं। इनके देवी-देवताओं में दूल्हा देव, पाटा देव, चिथरा देव, बूढ़ा देव, कुँअर देव, आंगा देव, लोधा देव, सियान देव, घुटाल देव, सौरां देव, भइंसासुर देव, नागदेव, शंकरदेव, हनुमान देव, ठाकुर देव, धुरूवा देव, गुसई-पुसई आदि प्रमुख हैं। देवियों में सतबहिनिया माता, मावली माता, रकत मावली माई, महामाई, दंतेश्वरी माई, बूढ़ी माई, काली माई, कंकालीन माई, मरही माई, अंधिन माई, कोढिन माई, शीतला माई, रिच्छिन माई आदि विशेष रूप से पूजनीय हैं।

त्योहार : ये लोग अनेक प्रकार के त्योहार मनाते हैं। संक्षेप में इनकी गिनती की जा सकती है—मडई, देवमा, मातर, हरेली, छेर-छेरा, राउत नाचा, खमरछठ, गोंदा, बीज पुटनी, होली, रथयात्रा तथा सेला आदि इनके प्रमुख पर्व हैं। आदिवासी अपने देव-स्थल को कभी-कभी 'सरना' भी कहते हैं। वे अधिकतर अच्छी-बुरी घटनाओं को देवी-देवता से जोड़कर ही देखते हैं। वे या तो देवताओं की कृपा या फिर उनके क्रोध का ही परिणाम है, ऐसा मानते हैं। कई बार व्यक्ति-विशेष के विशिष्ट कार्य को भी वे प्रधानता देते हैं। जैसा कि ऊपर बताया गया है, अधिकांश घटनाओं को वे अपने देवी-देवताओं के क्रोध के परिणामस्वरूप ही समझते हैं। इसी प्रकार दु:ख या अवांछित परिणाम मिलता है, तो वे अपने देवी-देवताओं को प्रसन्न करने के लिए पूजा, मानता, चढ़ावा,

सुपरिचित लेखिका। 'छत्तीसगढ़ी लोक-कथाओं का अनुशीलन' विषय पर शोधकार्य। 'अग्नि पथ' (कविता-संग्रह), 'लोक और लालित्य' (शोध-ग्रंथ), 'उठ मोर पूत, तोर तिल पूरगे' (छत्तीसगढ़ी लोककथा-संग्रह) सहित अब तक नौ पुस्तकें प्रकाशित। 'भारत एक्सीलेंस', 'हिंदुस्तानी भाषा भारती समीक्षा सम्मान' सहित अन्य कई सम्मानों से अलंकृत।

बली-कर्म, उपवास, नाचना-गाना-बजाना आदि भी करते हैं। कभी-कभी बड़ी संख्या में लोगों को भोजन कराना अर्थात् भोज भी देते हैं।

इनके तीज-त्योहारों में मड़ई और मेला प्रमुख होते हैं। मड़ई अलग-अलग स्थलों का अलग-अलग होता है। इस पर विशेष रूप से अध्ययन किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त आदिवासी जनसमुदाय नृत्य, गीत का भी प्रेमी होता है। दीपावली के पहले से ही स्त्रियाँ सुआ-नाच करती हैं और पुरुष राउत-नाचा करते हैं। इनमें पत्थर पूजा, भूमिपूजा, बीज बोवनी पूजा, नवाखाई, नवरात्रि में नौ दिन का ज्योत जलाना, वृक्षों का पूजन करना और ब्याह करना, कुआँ और तालाबों की पूजा करना, पहाड़ की पूजा करना आदि का भी प्रचलन है। आदिवासी किसी भी शुभ कार्य की शुरुआत पूजा से करते हैं। उत्सव या सामूहिक समारोह में इनका प्रकृति के प्रति प्रेम देखते ही बनता है। ये पारंपरिक ढंग से अपने कुलदेवता, स्थल देवता, ग्राम देवता आदि की पूजा करते हुए मुख्य पूजन कार्य को संपन्न करते हैं। इनके देवी-देवता कभी 'छत्र' में और कभी 'डोली' आदि में भी विराजते हैं। इनके छत्र और डोली बहुत सुंदर होते हैं। यह दृश्य बहुत ही मनोरम होता है। ऐसे अवसरों पर महिलाएँ तो नृत्य करती ही हैं, पुरुष भी नाचते-गाते हैं। नृत्य के दौरान कई बार मुँह से विभिन्न प्रकार की ध्वनियाँ भी निकालते हैं।

मेला : मेले में इनकी विशेष अभिरुचि होती है, क्योंकि एकत्र होना, अर्थात् एकता इनका प्रथम गुण होता है। प्रमुख मेलों में पुन्नी मेला (अलग-अलग महीने की पूर्णिमा तिथि को होता है)। इसके सिवाय राजिम मेला, शिवरीनारायण मेला, गिरोधपुरी का मेला, डोंगरगढ़-बमलेश्वरी माई का मेला, दामाखेड़ा का मेला, खरौद मेला, दंतेवाड़ा मेला, दशहरा मेला, बेलपान मेला, मल्हार मेला, पीथमपुर मेला, खल्लारी मेला और चंडी मेला आदि प्रमुख हैं।

पर्यटन-स्थल : छत्तीसगढ़ के अनेक पर्यटन स्थलों में इनके कुछ विशेष स्थल हैं, जोकि बहुत अधिक लोकप्रिय हैं। जैसे—राजीम, डोंगरगढ़, खरौद, मल्हार, कुनकुरी, रतनपुर, शिवरीनारायण, संबलपुर, लाफागढ़, ताला गाँव, दंतेवाड़ा, गढ़धनोरा और पाली आदि। वैसे वे अपने विशेष आयोजनों, त्योहारों और मेलों आदि को छोड़कर अपने क्षेत्र से बाहर पर्यटन करना अधिक पसंद नहीं करते, किंतु आजकल शिक्षा, परिवहन की सुविधा, फिल्म आदि के प्रचार-प्रसार के कारण वे अन्यत्र आना-जाना भी सीख रहे हैं और पसंद भी करने लगे हैं।

संस्कृति : इनकी संस्कृति बहुत आदिकालीन है, जो धीरे-धीरे काफी विकसित और परिष्कृत हो गई है। वे आज भी व्यक्ति विशेष की पहचान उनके नाम की तरह उनके गाँव या शहर से उन्हें संबंधित करके करना अधिक आसान समझते हैं। जैसे—सरंगढ़हिन, दूरूगहिन, रइपुरहिन आदि। इसी तरह पुरुषों को जगदलपुरिहा, बिलासपुरिहा, खैरागढ़िया आदि नामों से विशेष रूप से पहचान देते हैं।

भोजन : इनका मूल भोजन बासी, भात, चटनी, प्याज और सब्जी-भाजी ही है। फल-फूल, कंद-मूल भी इनके भोजन का हिस्सा हैं, परंतु यह इनकी इच्छा और उपलब्धि पर निर्भर करता है। प्राय: ये लोग मांसाहारी होते हैं। इनका प्रिय पेय पदार्थ है—शराब-मदिरा, ताड़ी, सल्फी आदि। इन्हें ये किसी भी समय पीते हैं। शराब पीना और बीड़ी पीना, दोनों इन्हें पसंद है। सुख-दु:ख में भी इनमें शराब सेवन की परंपरा है। कुछ महिलाएँ भी बीड़ी पीती हैं और रात्रि में शराब का सेवन करती हैं। इसके सिवाय विभिन्न प्रकार के चिड़ियों के अंडे, गोश्त आदि इनके पसंदीदा भोजन में हैं।

आभूषण : आदिवासी आभूषण प्रिय होते हैं। ये दूसरी बात है कि श्रमपूर्ण जीवन के कारण इनके पास शृंगार का बहुत वक्त नहीं होता, परंतु महिलाएँ पैर की उँगलियों से लेकर सिर के बाल तक सजी-सँवरी और गहने पहनी हुई होती हैं। कुछ लोग 'सोना' भी पहनते हैं, परंतु अधिकतर महिलाएँ चाँदी, गिलट, शंख-सीपी, कौड़ी, फूल-पत्तियों और टहनियों आदि के गहने बनाकर स्वयं को शृंगारित रखती हैं। वे पैर में बिछिया, साँटी, तोड़ा, कटहर, कटाव, पैंजन एवं हाथ में मुंदरी, अर्थात् अँगूठी, चूड़ी, कंकनी (कंगन), बहुंटा, नागमोरी, छेंका, छकनी आदि पहनती हैं। गले में हरवा, सुता, हँसुली, मोहर, कंठा, कटाव, कौड़ी, सीप और मोती की माला आदि से शृंगार करती हैं। फूल-माला तथा घुँघरू भी पहनती हैं। वे बालों में कंघी खोंसकर रखती हैं। जूड़े में फूल-पान खोंसकर सिर में, माथे पर माला/फूल-माला सजाना भी पसंद करती हैं। आजकल थोड़ा बहुत आधुनिक शृंगार भी करने लगी हैं।

पुरुष इनकी अपेक्षा कुछ कम सजते-सँवरते हैं, परंतु वे भी पगड़ी, माला, लाठी, जानवरों के सींग, फूल-पत्ती, चिड़ियों के पंख और पशुओं की खाल आदि खोंसकर या माला बनाकर सजना-सँवरना पसंद करते हैं। वे प्राय: डंडा, तीर-धनुष, भाला और कभी-कभी त्रिशूल एवं टंगिया भी अपने साथ रखते हैं।

गोदना : छत्तीसगढ़ में आदिवासियों में 'गोदना' बहुत प्रिय शृंगार है। आजकल इसे 'टैटू' या 'रूपंकर कला' भी कहते हैं। गोदना अलंकरण की तरह शरीर के विभिन्न हिस्सों में गुदवाया जाता है। आदिवासियों की मान्यता है कि मृत्यु के बाद भी यह साथ ही जाता है। अर्थात् गोदना शरीर का ही नहीं, बल्कि आत्मा की भी स्थायी सजावट और शृंगार है। प्राय: लोग अपने पति या पत्नी या प्रेमी का नाम गोदवाते हैं। इसके सिवाय सूर्य, चंद्रमा, बेलपत्ती, त्रिशूल, त्रिकोण, फूल आदि का भी अंकन करवाते हैं। गोदना को बीमारी से बचने के लिए सुरक्षा कवच की तरह

समझा जाता है। गोदना वह कवच है, जिसे धारण करने के बाद वे काफी निर्भीक हो जाते हैं। देवार महिलाएँ गोदना गोदने में पारंगत होती हैं। अन्य आभूषण हैं—कमर में करधनी, पैरों में तोड़ा आदि।

वैवाहिक रीति रिवाज : वैवाहिक रीति-रिवाजों की शुरुआत चूल माटी से होती है। इसमें दूल्हा या दुलहन के संबंधी जीजा, मामा या फूफा आदि किसी देवी मंदिर में गाजे-बाजे के साथ जाते हैं। साथ में महिलाओं का गीत गाता हुआ समूह होता है। नेगचार की वस्तुएँ बाँस के पर्रे में रखी जाती हैं। सभी सुहागन औरतें गीत गाती हुई मंदिर तक पहुँचती हैं। मंदिर के आसपास से मिट्टी खोदकर लाई जाती है। मिट्टी खोदते वक्त भी बहुत सुंदर हास-परिहास का वातावरण होता है। वापस आने पर इसी मिट्टी से शादी-ब्याह के चूल्हे आदि को लीपा जाता है या उसमें मिलाया जाता है।

सर्वप्रथम शिव-पार्वती की स्थापना करके पूजा की जाती है, फिर कड़ाही में कुछ नैवेद्य बनाकर देवी-देवताओं को भोग लगाते हैं। इसे 'तेल-माटी' भी कहते हैं। इसके बाद हल्दी लगाना, कपड़ा रँगना, बाँस पूजा करना, मड़वा पूजा करना, सिलबट्टे की पूजा, देव तेला, मौर पूजा, नहडोरी जैसे कई संस्कार शादी के पूर्व होते हैं। इसके बाद मुख्य संस्कार संपन्न होता है।

घोटुल : बस्तर के आदिवासियों का घोटुल भी विश्वप्रसिद्ध है। संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि इसमें युवक-युवती जो ब्याह योग्य होते हैं, आपस में मिलते हैं और आपसी रजामंदी से अपने वैवाहिक संबंध तय करते हैं। वे रातभर घोटुल में रहते हैं, जहाँ नृत्य-संगीत चलता रहता है। यहाँ विवाहित स्त्री-पुरुषों का प्रवेश वर्जित होता है।

इसके अतिरिक्त और भी बहुत सी विशेष बातें आदिवासी संस्कृति में होती हैं। इसी तरह धान बोने और काटने के समय भी या फिर घर बनाने में नींव खोदने जैसे कार्यों के पहले भी ये लोग पूजा करते हैं। यह पूजा थोड़ी अलग होती है। इसमें भूमि की पूजा जरूरी होती है। इसे 'भुंई पूजा' कहते हैं। आदिवासी संस्कृति में वृक्षों, तालाबों का भी ब्याह होता है, ताकि धरती में कभी भी वृक्षों और तालाबों की कमी न हो। वृक्षों और तालाबों का भी वंश का विस्तार लगातार होता रहे। संसार में जल और जीवन की निरंतरता बनी रहे। प्रकृति सदा सुहागन के रूप में सँवरती रहे।

आदिवासी जनजातियों में चूड़ी फूटना, देहरी-दुआर में बैठना, खटिया उठना, आगी बुझाना या सिंदूर मिटाना जैसे शब्दों को अशुभ माना जाता है। अभी तक यही देखा-सुना गया है कि हर क्षेत्र का आदिवासी धरती पर जंगल, जमीन, जल, जीव-जंतु, नदी, पहाड़, झरने, गुफा-कंदरा और खेत-खलिहान की उपस्थिति सदैव बनी रहे, इसी 'शुभाकांक्षाओं' के साथ अपने सारे रीति-रिवाज, परंपरा, पूजा-पाठ, भजन-कीर्तन या टोने-टोटके ये सभी सुखद अभिप्राय के साथ ही करते हैं। आदिवासियों में जंगली जीवों से बचने की चाहत होती है। प्राकृतिक आपदाओं से मुक्ति के लिए उनमें बलि प्रथा भी जरूर है, किंतु इसके केंद्र में जीव हत्या या हिंसा जैसी कोई भावना नहीं होती, अपितु अलौकिक शक्तियों को प्रसन्न करके विश्व के कल्याण की मंगल कामना ही इनका उद्देश्य है। देवी-देवताओं पर, भूतप्रेत पर, टोना-जादू, नजर-टोटके आदि पर उनका आज भी बहुत विश्वास है। जब हम आदिवासियों के विभिन्न तीज-त्योहारों के बारे में बातें करते हैं तो बस्तर के दशहरे को भुलाया नहीं जा सकता।

वैश्विक ख्याति प्राप्त बस्तर का दशहरा : यह बस्तर के राजपरिवार एवं वनवासियों के साथ मिलकर मनाया जानेवाला विशेष पर्व है। इसका पूरा उत्सव कुल पचहत्तर दिनों का होता है, जबकि मुख्य उत्सव दस दिनों का होता है। इस पर्व के प्रथम दिन बस्तर प्रमुख जो कि पहले वहाँ के राजा हुआ करते थे, वे हाथी पर सवार होकर काछिन गुड़ी से निकलकर कल्याण की कामना करते हुए पर्व का आरंभ करते हैं। यह बहुत ही रोचक और सांस्कृतिक परंपराओं के बीच हरेली के दिन अर्थात् सावन मास की अमावस्या के दिन से प्रारंभ होता है। इसकी विशेषता यह है कि इसमें सर्वप्रथम एक नौ वर्षीया किसी कुँवारी कन्या के ऊपर कोई देवता आता है। इस कन्या को काँटेदार झूले में सुलाया जाता है। फिर उसकी पूजा आदि की जाती है। इसी बीच में यह कन्या अगर अपने गले की माला पुजारी को दे देती है तो इसका तात्पर्य यह माना जाता है कि देवी ने आदिवासियों की और प्रमुख रूप से राजा की प्रार्थना स्वीकार कर ली। इसके बाद अनेक नेगचार होते हैं। इसमें 'जोगी बैठाई' और 'रथ परिक्रमा' आदि हैं। इस त्योहार में 'तुपकी' का विशेष प्रयोग होता है। यह 'गोंचा पर्व' का सबसे आकर्षक यंत्र होता है। इसे बाँस द्वारा बनाया जाता है, जो बंदूक की तरह होता है। इस तरह विशेष रूप से दशहरा पर्व की शुरुआत बस्तर के भूतपूर्व नरेश पुरुषोत्तम देवजी के द्वारा अतीत में हुई थी, जब वे जगन्नाथपुरी से भगवान् के दर्शन करके लौटे थे तो वहाँ जगन्नाथजी की रथयात्रा से प्रेरित होकर उन्होंने बस्तर में लगभग इसी तरह से दशहरे का प्रारंभ किया था।

लोक विश्वास है और इतिहास भी है कि बस्तर के काछिन गुडी क्षेत्र में माहरा समुदाय के लोग रहते थे। उन्होंने तत्कालीन नरेश दलपतजी से पशुओं के लिए 'अभय दान' माँगा था, ताकि बार-बार शिकार करके उनका विनाश न किया जाए। राजा ने इष्ट देवी (काछिन देवी) को प्रसन्न किया। इनकी अनुमति मिलते ही हलवा समुदाय के लोग एक युवा योगी को नौ दिनों के लिए सीरासार में, जो कि एक बहुत बड़ा गड्ढा होता है, बैठा दिया जाता है। इस गड्ढे में बैठकर वह योगी

युवक नौ दिन तक उपवास करता हुआ एक ही आसन में बैठता है। इन दिनों दंतेश्वरी माता के छत्र को फूल रथ की परिक्रमा करवाई जाती है। इस छत्र को सशस्त्र सलामी भी दी जाती है। ग्रामीण आदिवासी इस रथ को खींचते हैं। इसमें मछली, कबूतर और बारह बकरों की बलि भी आधी रात को दी जाती है। इसके लिए 'सोलह काँवड़ भोग' भी बनता है। यह दंतेश्वरी मंदिर से चलकर रथ तक पहुँचाया जाता है। इस प्रकार अनेकानेक परंपराओं का निर्वहन करते हुए दसवें दिन रथ परिक्रमा करके वापस आता है।

बस्तर दशहरे में रावण का दहन नहीं होता। दशहरा के दिन सभी देवी-देवताओं की पूजा के बाद माता की पूजा करके सब को विदाई दी जाती है। यह दशहरा पर्व कुल पचहत्तर दिनों तक बहुत बड़े विधि-विधानपूर्वक चलता है। पूरे विश्व के कोने-कोने से लोग इस आदिवासी पर्व को देखने के लिए बस्तर दंतेवाड़ा आते हैं।

बस्तर की संस्कृति में कुछ अन्य विशेषताएँ भी होती हैं। यहाँ मामा और भानजा में भानजे को अधिक महत्त्व प्राप्त होता है। मामा-भानजे का पैर छूता है और प्रणाम करता है।

इसी तरह तीज के त्योहार में भी शादीशुदा कन्या का अपने मायके जाना और वहीं पर त्योहार मनाना अनिवार्य होता है। उसे मायके लाने के लिए उसका भाई, पिता या अन्य कोई संबंधी कन्या के ससुराल जाकर अनुमति लेकर उसे मायके ले आता है। तीज के उपवास के दूसरे दिन माँ के हाथ का बना भात खाना अनिवार्य होता है। इसके पूर्व जैसा कि बताया गया, आदिवासी हर तरह से प्रकृति के पुजारी और साधक होते हैं।

महादेव टोप्पो के शब्दों में, अति महत्त्वाकांक्षी और उत्साही लोगों से आदिवासियों को नुकसान हो रहा है। आजादी के बाद जयपाल सिंह मुंडा ने टिप्पणी की थी—'नेहरूजी जिन्हें विकास का मंदिर कह रहे हैं वह आनेवाले दिनों में आदिवासियों के विनाश का कारण होंगे।' सच तो यह है कि आदिवासियों को वर्तमान युग सभ्य और प्रगतिशील बनाना चाहता है, जबकि आज सर्वत्र बाजार आ घुसा है। आदमी स्वयं ही जैसे बाजार का हिस्सा बन चुका है। मुझे जेंसिता केरकट्टा की 'ईश्वर और बाजार' शीर्षक कविता की कुछ पंक्तियाँ याद आ रही हैं—

आदमी के लिए/ईश्वर तक पहुँचने का रास्ता/बाजार से होकर क्यों जाता है?

मनुष्य अपनी सभ्यता व प्रगति के साथ स्वार्थी और कुटिल होता जा रहा है। सच ही तो है, हर मंदिर या देवघर के पहले और उसके आसपास छोटे या बड़े बाजार की उपस्थिति हम सब देख ही रहे हैं। कहीं-कहीं तो बाजार मंदिर के अंदर भी घुस चुका है और अपने इष्ट या भगवान् के दर्शन के लिए मूल्य देकर टिकट भी खरीदना पड़ता है। सच में कवयित्री जेंसिता के शब्द याद आते हैं—

नई सड़कें बताती हैं
विकास के नाम पर ही
उखाड़ ली जा सकती हैं जड़ें
पेड़ और आदमी की

आदिवासियों का दु:ख है कि सभ्यता और विकास के नाम पर उनसे उनका जल, जंगल और जमीन, सभी कुछ छीना जा रहा है। लोग उन्हें सुखी करने के नाम पर धर्म के नाम पर भी बाँटने लगे हैं, जबकि आदिवासियों का मानना है कि पहाड़ों में उनके पुरखों की आत्माएँ बसती हैं, जो उनको बुरी ऊर्जा या बुरी शक्तियों से बचाती हैं। उन्हें नया जीवन, नई दिशा पुरखों से मिलती है। उनका यह भी मानना है कि बारिश, अकाल, महामारी—ये सबकुछ उनके देवी-देवताओं और पुरखों की इच्छानुसार होता है। उनका विश्वास है कि पहाड़ और पेड़ की पूजा करके आदिवासी खुश रह सकते हैं। यदि उन्होंने पहाड़, पेड़, जंगल, जल और जमीन को नुकसान पहुँचाया तो यह सबकुछ बड़ी-बड़ी विपत्तियों का कारण बन सकता है और शायद उनकी इन्हीं मान्यताओं को शहरी और आधुनिक संस्कृति ने ठुकराया है। कवि भवानी प्रसाद मिश्र के शब्दों में—

मैं असभ्य हूँ क्योंकि खुले नंगे पाँवों चलता।
मैं असभ्य हूँ क्योंकि धूल की गोदी में पलता।
मैं असभ्य हूँ क्योंकि चीरकर धरती धान उगाता।
मैं असभ्य हूँ क्योंकि ढोल पर बहुत जोर से गाता।
मैं असभ्य हूँ क्योंकि कातकर स्वयं बनाता कपड़े
मैं असभ्य हूँ कि नहीं है पैने मेरे जबड़े।

लेकिन सत्य यह है कि यही असभ्य समझे जानेवाले लोग जीवन-मूल्यों की दृष्टि से हमसे बहुत आगे हैं।

सा अ

पहाड़ी तालाब के सामने
बंजारी मंदिर के पास
मोनिका मेडिकल के बाजू
वामनराव लाखे वार्ड (६६)
कुशालपुर-४९२००१, रायपुर (छत्तीसगढ़)
दूरभाष : ७४१५०१७४००

इस अंक की चित्रकार

अनुभूति गुप्ता

नवोदित लेखिका एवं चित्रकार। हिंदी की पत्र-पत्रिकाओं में रेखाचित्र, कविता, लघुकथा आदि प्रकाशित। कविता कोश में ६० से अधिक कविताएँ संकलित। बाल-काव्य तथा कहानी-संग्रह एवं कुछ काव्य-संग्रह शीघ्र प्रकाशित। 'नारी गौरव सम्मान', 'साहित्यश्री', 'प्रतिभाशाली रचनाकार सम्मान', 'नवांकुर रत्न सम्मान' तथा 'संपादक शिरोमणि' आदि सम्मानों से समादृत।

संपर्क : १०३ कीरत नगर, निकट डी.एम. निवास
लखीमपुर खीरी-२६२७०१ (उ.प्र.)

जिंदगी

● रुक्मणी संगल

सुपरिचित लेखिका। धार्मिक, सामाजिक एवं साक्षरता गतिविधियों में सहभागिता। भारत के कोने-कोने में भ्रमण। पत्र-पत्रिकाओं में अनेक लेख, कहानियाँ एवं यात्रा-विवरण प्रकाशित।

कभी रोना है, कभी हँसना है,
कभी सहना है, कभी सहलाना है
जिंदगी समझ से परे कोई कहानी है
फिर भी आकर्षक है, रोचक है।
जितना सुलझाना चाहो,
उतना ही मानो उलझाओ।
जब मन के किसी कोने में कहीं कोई उमंग जनमती,
सब पर तुषारपात हो जाता है।
कैसी विडंबना है यह,
जब भी आशा का दामन पकड़ने हाथ आगे बढ़ाओ,
या तो हाथ छोटे पड़ जाते हैं,
या फिर दामन आगे खिसक जाता है।
कौन है ? जो यह सब करता है।
शायद नियति, शायद कोई दिव्य शक्ति।
जो हमें भ्रमित करती है,
या फिर अधिक प्रयास करने को प्रेरित करती है,
या दोनों ही सच है,
यदि हम कमजोर हैं, थके-हारे हैं, तो भ्रमित होते हैं।
यही ऐसा नहीं है, तो अधिक आत्म-विश्वास से लबरेज
हो जाते हैं, हौसले बढ़ जाते हैं,
औ, हम आगे ही आगे बढ़ते जाते हैं।
जिंदगी किसी एक बिंदु का नाम नहीं,
जिंदगी कोई एक घटना नहीं,
जिंदगी एक कहानी नहीं,
जिंदगी कोई दिल्लगी नहीं।
जिंदगी तो बस एक बंदगी है, एक इबादत है,
जहाँ हर श्वास अक्षत है।
जिंदगी जीता कौन है ? तन या मन,
उत्तर क्या है ? क्या केवल तन या क्या केवल मन,
मन भी क्या अद्‌भुत है ? जीव है वह या
फिर चेतन शक्ति ?
यह चेतन शक्ति आती कहाँ से है ?
उस दिव्य परा शक्ति से, जो अगम है,
अगोचर है, फिर भी सर्वशक्तिमान है,
सबका मान है, स्वाभिमान है।
जिंदगी एक खुशनुमा अहसास है,
जब एक नई जिंदगी, किसी की जिंदगी में आ जाती है
तो एक सुखद अहसास को जन्म देती है।
सुखद अहसास को जीते-जीते व्यक्ति,
जिंदगी के दु:ख-दर्द को सह जाता है,
काँटों की चुभन को भूल जाता है,
अपने चारों ओर खिले फूलों की शोभा निहारता है,
उसी का अहसास करता है,
जीवन के सारे पल बिता देता है,
तभी कहा जा सकता है कि जिसने जीना सीख लिया,
उसने जीवन की सार्थकता को पा लिया।
जिंदगी एक गीत है, उसे हर पल गाता चल।
जीवन एक कर्तव्य है, एक जिम्मेदारी है,
जिसका पालन करना है, निर्वहन करना ही समझदारी है
जीवन एक प्रबंधन है, अंत: व बाह्य कर्मों का।
अत: जीवन जीना भी बड़ी कला है,
जिसने वह सीख लिया, उसने जीवन का रहस्य पा लिया
जिंदगी एक पर्व है, उत्सव है, त्योहार है,
उसे उमंग व उल्लास से मनाना चाहिए।
जिंदगी पुष्प से भी कोमल, नवनीत से भी निर्मल,
स्निग्ध व मधुर है, यदि उसका मर्म समझ आ जाए।
जिसकी सोच में आतमविश्वास की महक है।
जिसके इरादों में हौसलों की मिठास है।
जिसकी नियत में सच्चाई का स्वाद है।
जिसके अंतर्मन में सर्वे भवन्तु सुखिन: की लहक है,
जिसकी प्रार्थना में निशि-वासर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की आकांक्षा है।
उसकी पूरी जिंदगी, हँसता-महकता गुलाब है।

२८-बी, प्रेमनगर, पटियाला (पंजाब)
दूरभाष : ९४१७०८८४६६

वर्ग पहेली (२०४)

अगस्त २००५ अंक से हमने '**वर्ग पहेली**' प्रारंभ की, जिसे ज्ञान-विज्ञान की अनेक पुस्तकों के लेखक **श्री विजय खंडूरी** तैयार कर रहे थे; उनके देहावसान के उपरांत अब **श्री ब्रह्मानंद खिच्ची** इसे तैयार कर रहे हैं। हमें विश्वास है, यह पाठकों को रुचिकर लगेगी; इससे उनका हिंदी ज्ञान बढ़ेगा और पूर्व की भाँति वे इसमें भाग लेकर अपना ज्ञान परखेंगे तथा पुरस्कार में रोचक पुस्तकें प्राप्त कर सकेंगे। भाग लेनेवालों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना होगा—

१. प्रविष्टियाँ छपे कूपन पर ही स्वीकार्य होंगी।
२. कितनी भी प्रविष्टियाँ भेजी जा सकती हैं।
३. प्रविष्टियाँ ३० अप्रैल, २०२३ तक हमें मिल जानी चाहिए।
४. पूर्णतया शुद्ध उत्तरवाले पत्रों में से ड्रॉ द्वारा दो विजेताओं का चयन करके उन्हें तीन सौ रुपए मूल्य की पुस्तकें पुरस्कारस्वरूप भेजी जाएँगी।
५. पुरस्कार विजेताओं के नाम-पते जून २०२३ अंक में छापे जाएँगे।
६. निर्णायक मंडल का निर्णय अंतिम तथा सर्वमान्य होगा।
७. अपने उत्तर '**वर्ग पहेली', साहित्य अमृत, ४/१९, आसफ अली रोड, नई दिल्ली-२** के पते पर भेजें।

वर्ग पहेली (२०२) का शुद्ध हल

■	१ना	२गा	न	३न	■	४आ	५ल	म
६नि	गा	ह	■	७ग	८या	बी	ता	■
■	९श	की	ल	■	द	■	१०कुं	११जी
१२मौ	न	■	■	१३यो	■	१४ग	ज	ता
ज	■	१५ज	मा	ज	मा	या	■	लो
१६आ	१७हि	स्ता	■	ना	■	■	१८स्वा	हा
१९ना	म	■	२०गा	■	२१सु	२२ना	भि	■
■	२३दा	२४री	जा	२५र	■	२६य	मा	नी
२७सिं	ह	ल		■	२८में	क	न	■

★ पुरस्कार विजेता ★

१. **श्री अयान वर्मा**
क्वा. नं. डी-१००
पो.ऑ. हिरमी, बलौदा बाजार
रायपुर (छ.ग.)
दूरभाष : ९९७७१०६७३४

२. **श्री सुनील दत्त शर्मा**
८९/१०९, शिव कॉलोनी
विनायक स्कूल के पास
तिजारा फाटक
अलवर-३०१००१ (राज.)
दूरभाष : ८९४९८८८९८७

पुरस्कार विजेताओं को हार्दिक बधाई।

वर्ग-पहेली २०२ के अन्य शुद्ध उत्तरदाता हैं—सर्वश्री रामकिशन पंवार (हनुमानगढ़), वाई.के. श्रीवास्तव (जबलपुर), रामप्रकाश राय (गोरखपुर), जयदेव सिंह, (हरिद्वार), देशराज सुथार (अजमेर), धनंजय खन्ना (मोहाली), विवेक सिंह, (गुरुग्राम), रघुपति राय (मधुबनी), सुनीता शर्मा (कोटा), विजेंद्र कौशिक (पानीपत), शशिकांत (जयपुर), सुमित राजपूत, आनंद शर्मा, सुनीता बहल, नीता गुप्ता (दिल्ली), हजारी प्रसाद (नोएडा)।

बाएँ से दाएँ—

१. धार्मिक दृष्टि से शुभ समय (४)
४. तलाश में फिरना, चूक जाना (४)
७. किसी कार्य का किसी पर अवलंबित रहना (५)
९. सीधा-सादा मनुष्य (ला.), एक पशु (२)
११. मिथिला का रामायण-कालीन राजवंश, पिता (३)
१२. तनिक, थोड़ा (२)
१३. लंपट, विलासी, उपपति (३)
१५. रेती (३)
१६. बहुत बड़ा परिवर्तन होना (मुहा.) (२,३,२)
१७. अत्याचार, जुल्म (उर्दू) (३)
१८. बनावटी व्यवहार, धोखा, छल (३)
२०. शिव, एक-एक (२)
२१. अन्य रखने का कोठा (गाँवों में) (३)
२३. नख, नाखून (२)
२४. दस अंकों वाला नाटक (५)
२६. नारियल की खोपड़ी (४)
२७. याद करना, चर्चा चलाना (२,२)

ऊपर से नीचे—

१. यूरोप महाद्वीप का एक देश (४)
२. कीचड़, पंक (देशज) (२)
३. कंपन, थरथराहट (३)
४. सौभाग्य, अभ्युदय (३)
५. कर्कश ध्वनि, घमंड, हठ (२)
६. समान नाम वाला (४)
८. काल्पनिक आनंद लेना (मुहा.) (२,१,२,२)
१०. यम का छुरा (५)
१२. स्त्री सुलभ हाव-भाव (५)
१४. ठहराव, ठिकाना (उर्दू) (३)
१५. डाकू, लुटेरा (३)
१७. ठंड या भय से काँपना (४)
१९. घुमाना-फिराना, सैर कराना (४)
२१. बहाल होने की अवस्था, पुनर्नियुक्ति (३)
२२. रटने की क्रिया, धुन (३)
२४. युक्त, भरा हुआ, शराब (२)
२५. थोड़ा अल्प (२)

वर्ग पहेली (२०३) का हल अगले अंक में।

वर्ग पहेली (२०४)

१		२	३	■	४	५		६
	■	७		८			■	
९	१०	■	११			■	१२	
१३		१४	■		■	१५		
■	१६							■
१७			■		■	१८		१९
२०		■	२१		२२	■	२३	
	■	२४				२५	■	
२६				■	२७			

प्रेषक का नाम : .....

पता : .....

.....

.....

दूरभाष : .....

पाठकों की प्रतिक्रियाएँ

'साहित्य अमृत' का फरवरी अंक यथासमय प्राप्त हुआ। पूर्व की भाँति अंक पठनीय एवं संग्रहणीय बन पड़ा है। ललित-निबंध 'अपना गाँव' प्रेरक एवं मर्मस्पर्शी है। राम, कृष्ण एवं कालिदास के भावुक संस्मरणों से विद्वान लेखक ने मातृभूमि की महत्ता को इंगित करते हुए सर्वथा अनुकरणीय तथ्य प्रस्तुत किया है। इस संदर्भ में स्वामी विवेकानंद का मातृभूमि प्रेम भी प्रासंगिक है। असम की कला व संस्कृति पर विशद विवेचना 'लोक साहित्य' स्तंभ के अंतर्गत प्रस्तुत हुई है, यद्यपि इसका नामकरण असम का लोक साहित्य दिया गया है। कहानियाँ 'मोड़', 'जाँच की औपचारिकता' एवं 'एक जरूरी सूचना' महत्त्वपूर्ण हैं। गजल के अंतर्गत विपिन जैन की बहुआयामी गजलें प्रशंसनीय हैं। 'प्राण' जी की 'रौद्रनाद' साहस-संजीवनी देनेवाली है।

—शारदानंदन, लखनऊ (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक मिला। संपादकीय से अंत तक का पूरा अंक पढ़ डाला। रामदरश मिश्र के मुक्तक और चंद्रपाल मिश्र 'गगन' की गजल ने प्रभावित किया। कहानियों में अमिता दुबे की कहानी 'चलो थोड़ा मुसकरा दो' एवं श्रीधर द्विवेदी की 'लँगोट का कच्चा' बहुत अच्छी लगीं। उसकी पंक्ति 'यह कौन सा मेरा अपना घर है। इससे पराया भी कोई घर होगा भला' पूरी कहानी पर भारी है। पत्रिका में सर्वत्र अंकों को हिंदी में लिखकर आपने हिंदी अंकों को जिंदा बचाए रखा है। आजकल के बच्चे इन अंकों को न पढ़ पाते हैं, न बोल पाते हैं।

—केदारनाथ सविता, मीरजापुर (उ.प्र.)

होली की आहट लिये 'साहित्य अमृत' का मार्च अंक प्राप्त हुआ। संपादक-मंडल को साधुवाद, जो हर बार पाठकों को विवधिता से भरपूर आलेख, कहानी, कविता का रसास्वादन करवाने के लिए साहित्य का अमृत कलश प्रस्तुत करता है। हर अंक ऐसा कुछ समेटे रहता है, जिससे पाठक प्रोत्साहित होते हैं एवं उन्हें चिंतन-मनन के लिए सामग्री मिलती है। इस अंक की संपादकीय टिप्पणी महत्त्वपूर्ण है। भाषा के रूप में कोई भी भाषा कमतर नहीं होती क्योंकि भाषा तो व्यष्टि एवं समष्टि के सरोकारों की अभिव्यक्ति होती है। हमारी नई शिक्षा नीति में मातृभाषा के महत्त्व को पुन: रेखांकित किया गया है और आशा है कि इस संबंध में राजनीति से ऊपर उठकर हर राज्य सरकार विचार करेगी।

—योगराज, खरड़ (पंजाब)

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक मिला। संपादकीय में पत्रकार अनंत विजय का सुझाव अच्छा लगा कि विश्व हिंदी सम्मेलन को आधुनिक तकनीकी माध्यम से यदि जोड़ा जाए तो युवा पीढ़ी अधिक लाभान्वित होगी। उमाशंकर चतुर्वेदीजी के 'छह के छक्के' मन भाए। भैरूंलाल गर्गजी का होली संस्मरण बहुत रोचक लगा। प्रेमपाल शर्माजी का यात्रा-संस्मरण हमेशा ही बहुत रोचक व ज्ञानवर्द्धक रहता है। वे न केवल स्थानों का वर्णन करते हैं वरन् ऐतिहासिक पृष्ठभूमि व लोकमत दोनों का समावेश करते हैं। हम लोग भी साथ-साथ मानसिक भ्रमण कर लेते हैं। श्रीधर द्विवेदी की 'लँगोट का कच्चा', 'मंदिर की देहरी' बहुत मार्मिक कहानी हैं। महादे बुधनी अपना पेट काटकर पुत्र के लिए सँजोए सपनों को ध्वस्त होते देखता है, उस मर्मांतक पीड़ा का बहुत भावपूर्ण चित्रण है। अन्य सभी कहानियाँ भी पत्रिका के स्तर को बनाए रखती हैं। लघु कथा 'रांग नंबर' आज के बदलते परिवेश का सटीक चित्रण है। रामदरश मिश्रजी के मुक्तक, संध्या यादवजी की कविताएँ, दोहे, उर्वीजी की रचनाएँ, सभी मन को प्रभावित करती हैं।

—माला श्रीवास्तव, ग्रेटर नोएडा (उ.प्र.)

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक अपनी पूरी रंगत के साथ प्राप्त हुआ। अंक की कहानियाँ एक से बढ़कर एक हैं। पर श्रीधर द्विवेदी की कहानी 'लँगोट का कच्चा' बड़ी मार्मिक और उद्वेलित करनेवाली है। रम्य रचना 'छह के छक्के' बड़ी मजेदार लगी। भैरूंलाल गर्ग का होली पर संस्मरण मन को भा गया। रामदरश मिश्र, वेदमित्र शुक्ल, संध्या यादव की कविताएँ अच्छी लगीं। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'दिल्ली तीर्थ दर्शनम्-२' पढ़कर हृदय अति प्रफुल्लित हो गया। बाल-संसार में मेरी रचना को भी स्थान मिला, आभारी हूँ। सर्वांग सुंदर अंक के लिए बहुत-बहुत बधाई।

—कुलभूषण सोनी, दिल्ली

'साहित्य अमृत' का मार्च अंक पढ़ा। पत्रिका में रचनाएँ उच्च दर्जे की होती हैं। कहानियाँ तो सभी अच्छी लगीं, पर श्रीधर द्विवेदी की कहानी 'लँगोट का कच्चा' का रचना-संसार हिये को कचोटता है। कैसी तो नियति है। आह! स्त्री की त्रासदी! बहुत अच्छी कहानी है। आलेख, होली पर भैरूंलाल गर्ग का संस्मरण, प्रेमपाल शर्मा का यात्रा संस्मरण बेहद मनोरंजक लगे। कविताएँ भी मन को छू गईं। पत्रिका अपने स्तर को बनाए हुए है।

—शिवनाथ शुक्ल, भिलाई (छ.ग.)

मार्च अंक के मुखपृष्ठ पर सफेद दीवार पर अलग-अलग रंगों के हाथ की छाप होली के रंगों की आभा बिखेर रही है, इसे आकर्षक बना रही है। अंक की सभी रचनाएँ अच्छी हैं, परंतु कुछ रचनाएँ खासा पसंद आईं। श्रीधर द्विवेदी की कहानी 'लँगोट का कच्चा' अंतरात्मा को झकझोरने वाली है। आलोक सक्सेना का व्यंग्य 'देवलोक में शानदार होलिका उत्सव' काफी आनंददायक है। भैरूँलाल गर्ग का संस्मरण 'होली पर नहीं खेली जाती होली' अच्छा लगा। प्रेमपाल शर्मा का यात्रा-संस्मरण 'दिल्ली तीर्थदर्शनम-२' में दिल्ली के विभिन्न तीर्थों के ऐतिहासिक महत्त्व का पता चल, जो इन तीर्थों के प्रति हमारी श्रद्धा को और प्रगाढ़ करता है।

—अशोक कुमार, जयपुर (राजस्थान)

साहित्य अकादेमी के अध्यक्ष व उपाध्यक्ष निर्वाचित

११ मार्च को साहित्य अकादेमी की नई कार्यकारिणी के चुनाव में हिंदी के प्रख्यात गजलकार श्री माधव कौशिक नए अध्यक्ष चुने गए। प्रसिद्ध साहित्यकार व दिल्ली विश्वविद्यालय में हिंदी की विभागाध्यक्ष प्रो. कुमुद शर्मा ने एक वोट के अंतर से उपाध्यक्ष के पद पर जीत दर्ज की। यह पहली बार है, जब साहित्य अकादेमी के उपाध्यक्ष का पद किसी महिला को मिला है। नई कार्यकारिणी का कार्यकाल पाँच साल यानी २०२७ तक रहेगा। □

सम्मान घोषित

९ मार्च को नई दिल्ली में त्रैमासिक पत्रिका 'मीडिया विमर्श' के सलाहकार संपादक प्रो. संजय द्विवेदी ने घोषणा की कि प्रतिवर्ष हिंदी की साहित्यिक पत्रकारिता को सम्मानित करने के लिए 'पं. बृजलाल द्विवेदी स्मृति अखिल भारतीय साहित्यिक पत्रकारिता सम्मान' इस वर्ष श्री राकेश शर्मा को २ अप्रैल को इंदौर में आयोजित सम्मान समारोह में दिया जाएगा। इसके अंतर्गत ग्यारह हजार रुपए, शॉल, श्रीफल, प्रतीक चिह्न और सम्मान-पत्र प्रदान किया जाता है। □

सम्मेलन संपन्न

२० फरवरी को नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा आयोजित अखिल भारतीय दलित लेखक सम्मेलन के पहले सत्र में तेलुगु के प्रख्यात लेखक श्री के. इनोक ने अध्यक्षीय भाषण दिया। बीज वक्तव्य श्री बजरंग बिहारी तिवारी ने दिया। उद्घाटन सत्र में साहित्य अकादेमी द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'गुजराती दलित कविता' का लोकार्पण हुआ। प्रथम सत्र की अध्यक्षता श्री लक्ष्मण गायकवाड़ ने की; सर्वश्री जयदीप सांरगी व मोहन परमार ने विचार व्यक्त किए। अगला सत्र कहानी-पाठ का था, जो श्री पी. शिवकामी की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। संचालन श्री अनुपम तिवारी ने किया। □

सम्मान एवं लोकार्पण कार्यक्रम संपन्न

१२ मार्च को दिल्ली के हिंदी भवन में विधि भारती परिषद् के तत्त्वावधान में एक सम्मान कार्यक्रम आयोजित किया गया, जिसकी अध्यक्षता श्री बालस्वरूप राही ने की। मुख्य अतिथि श्री प्रकाश मनु थे, विशिष्ट अतिथि थे—सर्वश्री दिविक रमेश, भैंरूलाल गर्ग, देवेंद्र मेवाड़ी, नागेश पांडेय 'संजय' एवं विकास दवे। सभी अतिथियों का शॉल ओढ़ाकर सम्मान किया गया। इस अवसर पर वरिष्ठ लेखिका डॉ. शकुंतला कालरा के व्यक्तित्व-कृतित्व पर केंद्रित 'बालवाटिका' पत्रिका के विशेषांक तथा विधि भारती परिषद् की पत्रिका 'महिला विधि भारती' का लोकार्पण हुआ। डॉ. कालरा को 'विधि भारती परिषद् सम्मान' से परिषद् की अध्यक्ष डॉ. संतोष खन्ना ने सम्मानित किया। कार्यक्रम का संचालन डॉ. संतोष खन्ना ने किया। □

'अविराम' कृति लोकार्पित

११ मार्च को मुरादाबाद की साहित्यिक संस्था 'हिंदी साहित्य सदन' के तत्त्वावधान में श्री अजय अनुपम के मुक्तक-संग्रह 'अविराम' का लोकार्पण श्री माहेश्वर तिवारी की अध्यक्षता में किया गया। मुख्य अतिथि श्री मक्खन मुरादाबादी तथा विशिष्ट अतिथि श्री के.के. गुप्ता थे। संचालन श्री योगेंद्र वर्मा व्योम ने किया। सर्वश्री जिया जमीर, राजीव प्रखर, आसिफ हुसैन ने अपने विचार व्यक्त किए। आभार सुश्री कौशल कुमारी ने व्यक्त किया। □

दो कृतियों का लोकार्पण संपन्न

विगत दिनों दिल्ली में लिटिल वर्ल्ड पब्लिकेशन से प्रकाशित गजलकार श्री विनय मिश्र की दो कृतियों 'जिंदगी आने को है' (गजल संग्रह), 'विनय मिश्र का रचनाकर्म : दृष्टि और मूल्यांकन' (संपादित) का लोकार्पण संपन्न हुआ। अध्यक्षता श्री हरेराम समीप ने की। मुख्य अतिथि प्रो. रहमान मुसब्बिर तथा विशिष्ट अतिथि सर्वश्री सुभाष वशिष्ठ व जय चक्रवर्ती थे। आभार श्रीमती कुसुमलता सिंह ने व्यक्त किया। □

'मेरे घर आना जिंदगी' पर ऑन लाइन चर्चा

१८ फरवरी को जनसरोकार मंच, टोंक के यू ट्यूब स्ट्रीम यार्ड पर श्रीमती संतोष श्रीवास्तव की आत्मकथा 'मेरे घर आना जिंदगी' पर श्री सुभाष नीरव ने चर्चा की। मुख्य अतिथि श्रीमती सुषमा मुनींद्र तथा प्रमुख वक्ता डॉ. विद्या सिंह ने अपने विचार व्यक्त किए। श्रीमती विनीता राहुरीकर ने आत्मकथा की समीक्षा की। संचालन श्रीमती मुजफ्फर सिद्दीकी ने किया। □

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों के सभागार विश्वनाथ चारिआलि में उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान एवं विश्वनाथ चारिआलि राष्ट्रभाषा प्रबोध विद्यालय परिचालना समिति के संयुक्त तत्त्वावधान में द्वि-दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन श्री प्रभुनाथ सिंह की अध्यक्षता में संपन्न हुआ, जिसमें मुख्य अतिथि श्रीमती अमिता दुबे तथा विशिष्ट अतिथि पं. पृथ्वीनाथ पांडेय थे। प्रथम सत्र डॉ. सुनील कुमार तिवारी की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय एकता का भाषाई परिप्रेक्ष्य' विषय पर सर्वश्री अनुशब्द तथा चंद्रशेखर चौबे; द्वितीय सत्र में श्री दिलीप कुमार मेधी की अध्यक्षता में 'राष्ट्रीय एकता का साहित्यिक परिप्रेक्ष्य' विषय पर सर्वश्री हरि प्रसाद लुइटेल, आलोक रंजन पांडेय, परिस्मिता बरदलै तथा नंदिता दत्त ने अपने शोधपत्रों का वाचन किया। दूसरे दिन तृतीय सत्र में 'राष्ट्रीय एकता का सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य' विषय पर प्रो. प्रमोद मीणा की अध्यक्षता में डॉ. राजीवरंजन प्रसाद तथा श्रीमती गीता वर्मा ने विचार व्यक्त किए। चतुर्थ सत्र में 'राष्ट्रीय एकता का भाषाई, साहित्यिक एवं सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य तथा पूर्वोत्तर-भारत' विषय पर डॉ. अनिता पंडा की अध्यक्षता में सर्वश्री बी.पी. फिलिप, रीता सिंह सर्जना, जय शिवानी तथा चूकी भूटिया ने अपने विचार व्यक्त किए। अंतिम दिन पं. पृथ्वीनाथ पांडेय तथा डॉ. अमिता दुबे ने सर्वश्री ऊषा साहू, राहुल मिश्रा, सैयदा आनोवारा खातून, मनीषा पाल, गायत्री कलवार, गायत्री गुप्ता, अनूप शर्मा, कविराज होमागाँजी को 'भाषा गौरव-सम्मान' से विभूषित किया। इस सत्र में श्री प्रभुनाथ सिंह की अध्यक्षता में डॉ. क्षीरदाकुमार शइकिया और डॉ. चिंतामणि शर्मा ने अपने विचार व्यक्त किए। □

साहित्य अकादेमी का साहित्योत्सव संपन्न

११ से १६ मार्च तक नई दिल्ली में साहित्य अकादेमी द्वारा प्रतिवर्ष मनाया जानेवाला साहित्योत्सव इस बार अपने सबसे बड़े रूप में आयोजित हुआ। छह दिवसीय इस उत्सव में ४०० से ज्यादा रचनाकारों ने ४० से अधिक कार्यक्रमों में लगभग ६० भाषाओं का प्रतिनिधित्व किया। साहित्योत्सव का प्रारंभ अकादेमी की वर्षभर की प्रमुख गतिविधियों की प्रदर्शनी से हुआ, जिसका उद्घाटन माननीय संस्कृति राज्य मंत्री श्री अर्जुन राम मेघवाल ने किया।

साहित्य अकादेमी पुरस्कार २०२२ वितरण समारोह ११ मार्च को कमानी सभागार में संपन्न हुआ। इसके मुख्य अतिथि श्री उपमन्यु चटर्जी थे। भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश श्री दीपक मिश्रा ने १२ मार्च को प्रतिष्ठित संवत्सर व्याख्यान दिया। अन्य कार्यक्रम में ७ लेखक सम्मिलन, १५ रचना-पाठ कार्यक्रम, १३ परिचर्चाओं के अलावा नारी चेतना, अस्मिता, कथासंधि, लेखक से भेंट और 'व्यक्ति तथा कृति' जैसे नए कार्यक्रम भी आयोजित हुए। बच्चों के लिए विशेष कार्यक्रम के साथ ही सांस्कृतिक प्रस्तुतियाँ भी उत्सव का मुख्य आकर्षण रहीं।

राष्ट्रीय संगोष्ठी का विषय 'महाकाव्यों की स्मृतियाँ, भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और राष्ट्र निर्माण' था। हिंदी के कवि, आलोचक एवं साहित्य अकादेमी के महत्तर सदस्य श्री विश्वनाथ प्रसाद तिवारी ने उद्घाटन वक्तव्य और प्रख्यात आलोचक श्री आशीष नंदी ने बीज वक्तव्य दिया। मातृभाषा के महत्त्व को ध्यान में रखते हुए मातृभाषा के महत्त्व पर, भारत में आदिवासी समुदायों के महाकाव्य, संस्कृत भाषा एवं भारतीय संस्कृति आदि पर भी परिचर्चा आयोजित की गईं। कुछ अन्य विशेष कार्यक्रमों में सर्वश्री कैलाश सत्यार्थी, सुनील कांत मुंजाल, अब्दुस समद, उषाकिरण खान तथा कजाकिस्तान से पधारे लेखक भी उपस्थित रहे और इंडो-कजाक लेखक सम्मिलन तथा विदेशों में भारतीय साहित्य पर भी बातचीत हुई। ☐

राष्ट्रीय संगोष्ठी संपन्न

विगत दिनों चेन्नई विश्वविद्यालय के हिंदी विभाग द्वारा 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी और दक्षिण भारतीय भाषाओं के साहित्य में राष्ट्रीय चेतना' विषय पर दो दिवसीय राष्ट्रीय संगोष्ठी का आयोजन डॉ. पूनम सिन्हा की अध्यक्षता में किया गया। विषय प्रवर्तन श्री बी.एल. आच्छा ने किया। सर्वश्री चिट्टि अन्नपूर्णा, हबीब अहमद एवं ए. भवानी ने विचार व्यक्त किए। संचालन श्रीमती ज्योति मेहता ने किया। ☐

डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र स्मरण सभा आयोजित

१९ मार्च को कोलकाता में रथींद्र मंच से श्री बड़ाबाजार कुमारसभा पुस्तकालय के तत्त्वावधान में वरिष्ठ साहित्यकार-चिंतक-विचारक डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र की स्मरण सभा आयोजित की गई, जिसमें सर्वश्री प्रो. गिरीश्वर मिश्र, श्रीकांत शर्मा 'बाल व्यास', विशंभर नेवर, अजयेंद्रनाथ त्रिवेदी, संजय बिन्नानी, अभिजीत सिंह, पुरुषोत्तम तिवारी, ऋषिकेश राय, तारा दूगड़, राज मिठौलिया, सत्या उपाध्याय, श्रीपर्णा तरफदार, अरुण होता, राजश्री शुक्ला, दुर्गा व्यास, अविनाश गुप्ता, रावेल पुष्प, कमलेश मिश्र तथा अनिल कुमार शुक्ल ने अपने विचार व्यक्त किए। संचालन डॉ. प्रेमशंकर त्रिपाठी ने किया। ☐

'डॉ. आंबेडकर ऐंड नेशनलिज्म' लोकार्पित

२० मार्च को कॉन्स्टीट्यूशन क्लब में श्री बसंत कुमार द्वारा संयोजित व प्रभात प्रकाशन द्वारा प्रकाशित पुस्तक 'डॉ. आंबेडकर ऐंड नेशनलिज्म' का लोकार्पण पूर्व केंद्रीय मंत्री डॉ. सत्यनारायण जटिया के करकमलों से सुलभ फाउंडेशन के संस्थापक डॉ. बिंदेश्वर पाठक, भाजपा के राष्ट्रीय महासचिव श्री दुष्यंत गौतम तथा भाजपा के अनुसूचित मोर्चा के राष्ट्रीय अध्यक्ष श्री लाल सिंह आर्य की उपस्थिति में संपन्न हुआ। इस पुस्तक में भारतरत्न बाबासाहब आंबेडकर के प्रखर राष्ट्रवाद और भारत के नवनिर्माण की संकल्पना में उनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रेखांकित की गई है। पुस्तक में प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के पाँच तथा अन्य प्रमुख सामाजिक-राजनीतिक विभूतियों के डॉ. आंबेडकर के कर्तृत्व पर प्रेरक उद्बोधन संकलित हैं। धन्यवाद यूनिवर्सिटी ऑफ सरे के डॉ. देवेंद्र सरोज ने व्यक्त किया। ☐

साहित्यिक क्षति

डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र नहीं रहे

७ मार्च को पद्मश्री से सम्मानित हिंदी के प्रख्यात साहित्यकार डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र का ९० वर्ष की आयु में निधन कोलकाता में हो गया। वे मूल रूप से बलिया जिला (उ.प्र.) के रहनेवाले थे। उनके परिवार में चार पुत्र और दो पुत्रियाँ हैं। उन्होंने अनेक महत्त्वपूर्ण पुस्तकें लिखीं, जिसमें से रामकृष्ण परमहंस के जीवन पर आत्मकथात्मक शैली में 'कल्पतरु की उत्सवलीला' पुस्तक को विशेष प्रसिद्धि मिली। उनकी गिनती हिंदी के अग्रणी ललित निबंधकार तथा हिंदी पत्रकारिता के अन्वेषक के रूप में होती थी। ☐

डॉ. वेदप्रताप वैदिक नहीं रहे

१४ मार्च को जाने-माने लेखक-पत्रकार डॉ. वेदप्रताप वैदिक का निधन हो गया। उनका जन्म ३० दिसंबर, १९४४ को इंदौर (म.प्र.) में हुआ था। वे पत्रकारिता जगत् का जाना-माना चेहरा रहे। उन्होंने अपनी पी-एच.डी. के शोधकार्य के दौरान न्यूयॉर्क की कोलंबिया यूनिवर्सिटी, मॉस्को के 'इंस्तीतूते नरोदोव आजी', लंदन के 'स्कूल ऑफ ओरियंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज' तथा अफगानिस्तान के काबुल विश्वविद्यालय में अध्ययन और शोध किया। उन्होंने करीब दस वर्षों तक पीटीआई-भाषा (हिंदी समाचार समिति) के संस्थापक-संपादक के तौर पर दायित्व सँभाला। इससे पहले वे 'नवभारत टाइम्स' के संपादक (विचार) रहे। उनके विचारपूर्ण लेख नियमित रूप से पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित होते रहे। उन्होंने अनेक पुस्तकें लिखीं। राष्ट्रीय व अंतरराष्ट्रीय स्तर पर वे व्याख्यान के लिए आमंत्रित किए जाते रहे और अनेक प्रतिष्ठित सम्मानों से अलंकृत हुए। वे कई न्यासों, संस्थाओं और संगठनों में सक्रिय रहे। वे भारतीय भाषा सम्मेलन एवं भारतीय विदेश नीति परिषद् के अध्यक्ष थे। ☐

साहित्य अमृत परिवार की ओर से
दिवंगत आत्मा को भावभीनी श्रद्धांजलि।